ओं

अथ

श्रीरामगीता

अध्यात्म रामायण उत्तरकाण्ड
सम्बन्धि
मूल अन्वय अक्षरार्थ भावार्थ सहित
सरल हिन्दी भाषा में
पञ्चोली यमुनाशंकर नागर ब्राह्मण [illegible] नगर
निवासी ने
श्री पण्डित राज [illegible] बैकुण्ठनाथजी की सहायता से
अनुवाद कर प्रकाशित किया

जिसको

श्रीमान् परम धार्मिक सकल गुण निधान प्रकाशवान् श्री
मुन्शी नवलकिशोर जी साहब ने सर्वलोक हितार्थ
कृपा करके अपने लखनऊपुरी के महायन्त्रालय
में मुद्रित कराय लोक में प्रकाशित किया
सितम्बर सन् १८८३ ई०

॥ श्रीरामगीता ॥

॥ अध्यात्म रामायण उत्तरकाण्ड ॥

॥ सम्बन्धि ॥

॥ मूल अन्वय अक्षरार्थ भावार्थ सहित ॥

॥ सरल हिन्दी भाषामें ॥

॥ पंचोली यमुनाशंकर नागर ब्राह्मण ॥

॥ कोलारव्य नगर निवासीने ॥

॥ श्रीपंडितराज पौराणिक वैकुंठनाथजीकी सहायता

॥ से ॥

॥ अनुवादकर प्रकाशितकिया ॥

॥ जिसको ॥

॥ श्रीमान् परमधार्मिक शुभगुणनिधान प्रकाश ॥
॥ वान् श्रीमुन्शी नवलकिशोरजी साहबने सर्वलोक
॥ हितार्थ कृपाकरके अपने लक्ष्मणपुरीके मध्य ॥
॥ यन्त्रालयमें मुद्रितकराय लोकमें प्रकाशितकिया

आगस्तसन् १८८३ ई०
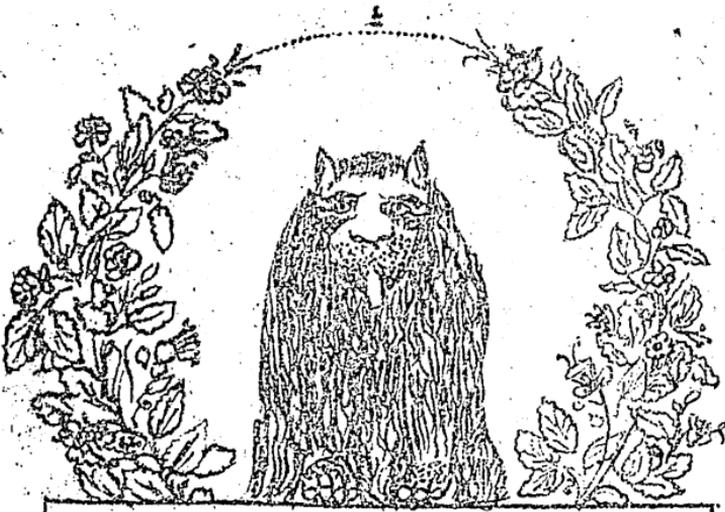
॥ तावद्गर्जन्ति शास्त्राणि ॥
॥ जम्बुका विपिने यथा ॥
॥ न गर्जन्ति महा शक्ति ॥
॥ यावद्वेदान्त केसरी ॥ १ ॥
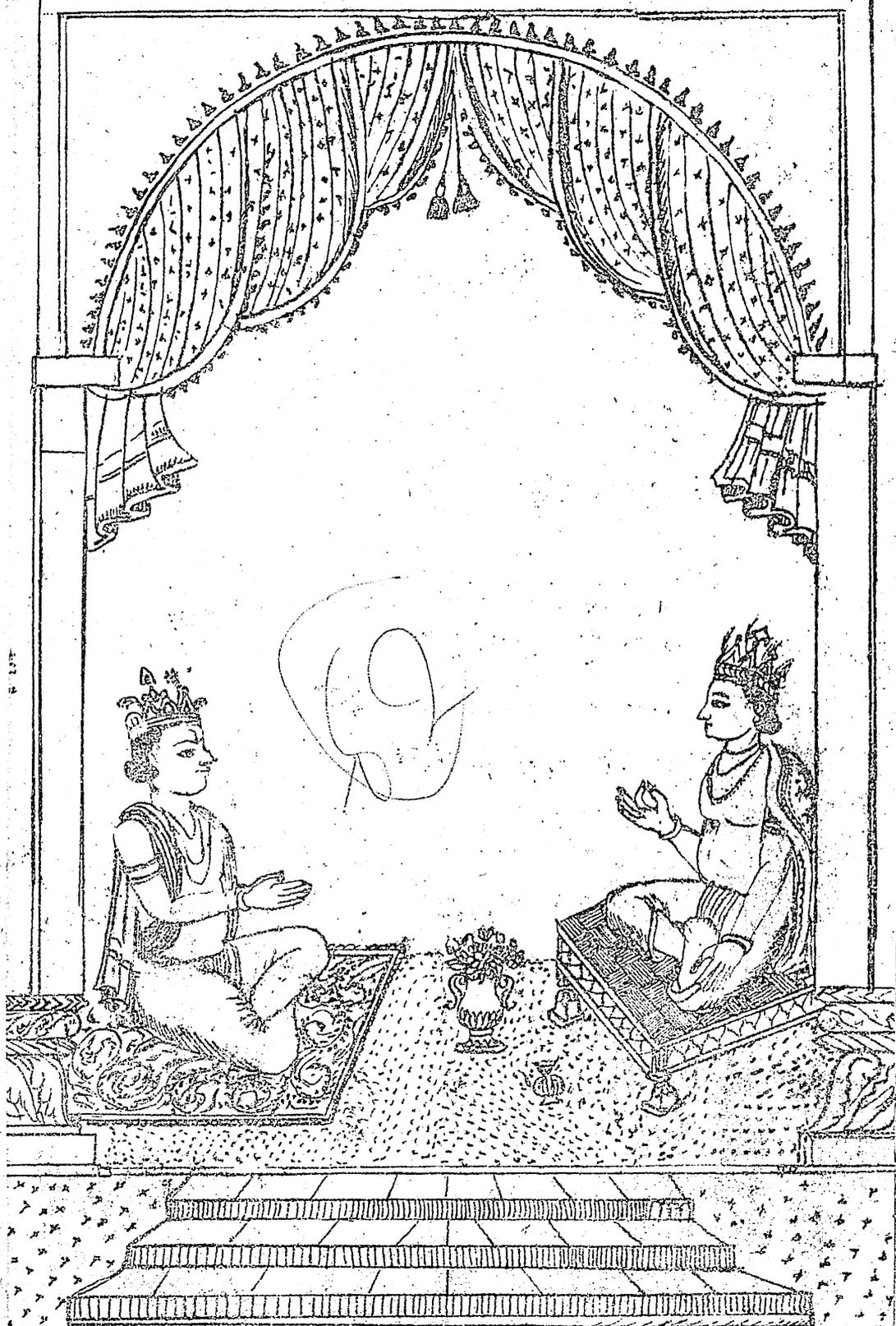
॥ परमात्मनेनमः ॥

॥ श्रीसीतारामचंद्रोजयति ॥

॥ विज्ञापन ॥

॥ सर्व सनातनीय सत्यधर्मावलम्बी सुज्ञ ॥
॥ सज्जन विवेकविचारशील आस्तिकपाठक ॥
॥ जनोंको विदित ॥
॥ हो ॥

॥ समयविचार ॥

॥ इस समय प्रायः मनुष्य व्यावहारिकविद्यामेंश्रम विशेषकरतेहैं तिसकारण परमार्थविद्यासे कि जिसका फल मनुष्यशरीरमेंही होताहै रहितहुये अपने२ वास्तविक स्वरूपको, जो कि ब्रह्मसे अभिन्नहै, ज्ञानसे२ शून्य केवल देहादि अनात्माके लालनपालनपरायण देहात्मवादी होतेहैं अरु विषयसुखकोंही परमपुरुषार्थमानके यथेष्टाचरणकरते सत्शास्त्रोंमें विश्वास नहीं रखते अरु तैसेही उनकी सहायताकेअर्थ इस समयकी राज्यविद्या और नवीन२ आचार्य भी प्रकट

है एतदर्थ उनकी प्रज्ञा सूक्ष्मविचारशक्तिहीन केवल
कुतर्कको ही आश्रयकरतीहै सो यहसर्व युगराज राज
महाराजका विशेष प्रभावहै सो अस्तु । परन्तु मनुष्य
शरीरवान्को उचितहै कि "ब्रह्मविद्यां सर्वविद्याप्रति-
ष्ठां" ब्रह्मविद्या जो कि सर्वविद्याका आश्रयभूत परा
विद्याहै तिसका भी श्रवण मनन निदिध्यासन रूप आ
श्रयकरे क्योंकि यहजो सुखमुख महादुःखरूप पंच
विषयात्मक प्रपंचहै तिसकी अशेष, समूल, निवृत्ति
पूर्वक अपनेआप आनन्दघन अजर अमर अभय
अक्रिय चैतन्यआत्माके अपरोक्ष अनुभवसे परा-
शान्तिहोतीहै और वेद शास्त्र स्मृति इतिहास पुराण
आदिकोंमें मोक्षकामी मुमुक्षुकेअर्थ यही अभेद
ब्रह्मविद्या ही प्रकाशितहै ताते "नान्यःपन्था विमुक्तये"
ब्रह्मविद्याविना वारंवार जन्ममरणरूप महादुःखकी
निवृत्तिनहीं और जो सर्वयोनियोंमें उत्तम सर्वजीवों
काराजा मनुष्यशरीर, जोकि सर्वशरीरोंकीअपेक्षा
विवेकादिगुणसम्पन्नहै, सो प्राप्तहोतेसंते भी जो अप
नेआपको यथार्थज्ञानसे जन्मादिमहादुःखोंसे न छो-
ड़ाया तो अन्य पशुआदिकोंसे मनुष्यका कुछभेद न
रहा । ताते पूर्वले अनेक शुभकर्मोंका फल जो देवता
ओंको भी दुर्लभ विवेकादि शुभगुण और इन्द्रिया-
दि अवयव जाति कुल बल वीर्य सम्पन्न मनुष्यजन्म
तिसको विषयादिबाह्यप्रवृत्तिमें खर्चकरके आप

सदा नानाप्रकारकी योनियोंमें शरीरधारणार्थ प्रवेश-
करना । तथाच "योनिमन्ये प्रपद्यन्ते शरीरत्वाय देहिनः"
सुख,दुःखभोगना और आत्महत्यारे बनना उचित न-
हीं आगे जो इच्छा ॥

* ॥ लब्ध्वा कथंचिन्नरजन्म दुर्लभं ॥ *
* ॥ तत्रापि पुंस्त्वं श्रुतिपारदर्शनम् ॥ *
* ॥ यस्त्वात्ममुक्तौ न यतेत मूढधीः ॥ *
* ॥ स ह्यात्महा स्वं विनिहन्त्यसद्ग्रहात् ॥ *
* ॥ इति ॥ *

---

* ॥ नव सुतानी ॥ *

हे सुज्ञ पाठकजनो! श्रुतिके प्रमाणसे यह मनुष्य
जन्म पूर्वले पुण्यपाप दोनोंके मिश्रितसम्बन्धसे हो-
ताहै । तथाच "उभाभ्यामेव मनुष्यलोकम्" प्र० उ० के
तृतीयप्रश्नकी ७मी श्रुतिमें । तहां जब पूर्वले पाप २
कर्म अपनाफलदेनेको सन्मुखहोतेहैं तब मनुष्यकी
प्रज्ञा अशुभाचरणपरायण होतीहै और जब पूर्वले
पुण्यकर्म अपनाफलदेनेको सन्मुखहोतेहैं तब मनु-
ष्यकी प्रज्ञा शुभाचरणपरायण होतीहै एतदर्थ सर्व-
प्राणी अपने ही किये कर्मोंके वशभये शुभाशुभ-
चेष्टाकरतेहैं यही इनकी परतन्त्रताहै परन्तु जिसको
न जानके ईश्वरपरदोषरखतेहैं कि जैसा हमसे ई-
श्वर कर्मकरावताहै तैसा ही हम करतेहैं यह नहीं

जानते जो ईश्वर समदृष्टि है तात्पर्य न किसीको नेष्ट२
कर्ममें न किसीको श्रेष्ठ कार्य्यमें प्रेरताहै, वो जीवोंके
कर्म्मानुसार फलदेताहै ताते सर्वको शुभाशुभमें प्रेर-
क और दुःखसुखको दाता पूर्वले कर्म्माभ्यासही हैं।
तथाच "तौ होत्क्रम्य मन्त्रयांचक्राते तौ ह यदूचतुः
कर्म हैव तदूचतुरथ यत्प्रशशंसतुः कर्म हैव तत्प्र-
शशंसतुः पुण्यो वै पुण्येन कर्म्मणा भवति पापः पा-
पेनेति"। वृ० उ० के ५ में अ० के द्वितीय ब्रा० के १३ में मंत्र
विषे। तथाच "योनिमन्ये प्रपद्यन्ते शरीरत्वाय देहिनः
स्थाणुमन्येनुसंयन्ति यथाकर्म यथाश्रुतम्"। कठ० उ०
की पंचमवल्लीकी ७ मी श्रुतिमें। यह अनुभव स्वप्नके
दृष्टान्तसे सर्वको प्रत्यक्ष है जिसका विचारकरनायोग्य
है विनाविचारे वृथा ईश्वरमें दोषारोपकरना योग्यन-
हीं तात्पर्य सर्वमें विचार ही मुख्य है। सोई कर्तव्य है॥

यह सर्व कहनेका अभिप्राय यह है कि मेरे पूर्व-
ले कर्म्मोंने जो कि अपने स्वरूपज्ञानके अज्ञानकरके
अनादिकालसे होतेआये हैं संचितहोय श्रीविश्वनाथपु-
रीमें नागरब्राह्मणवंशमें पंचोली युगलरामजी [जुगल-
रामजी] श्रीलक्ष्मोपासककी ज्योति नाम्नी स्त्री स्वमा-
ताके गर्भसे इसलोकमें इस अन्नमयकोषाद्वारा सूक्ष्
सूक्ष्मविग्रहको सम्वत् १८८६ में प्रकटकिया अरु
धर्मात्मा मातापिताद्वारा इसशरीरका लालन पालन
कराया, अरु जब इसशरीरको किशोरावस्था प्राप्त

प्राप्तभयी तब पूर्वले अशुभकर्मोंने अपनाफल प्रक
टदेखाया कि उससमय ऐसानिषिद्धकर्म कोई विरला
ही होगा कि जो इस संघाताभिमानी मुझसे न बनाहो
परन्तु उस अशुभाचरणके अन्तर्गत प्राक्तन शुभ-
कर्म भी किञ्चित् २ अपना प्रभाव देखावते रहे कि
प्रथम ईश्वरकथा भजनादिकोंमें रुचि, दूसरे जो सर्व
से श्रेष्ठ कर्म उपासनाके ज्ञाता परमब्रह्मनिष्ठ महात्मा
योगेश्वर भगवान् स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वतीजी गुरु
का, जो कि पूर्वाश्रममें स्वजातीय द्विवेदी श्रीरामेश्वर
जी नामसे विख्यातथे, सत्संग तथा उनके वा अन्य
साधुमहात्माओंके उपदेशात्मक वचनामृत कर्णपुट
से पान भी होतारहा, तिस अवस्थामें इसशरीरकास
ग्लसम्बन्ध पूर्वके संस्कारवश कोलाख्यनगरके निवा-
सी धर्मात्मा धनपात्र याज्ञिक अम्बाशंकरजी नागर
ब्राह्मण केयहांहिवार भया अरु तिसके कुछ कालान्तर
से सम्वत् १९११में अपनी निर्धनता अरु अन्नोदकके
वश इस कोलाख्यनगरमें निवास भी प्राप्त भया अ-
रु तदनन्तर जीविका व्यवहार भी किंचित् २ होनेलगा
अरु पूर्वले अशुभकर्म भी अपनाफलभोगाय कुछ२
निवृत्तहोनेलगे अरु शुभकर्म अपनाफलदेनेकोउदित
भये अरु सत्संगके संस्कार भी जागिउठाये उन्होंने
इस चित्तवृत्तिको, जो सर्वकाल बाह्यविषयप्रवाहमें
तृणवत् भ्रमतीरही, किंचित् बाह्यसे हटाय अध्यात्म

विद्याके जो कि मोक्षसाधकहै उपनिषदादि ग्रन्थोंके २ अवलोकन विचारविषे श्रद्धासहित प्रवृत्तकिया अरु तिसकी सिद्धता भी होनेलगी, परंतु उसकों वो ही जानताहै कि जिसकों आत्मसाक्षात्कार अनुभवभयाहै। "तस्मा श्चर्यदशानांनातादृशाएवजानते"। तिसके प्रभाव अरु २ श्रीगुरु महात्माओंकी कृपासे अब अपनेआप निराकार निर्विकार असंग चैतन्यघनस्वरूपकों साक्षात् २ "सोहमस्मि" भावसे अनुभवकर अनात्मोंके धर्म कर्म संग सम्बन्ध रहित परमानन्दमय जैसा अनादिसेहौं तैसा ही भयाहौं। अरु जन्म मरण क्षुधापिपासा शोकमोह यहषट्ऊर्मी अरु लोक वित्त पुत्र यह तीन ईषणा तिनसर्वसे रहितभया यह जिनके २ धर्महैं तिनहीके विषे साक्षीभया देखता हौं परंतु साक्ष्य साक्षित्वभाव भी स्वप्नसदृशवत् भासआयेहैं वास्तवमें नहीं अहो महान् आश्चर्यहै कि जो मैं अपनेकों जन्म मरण क्षुधापिपासा शोकमोह यह देह प्राण मन के धर्मकरसंयुक्त पापी पुण्यी नारकी स्वर्गी दुःखी सुखी आदि मानताथा अब सोई मैं इस अध्यात्म २ विद्याके विचार अरु सत्संग अरु श्रीगुरुकृपा से सर्व अनात्मधर्मसे रहित अजर अमर अक्रिय असंग अद्वैत अविनाशी अवाच्य अपने आप ब्रह्मानन्दपदकों कंठगत मणिवत् पाय निर्भयभयाहौं। अरु व्यवहारदशामें जैसाकुछ शरीरादि संघातका

अवशेष प्रारब्धहै तिसकेअनुसार संघातसाथ मिल्या
भया शुभाशुभका कर्त्ता दुःखसुखादिकोंका भोक्ता
भासताहै सो अविचारित भासताहै वास्तवमें वि-
चारसे देखियेतो मेरे अनाभास स्वयंप्रकाश निर्वि-
कार आनन्दघनस्वरूपविषे संचितादिकर्म अरु ति
नके फल भोग्य भोक्ता आदि कुछ नहीं मैंतो सर्व-
दा सर्वका प्रकाशक साक्षी ज्योंका त्यों हों। तथाच
त्रिषु धामसु यद्भोग्यं भोक्ता भोगश्च यद्भवेत् तेभ्यो
विलक्षणः साक्षी चिन्मात्रोहं सदाशिवः। कैवल्य
उपनिषद्विषे ॥

अब इन शरीरादिकोंके व्यावहार होनसमें भी
मैं अव्यवहारी ही हों परन्तु व्यवहारसत्ताकीरीतिसे
अब जो समय व्यतीत होताहै सो अध्यात्मविद्याके
विचारयुक्तही होताहै जो कि पूर्वसे संस्कृतविद्याके
संस्कारनहीं तथापि अध्यात्मविद्याके जे सुगम उप
निषदादि संस्कृत अरु भाषाके ग्रंथहैं तिनका विचा
र श्रीगुरुकृपासे होता ही है। अरु अब अपनेआप
आत्माकी ब्रह्मकेसाथ अभेदता विषे संशयकुछनहीं
तथाच। "अयमात्माब्रह्म" "नातःपरमस्ती", तस्मात्,
"अहंब्रह्मास्मि" "सयोह वै तत्परमंब्रह्मवेद ब्रह्मैवभवति"
अरु अब जोकुछ आत्मविचार चर्चा लेख होताहै
सो केवल चिद्विलासमात्रहीहै विशेषप्रयोजनकुछ
नहीं तिस चिद्विलासान्तरही ईशावास्य अरु केन

इन दो उपनिषदोंकी टीका,पदान्वय अक्षरार्थ भावा
र्थ सहित सरल मध्यदेशी भाषामें विद्वान् पंडितों
की सहायतासे कियाहै तिसको प्रथम श्रीठकुरानी
महताबकुमरि रहीस कोटिला परगनह फ़िरोजाबाद
जिलय आगराने लोकोपकारार्थ मुद्रितकराय प्रका
शितकिया । अरु अब पुनः उनको धर्मात्मा श्रीमान्
मुन्शी नवलकिशोरजी साहबने अपने लक्ष्मणपुरि
[लखनउ] के महायन्त्रालयमें मुद्रितकराय प्रकाशि
त कियाहै । अरु एक अवतारसिद्धि नाम ग्रंथ , जोई
श्वरके अवतार प्रतिपादन विषयमेंहै तिसको अरु
इस ☞ रामगीताकी टीकाको भी उक्त महाशयने मु
द्रितकराय प्रकाशित कियाहै । अरु औरभी जो ग्रंथ
कुछलिखनेरहगयेहैं सो भी अब शीघ्र पूर्णहोने से
आशा रखतेहैं उनको भी उक्त महाशय मुद्रितकरा
य प्रकाशितकरेंगे ॥ अस्तु ॥ इति स्ववृत्तान्त ॥

※ ॥ विनय ॥ ※

※ ॥ अब श्रेष्ठ सुत छोटे बड़े सर्व पाठकजनोंसे ※
※ मेरी यह विनयहै कि इस ☞ रामगीताकी ※
※ टीकामें जोकुछ शुद्धाशुद्धवा लेखदोषहोय सो ※
※ सुधारलेना अरु मुझको अपना अनुचरजान ※
※ अपराधक्षमाकरना अरु इसग्रंथकोंकृपाक ※
※ र आद्योपान्त अवलोकनकरना आगे जोइच्छा ※

॥ अवतरणिका ॥

अध्यात्मविद्या जो मोक्षसाधक साक्षात् अपरोक्ष ब्रह्मबोधक शास्त्र है तिसके उपनिषद् ब्रह्मसूत्रादि बड़े छोटे अनेक ग्रंथ है सो सर्व ही श्रुतिसमन्वित होनेसे श्रेष्ठ ही हैं तिन सर्वमें एक ब्रह्मांडपुराणान्तर्गत अध्यात्म रामायणके उत्तरकांडसम्बन्धि रामगीतानामा यह ब्रह्मविद्या अतिउत्तम है इसमें जो श्रीरामचन्द्र परमात्माने अपने प्रिय भ्राता मुमुक्षु लक्ष्मणजीकों मोक्षार्थ अध्यात्मविद्या उपदेश कियाहै अरु सोई रामचंद्रकरके प्रकाशित आत्मविद्या श्रीसदाशिवजीने अपनी प्रिया श्रीपार्वतीजीसे कही है तिसविषे ज्ञानोत्पत्तिके बहिरंग अंतरंग साधन अरु आत्मविचारकी रीति अरु प्रणवोपासना बहुत श्रेष्ठतासे वर्णन कियाहै । अरु इस रामगीताके सर्व ६२ ही श्लोक हैं परन्तु तिनविषे पदोंका लालित्य अरु अर्थकी गूढ स्पष्टता श्रोताजनोंको आल्हादकारी है अरु तिसकी संस्कृत अरु भाषामें टीका भीहै परन्तु भाषाटीका ऐसी कोई नहीं कि जिससे मन्दअधिकारीकों संशयनिवृत्तिपूर्वक यथार्थबोध होय ताते मैं [बुद्धिविशिष्ट] ने अपनी अल्पबुद्ध्यानुसार उपनिषदादि संस्कृत अरु भाषाके ग्रंथोंके विचार अरु विद्वान् पंडितोंकी सहायता अरु श्रीगुरुकृपा अरु बुद्धिउपहित ईश्वरकी सत्तासे मूलप

पदच्छेद पदान्वय अक्षरार्थ भावार्थ इन चारोंक्रमों सहित गुरुशिष्यके संवादद्वारा यह ☞ अनुवाद कियाहै अलम् ॥

※ ॥ सूचना ॥ ※

॥ १ ॥ प्रथम मुद्राक्षरोंमें मूलश्लोक तिनके ऊपर पदच्छेदकीरेखा अरु अन्वयांक ॥

॥ २ ॥ मूलके नीचे अन्वयक्रमसे मूलके पद १ तिनके ऊपर क्रमसे अन्वयांक। १ २ ३

॥ ३ ॥ अन्वयपदके नीचे अन्वयपदानुसार भाषामें अक्षरार्थ तिसकेऊपर क्रमसे पदांक १ २ ३ ४ ५ ६ ७

[ ] इस चिन्हान्तरमें अन्वय अरु अक्षरार्थमें सम्बन्धार्थ शेष विशेषके पद । अरु भावार्थमें किसी२ पदोंका पर्याय ॥

" " इसचिन्हान्तरमें श्रुतिआदिकोंकेप्रमाण ॥

, , इसचिन्हान्तरमें परिभाषा दृष्टान्तादि ॥

॥ इसक्रमसे यह ☞ भाषानुवाद भयाहै सो

※ ॥ अस्तु ॥ ※

* ॥ अथ ॥ *

* ॥ मंगलाचरणम् ॥ *

* ॥ ॐ ॥ *

* ॥ परमात्मने ॥ *

* ॥ नमः ॥ *

॥ ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ॥
॥ पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥ ॐ ॥
॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥ ॐ ॥
॥ ॐ शन्नो मित्रः शं वरुणः शन्नो भवत्वर्यमा
॥ शन्न इन्द्रो बृहस्पतिः शन्नो विष्णुरुरुक्रमः ॥
॥ नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मा
॥ सि त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि ऋतं वदि
॥ ष्यामि सत्यं वदिष्यामि तन्मामवतु तद्वक्तार
॥ मवतु अवतु माम् अवतु वक्तारम् ॥ ॐ ॥
॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥ ॐ ॥

॥ ॐ रमन्ते योगिनो यस्मिन्नित्यानन्दे ॥
॥ चिदात्मनि इति रामपदेनासौ परंब्रह्माभि ॥
॥ धीयते ॥ इति रामतापिनी विधे ॥

॥ ॐ रामत्वं परमात्मासि सच्चिदानन्द ।
॥ विग्रहः । इदानीं त्वां रघुश्रेष्ठ प्रणमामि ॥

* ॥ मुहुर्मुहुः ॥ *

॥ ॐ अचिन्त्यमव्यक्तमनन्तरूपं शिवंप्रशान्त
॥ममृतं ब्रह्मयोनिं । तथादिमध्यान्तविहीनमेकं
॥विभुंचिदानन्दमरूपमद्भुतम् ॥ उमासहायं
॥परमेश्वरंप्रभुं त्रिलोचनं नीलकंठं प्रशान्तम्
॥ध्यात्वामुनिर्गच्छतिभूतयोनिं समस्तसाक्षि
॥तमसः परस्तात् ॥ इति कैवल्योपनिषदि ॥

॥ ॐ ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलंज्ञानमूर्तिं
॥द्वंद्वातीतं गगनसदृशं तत्वमस्यादि लक्ष्यं
॥एकं नित्यं विमलमचलं सर्व धी साक्षिभूतं
॥भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तन्नमामि॥

॥ ॐ सीतारामपदाब्जसेवनपटुं वंदेसुमित्रा-
॥त्मजं भक्त्याशंकरमम्बिकां गणपतिं देवीं
॥मुहुःशारदाम् । नत्वा श्रीगुरुपादपद्मयुग-
॥लं प्राचीनटीकाकृतश्चा ध्यात्मोत्तर कांड १
॥रामवचसां व्याख्यांनुवाचारभे ॥ १ ॥-॥

॥ ॐ सच्चित्पूर्णसुखात्मकं सुविमलं सर्वज्ञ
॥मिशं परम् मायामोहमहांधकार शमनं वेदान्त
॥वेद्यं प्रभुं । स्वेच्छा विष्कृत नित्य शुद्ध परमा-
॥त्मानं सु सेव्यं सदा भक्ताभिष्टद कल्पपादपमिन
॥मजं श्रीरामचन्द्रंभजे ॥ १ ॥ ॐ तत्सत ॥

पार्वती
श्रीशिव
गणेश
श्रीगुरु

॥श्रीईश्वरउवाच॥ ततो जगन्मंगलमंगलात्मना ॥
विधाय रामायणकीर्त्तिमुत्तमाम् । चचार पूर्व्वा-॥
चरितं रघूत्तमो राजर्षिवर्य्यैरपि सेवितं यथा॥१॥

॥ततः जगन्मंगलमंगलात्मना उत्तमाम् रामायणकीर्त्तिं
विधाय राजर्षिवर्य्यैः सेवितं पूर्वाचरितं यथा [तथा] र-
घूत्तमः अपि चचार ॥१॥

॥तिसकेअनन्तर जगत्केमंगलकोमंगलकरनेहारास्वरूपक-
रके उत्तम रामायणकीर्त्ति प्रकटकरके श्रेष्ठराजऋषियोंने
[धर्म] सेवनकियाहै [अर्थात] पूर्वआचरणकियाहै जैसे
[तैसे] रघुकुलविषेश्रेष्ठरामजी सोभी करतेभये ॥ १ ॥

हे सौम्य श्रीमहादेवजीकहतेभये कि हे प्रियापार्वती
पूर्वकहेप्रकार रामजीने वाल्मीकिमुनिके आश्रममें लक्ष्मण
जीकेद्वाराजानकीजीको स्थापितकराया । तिसकेअनन्तर १।
रामजीने अपनेप्रियभ्राता लक्ष्मणजीको ब्रह्मविद्याजोमोक्ष
शास्त्रहै तिसकाउपदेशकियाहै सो अब मैं तुम्हारेप्रतिकह-
ताहों तिसको श्रद्धापूर्वक सावधानहोय श्रवणकरो हेप्रिया
जगत्केमंगलकोमंगलकरनेहारास्वरूपहै जिनका ऐसेजे
श्रीरामजी । अर्थात् असत्यनाशवान् महाअमंगलनामरू-
पात्मकजगत् तिसविषे मंगलरूपधर्महै क्योंकि वारंवार
महाअमंगलरूपजन्ममरणकोप्राप्तकरनेहारा अज्ञानका

कार्य ओंनामरूपात्मकजगत् तिसजगतसों पारकरनेकों मं-
गलरूप धर्महीहै जिसने सर्वप्रकार स्वार्थ परमार्थविषे सा-
वधानतापूर्वक एक सत्य धर्महीको आश्रयकियाहै सोई
जानकरके अमंगलरूपसंसारसेपारहोताहै ताते इससंसार १
विषे मंगलरूप एक धर्महीहै। जिसधर्मकी जब २ असुरों-
करके हानिहोतीहै तब २ महामंगल आनन्दघनपरम
चैतन्य परमात्मा सो अपनी इच्छासे अपनेविषे जिसप्रका-
र रावणादिकअसुरोंका वधकरे धर्मकीरक्षाहोतीजातीहै
तैसेहीमनुष्यादि आकृति धारणकरके धर्मकी रक्षाकरतेहैं
सोई परमात्माके अवतारीशरीर कहेजातेहैं। ताते अमंगल
रूप जगतविषे महामंगलरूपजो धर्म तिस धर्मकीरक्षा परमा-
त्माने अपनेविषे दशरथात्मज राम नामकरकेविख्यात मनु-
ष्यशरीरधारणकर रावणादि असुरोंकेनाशपूर्वक किया
एतदर्थ रामजीको जगतकेमंगलकोंभी मंगलकरनेहारारू-
पकहतेहैं। तथाच "मंगलानाञ्चमंगलम्" भारतकेवि-
ष्णुसहस्रनामविषे। ऐसेजो जगतकेमंगलकोंभी मंगलकर-
नेहारे रामजी तिन्होंने अपनी। उत्तम ३। रामायणनाम्नी २
कीर्त्तिकों ४। प्रकटकरके ५। उत्तमकहिये संसारकेबंधनों-
से छोड़ावनेहारीहै क्योंकि परमात्माने धर्मरक्षणार्थ राम
नामकरकेविख्यात मनुष्यशरीर धारणकरके जो २ आ-
चरणरूप उपदेश कियाहै सो २ सर्व संसारीजीवोंके उप-
देशार्थ ही कियाहै। जैसे रामजीने रागद्वेषसे रहितहोयके
श्रेष्ठव्यवहारका आचरणकियाहै तिसकों अपने हृदयविषे

विचार तदनुसारही रागद्वेषसे रहितहोय शुभरूपव्यवहार
कोंकरतेहैं अरु रामजीके उपदेशरूपवाक्यकों जो कि ह-
नुमानजीआदि जिज्ञासुप्रतिकहेहैं तिनकों अपने अंतःकर
णविषेधार तिसके अभ्यासद्वारा तद्रूपही स्थितीकों पाव-
तेहैं सो पुरुष इसलोकविषे रामजीवत् माननीय पूजनीय
होय परिणाममें देहत्यागकेअनंतर रामशब्दके लक्ष्यार्थ
पदकों जिसकों कि श्रुतिने "तद्विष्णोःपरमंपदम्" कठव-
ल्लीउपनिषद्की १ वल्लीको । श्रुतिमें विष्णुकापरमपद
कहाहै पाय तिससाथ एकहोय आवागमनसे रहितहो-
य मोक्षहोतेहैं । तातें रामजीको चरित्ररूपी कीर्त्ति सर्वो-
त्तमहै ॥ ऐसी जो विश्वामित्रके यज्ञरक्षणादिसलेकेध-
नुर्भंग जानकीविवाह पिताकी प्रतिज्ञापालनार्थ वन
गमन खरदूषणवध सुग्रीवसमागम लंकादहन सेतु-
बंध रावणवधपूर्वक धर्मरक्षण राज्याभिषेक वा सी-
ताश्रमजानकीगमन [illegible]पर्यंत सर्व रामजी-
के उत्तम चरित्र तिनका आयन जो आश्रयरूप प्रतिपा
दक ग्रंथ सोकहिये रामायण । अथवा रामजीहै आ-
यनकहिये आश्रय जिनचरित्रोंके सो रामायण । ऐसी
जो रामायणनाम्नी रामजीकी उत्तम कीर्त्ति तिसअपनी
उत्तम कीर्त्तिकों प्रकटकरके ॥ राजर्षियोंमें श्रेष्ठजे इ-
क्ष्वाकु रघु ककुत्स्थ भगीरथादि तिन्होंने ६। सेवनकि-
याहै ७। अर्थात् पूर्व धर्मपूर्वक राजनीत्यादिकोंका आ-
चरणकियाहै ८। जैसे ९। तैसेही रघुकुलविषे सर्वोत्तम

॥ सौमित्रिणा पृष्ट उदारबुद्धिना रामः कथां प्राह ॥
॥ पुरातनीं शुभां । राज्ञः प्रमत्तस्य नृगस्य शापतो ॥
॥ द्विजस्य तिर्य्यक्त्वमथाऽऽह राघवः ॥ २ ॥

॥ उदारबुद्धिना सौमित्रिणा पृष्टो रामः शुभां पुरातनीं कथां प्राह [पुनः] राघवः प्रमत्तस्य नृगस्य [कथा] अथ राज्ञः द्विजस्य शापतः तिर्य्यक्त्वं आह [तथाप्राह] ॥ २ ॥

॥ उदारबुद्धि लक्ष्मणजीकरके प्रश्नकिये रामजी [सो] शुभरूप प्राचीन कथा कहतेभये [पुनः] रघुकुलमें प्रमादवान् राजानृगकी [कथा] जिसप्रकार राजा ब्राह्मणके शापसे तिर्य्यकभावको प्राप्तभया [जैसे तैसे कहतेभये]

जो भगवान् रामजी १०। सोभी ११। करतेभये १२॥ अर्थात् पूर्वकहिये व्यतीतकालमें इक्ष्वाकुआदि श्रेष्ठ राजर्षि जो कि धर्मविवेकादि शुभगुणसम्पन्नभयेहैं तिन्होंने जिसप्रकार धर्मपूर्वक राजनीत्यादिकोंका आचरणकियाहै तैसेही श्रेष्ठइच्छानुसार रामजी भी करतेभये ॥ २ ॥

॥ भावार्थश्लोक २ का ॥

हे प्रिया पार्वतीजी। उदारबुद्धि १। सुमित्रानन्दनलक्ष्मणजी २। उदारबुद्धिकहिये जो संसारके सर्वपदार्थोंके भोगोंसे जो कि परिणाममें असत्य दुःखरूपहैं उपरामहोय परमउदारपरमात्मापदप्राप्तिकेअर्थ प्रथम धर्म

जिज्ञासा उत्पन्नभईहै चित्तविषे जिसके सोकहिये उदार-बुद्धि। ऐसे उदारबुद्धि जो लक्ष्मणजी तिनकरके ॥ प्रश्नकिये गये ३। जे भगवान् रामजी ४॥ अर्थात् जब कि लक्ष्मणजीने रामजीकी आज्ञासे जानकीजीकों वाल्मीकाश्रमकों प्राप्तकिया तदनन्तर जानकीजी ऐसी स्त्री अरु रामचंद्र ऐसे धर्मात्मा पुरुष जो कि साक्षात् प्रकृतिपुरुषरूपहैं तिनकों भी संसारमें शरीरधारणकरनेसे लोकदृष्टिमात्र संयोग वियोगादिकरके कष्टादि भोक्तव्यभाये तिसकों अनुभवकरके अरु अपनावियोगभविष्यत् सुमन्त्रद्वारा श्रवणकरके लक्ष्मणजीकों संसारसे वैराग्यहोय तिससे छूटनेके अर्थ धर्मजिज्ञासा उदयहोतीभई तब जिसधर्मकों अपनेवृद्धोंने जिसप्रकार आचरणकियाहै तिसकों जानकरनेके अर्थ श्रीरामजीसों प्रश्नकिया कि हे भगवन् पूर्व अपने वृद्धोंने जिसप्रकार धर्माचरणकिया है तिसकों आप कहिये कि जिसकों श्रवणकरके धर्मानुष्ठानपूर्वक इससंसारसे हम पारहोवें। इसप्रकार उदारबुद्धि लक्ष्मणजीकरके प्रश्नकियेगये जोरामजी सो। शुभरूप ५। प्राचीन ६। कथा ७। कहतेभये ८॥ अर्थात् जिसप्रकार राजा इक्ष्वाकुआदियोंने यथोचित श्रुति शास्त्रानुसार धर्माचरणकियाहै तिसका कथाप्रसंग कि जिसकोंमनुष्य भलीप्रकार श्रवणकरके तदनुसार धर्माचरणकरैं तो क्रमकरके परिणाममें संसारसे मोक्षहोताहै। ताते ऐसीजो धर्मप्रतिपादक शुभरूप प्राचीनकथा सो उदा-

रसुद्धि धर्मजिज्ञासु लक्ष्मणजी तिनके प्रति रामजी कहते भये तिसके अनंतर रघुकुलमें उत्पन्न नाते राघवके प्रमादका न् १०। नृगकी ११। कथा कि जिसप्रकार १२। राजानृग १३। अपने प्रमादसे ब्राह्मणके १४। शापकरके १५। तिर्य्यक् योनिको प्राप्त भया १६।१७॥ अर्थात् सूर्यवंशमें इक्ष्वाकु आदिसेके यथोचित धर्मानुष्ठानकरनेहारे श्रेष्ठ राजऋषियों की शुभरूपकथा कही तिसके अनन्तर रघुकुलमें एक राजानृग प्रमादवान् भया सो जिसप्रकार दानरूपधर्ममें प्रमादकरनेसे ब्राह्मणके शापद्वारा कर्कटकी योनिको प्राप्त भया सो कथा भी रामजीने लक्ष्मणजीप्रति प्रतिपादन किया। सो इसकथाकरके लक्ष्मणआदि सर्वजिज्ञासुओंको सूचनाकिया कि धर्माचरणमें प्रमादका तबनहीं धर्माचरण में प्रमादी होनेसे पशुआदि निकृष्ट योनियोंकी प्राप्ति होतीहै राजानृगवत् नाते विवेकीपुरुषकोअप्रमादी होय पूर्वश्रेष्ठ ज्येष्ठोंके आचरणोंको विचार तदनुसार धर्माचरण कर्तव्य योग्यहै जो मोक्षमें आदिसाधनहै॥ २॥

॥ भावार्थश्लोक ३ का॥

हे पार्वती किसीएकसमय १। भगवान्‌रामजी २। अपने एकान्त विचारसमाधिके स्थानविषे ३। ब्रह्मविद्याकेविचारयुक्त विराजमानथे ४। सो कैसेहैं रामजी प्रभुहैं प्रभुताहिये समर्थहैं सर्वकार्यकरनेको ५। पुनः कैसेहैं रामजी लक्ष्मीकरके सेवितहैं पादपद्म जिनके ६॥ अर्थात् ज्ञानकीजो रूपालक्ष्मीकरके सेवनकियेगयेहैं चरणकमल जिनके सो कैसी

॥कदाचिदेकान्त उपस्थितं प्रभुं रामं रमालालित-॥
॥पादपंकजं। सौमित्रिरासादितशुद्धभावनः प्रणम्य-॥
॥भक्त्या विनयान्वितोऽब्रवीत् ॥ ३ ॥

॥कदाचित् एकान्ते उपस्थितं रमालालितपादपंकजं प्रभुं रामं सौमित्रिः आसादितशुद्धभावनः विनयान्वितः भक्त्या प्रणम्य अब्रवीत् ॥ ३ ॥

किसीसमय एकान्तविषे विराजमान लक्ष्मीकरकेसेवित हैं पादपद्म जिनके [ऐसेजे] समर्थ रामजी [तिनको] लक्ष्मणजी [जिन्होंने] प्राप्तकियाहै शुद्धभावना [सो] विनयसंयुक्त प्रीतिपूर्वक प्रणामकरके कहतेभये ॥ ३ ॥

हे लक्ष्मीजी कि जिसकी कृपाकटाक्षकी आकांक्षा इंद्रादिदेवता भी करतेहैं सो कैसेहैं इंद्रादिदेवता जो त्रैलोक्यकेराजा सर्वकरके पूजनीय। ऐसे जे इंद्रादिदेवता सो भी जिसलक्ष्मीजीकी कृपादृष्टिकी सर्वदाकाल आकांक्षाही करतेरहतेहैं। ऐसीजे लक्ष्मीजी सो जानकीजीरूपसे जिनके चरणकमलकों सर्वदाकाल सेवनकरतीहैं ऐसे जे सर्वकेस्वामी लक्ष्मीपति भगवान् श्रीरामजी तिनके समीप प्राप्तहोके ॥ सुमित्रानन्दन लक्ष्मणजी ७। कि जिन्होंने प्राप्तकियाहै ८ शमादिसाधनोंकरके शुद्धभाव अपनेविषे ९। सो लक्ष्मणजी विनयसंयुक्त १०। भक्तिपूर्वक ११। प्रणाम करके १२। इसप्रकार

॥ त्वं शुद्धबोधोऽसि हि सर्वदेहिनामात्मास्य- ॥
॥ धीशोऽसि निराकृतिः स्वयम् । प्रतीयसे ज्ञान- ॥
॥ दृशा महात्मन् पादाब्जभृंगाहितसंगसंगिनाम् ॥ ४ ॥

॥ त्वं शुद्धबोधः असि हि सर्वदेहिनां आत्मा असि अधीशः असि स्वयं निराकृतिः [असि] अथ अपि ज्ञानदृशा प्रतीयसे ते पादाब्जभृंगाहितसंगसंगिनाम् ॥

॥ आप शुद्धज्ञानरूप हो निश्चे सर्वदेहधारीके आत्मा हो स्वामीहो अपनेविषे निराकारहो तथा अपि ज्ञानदृष्टिसे को भासतेहो तुम्हारे पादपद्मका भ्रमर कियाहै मनजिसने अरु अहितजानाहै विषयसंगीयोंका संगजिसने सोभीजाने

के १४। यहवचन बोलते भये १६ ॥–॥ ३ ॥

॥ भावार्थश्लोक ४ का ॥

हे पार्वतीजी अब लक्ष्मणजी यह वाक्य बोलते भये कि हे स्वामीजी आप १। सदाशुद्ध २। ज्ञानस्वरूपहो ३॥ अर्थात् अविद्या अरु तिसका कार्य आवरणविक्षेपसहित समस्त प्रपंच तिनसे रहित केवल ज्ञानस्वरूपहो ॥ अरु निश्चयकरके ४। सर्वदेहधारियोंके ५। आत्मा ६। हो ७। अरु सर्वके स्वामी ८। हो ९। फेर कैसेहो आप स्वयं अपने आपविषे १० निराकारहो ११। तथापि १२।१३॥ अर्थात् अविद्या अरु ति- सका कार्य नामरूपात्मक समस्त प्रपंच तिनसे रहित अपने

आपविषे निराकार केवल केवलीभावहो सो तुमऐसेहोनसं-
तेहु ॥ ज्ञानदृष्टिवाले विवेकीको भासतेहो १५ ॥ अर्थात् जि-
सपुरुषने साधनोंकरके अन्तःकरणशुद्धकर आचार्यसेमि-
लके श्रुतियोंकेवाक्य श्रवणकर पुनः तिसका इढमननक-
रनेसे उत्पन्नकियेहै परमात्मविषयक ज्ञानविवेकरूपीच-
क्षु, ऐसे जे आचार्यवान् अरु ज्ञानवान्पुरुषहैं सो ज्ञानदृ-
ष्टिद्वारा आपके निर्विशेष निराकार स्वरूपको जानतेहैं ॥
तथाच "आचार्यवान्पुरुषोवेद", "पश्यन्तिज्ञानचक्षुषः" ।
यह छांदोग्य उपनिषद्के ६ प्रपाठककी १४ मी श्रुति अरु
भगवद्गीताके अध्याय १५ के १० श्लोकमें । तातें ज्ञानवान्पु-
रुष आपको जानतेहैं । अरु जिसपुरुषने अपनाजोहै म-
न तिसको आपके चरणकमलका भ्रमरकियाहै अरु अ-
हितजानके विषयसंपदोंका संग त्यागदियाहै सो सगुण
उपासक भी आपके विशेषस्वरूपको जानतेहैं ॥ ४ ॥

॥ भावार्थ श्लोक ५ मेंका ॥

हे पार्वतीजी पुनः लक्ष्मणजी कहतेभये कि हे प्रभो हे
स्वामीजी १ आपके २ चरणकमल ३ जो कि संसारके
जन्ममरणादिक्लेशोंके निवृत्तकरनेहारेहैं ४ । अरु योगीज-
न अतिप्रीतिसे अपने अंतःकरणविषे धारतेहैं ५ ॥ अर्थात्
जैसेकमल सरोवरविषे रहताहै अरु मकरंदरसकरकेपूर्ण
भ्रमरको अतिप्रियहोताहै तातें भ्रमरतिसविषे स्थितहोताहै
तैसे ही संतोंके अन्तःकरणरूपी सरोवरहैं सो प्रेमलक्षणा-
रूपीजलकरकेपूर्णहैं तिससरोवरविषे आपकेचरणरूपी

॥ अहं प्रपन्नोऽस्मि पदांबुजं प्रभो भवापवर्गं तव ॥
॥ योगिभावितं । यथाञ्जसाऽज्ञानमपारवारिधिं ॥
॥ सुखं तरिष्यामि तथाऽनुशाधि माम् ॥ ५ ॥

॥ हे प्रभो तव पदाम्बुजं भवापवर्गं योगिभावितं अहं प्रपन्नः अस्मि यथा अञ्जसा अज्ञानं अपारवारिधिं । सुखं तरिष्यामि तथा मां अनुशाधि ॥ ५ ॥

॥ हे प्रभो तुम्हारे पादपद्म [जो] संसारनिवर्त्तक हैं [अरु] योगिजनकों अतिप्रिय हैं [तिसकी] हम शरण हैं जैसे [हम] अनायास अज्ञान [जो] अपारसमुद्र है [तिससे] सुखपूर्वक पार होवें तैसे हमको उपदेश करो ॥ ५ ॥

कमल ध्यानवृत्तिद्वारा स्थित है अरु परमानंदमोक्षरूपी मकरंदरसकरके पूर्ण हैं तिसविषे संतोंके मनरूपी भ्रमर अचल स्थित होय सर्वदा परमानंदको पानकरते हैं ऐसे जे संसारदुःखके निवर्त्तक योगिजनोंकरके सेवित आपके पादपद्म हैं ॥ तिसकी मैं ६। शरणको प्राप्त भया हौं ७। हे स्वामीजी जैसे ९। हम बिनाहीं श्रम १०। अज्ञानरूप जो ११। अपारसमुद्र है १२। तिससों सुखपूर्वक १३। तरजावें १४। सोई प्रकार १५। कृपाकरके मुझको १६। उपदेश करिये १७

हे शिष्य इसप्रकार जब लक्ष्मणजीने अपने मोक्षके अर्थ विनय किया तब शरणागतका दुःखदूर करनेहारे

॥श्रुत्वाऽथ सौमित्रिवचोऽखिलं तदा प्राह प्रपन्ना-
॥र्तिहरः प्रसन्नधीः। विज्ञानमज्ञानतमोपशान्तये॥
॥श्रुतिप्रपन्नं क्षितिपालभूषणम् ॥ ६ ॥

॥अथ अखिलं सौमित्रिवचः श्रुत्वा तदा प्रपन्नार्तिहरः प्रसन्नधीः अज्ञानतमोपशान्तये श्रुतिप्रपन्नं क्षितिपालभूषणं विज्ञानं प्राह ॥ ६ ॥

॥इसप्रकार सम्पूर्ण लक्ष्मणजीकेवचनोंको श्रवणकरके तब शरणागतकेदुःखनाशकर्ता प्रसन्नबुद्धि [श्रीरामजी] सो अज्ञानरूपीअंधकारकेविनाशार्थ श्रुतिकरके प्रतिपाद्य राजाओंकोभूषण आत्मविज्ञान कहतेभये ॥६

जे श्रीरामजी सो विज्ञानकहतेभये ॥ ५ ॥

॥ भावार्थ श्लोक ६ठे का ॥

हे पार्वतीजी जब लक्ष्मणजीने रामजीसों एकान्तविषे जाय अपनेअज्ञानकेनाशार्थ जो कि सम्पूर्णसंसारकामूलहै जिज्ञासापूर्वक प्रार्थनाकिया सो १। सम्पूर्ण २। लक्ष्मणजीकेवचनकों ३। श्रवणकरके ४। तब ५। शरणागतके दुःखकोनाशकर्ता ६। प्रसन्नचित्त जोभगवान् रामजी ७। सो अज्ञानरूपअंधकारकेविनाशार्थ कि जिसअंधकारकेआश्रय सत्यपरमात्मारूपीरज्जुविषे संसाररूपीसर्प प्रतीतहोय महाभयकों प्राप्तकरताहै तिसकेविनाशार्थ ८।

श्रुति में उपनिषद्रूप भाग तिसकरके प्रतिपाद्य ९। अरु राज
ऋषिओंको सर्वप्रकार शोभितकरनेहारा भूषण १०। ऐसा जो
साक्षात् आत्मानुभवविज्ञानहै ११। तिसका उपदेश करते भ-
ये १२॥ अर्थात् पूर्व जनक अश्वपति अजातशत्रु पृथु
ऋषभदेव अर्जुन आदि जे राजऋषि सो जिस आत्मवि-
ज्ञानकरके जगत्विषे परमशोभाको प्राप्तहोय परिणाम
में देहत्यागके अनन्तर विदेहकैवल्य निर्विशेष अपने आ
अध्यात्मराज्यको प्राप्त भयेहैं। ऐसा जो परमपावन राजऋ
षिओंका भूषण अज्ञानरूप अंधकारका नाशकर्ता परम
प्रकाशरूप विज्ञान सो रघुकुलभूषण भगवान् श्रीरामजी
अपने जिज्ञासु भ्राता लक्ष्मणजीप्रति उपदेश करते भये॥१॥

॥ भावार्थश्लोक १ टीका ॥

हे पार्वती अब श्रीरामजी लक्ष्मणजीको विज्ञान उप-
देश करैहैं तहां प्रथम विज्ञान न कहके तिसके साधन
अरु साधनउत्पत्तिका क्रम निरूपण करतेहैं ॥ हे लक्ष्म
णजी जिज्ञासुपुरुष प्रथम १। अपनेवर्णाश्रमयोग्य वेद
शास्त्रोंकरके प्रतिपाद्य जे २ कर्महैं ३। तिनको कामनासे
रहितहोय ईश्वरार्पणकरके ४। अपने अन्तःकरणको शु-
द्धकरै ५॥ अर्थात् कर्म पांचप्रकारकेहैं तहां एक नित्य-
कर्म दूसरा नैमित्तिककर्म तीसरा प्रायश्चित्तकर्म चतुर्थ
काम्यक यज्ञ उपासनादिकर्म पंचम निषिद्धकर्म। तिसमें
काम्यक अरु निषिद्ध इनको त्यागके नित्य नैमित्तिक प्रा-
यश्चित्त इन तीनकर्मोंको यथाकाल निष्काम ईश्वरार्पण

॥आदौ स्ववर्णाश्रमवर्णिताः क्रियाः कृत्वा॥
॥समासादितशुद्धमानसः। समाप्य तत् पूर्वमुपा-॥
॥त्तसाधनः समाश्रयेत् सद्गुरुमात्मलब्धये॥७॥

॥आदौ स्ववर्णाश्रमवर्णिताः क्रियाः कृत्वा [तेन] समासादितशुद्धमानसः तत् [क्रियाः] पूर्वं समाप्य उपात्तसाधनः आत्मलब्धये सद्गुरुं समाश्रयेत्॥७॥

॥श्रीरामउवाच। प्रथम अपनेवर्णाश्रमयोग्यप्रतिपाद्यजे कर्महैं [तिनकोंनिष्काम] करके भलीप्रकारअंतःकरणको शुद्धकरे [तदनंतर] इसकर्मको प्रथमसमाप्तकरके साधनसम्पन्नहोय आत्मज्ञानकीप्राप्तिकेअर्थ सद्गुरुको आश्रयकरे

करे। हे सौम्य अब इन कर्मोंको सावधानहोय श्रवणकरो प्रथम नित्यकर्मकहतेहैं स्नानसंध्यागायत्रीतर्पण अग्निहोत्र बलिवैश्वदेव अतिथिपूजन स्वाध्याय। अर्थात् अपनेवेदशाखाआदिकोंकापढ़ना। इन पांचकर्मोंकोपंचयाग नित्यकर्म कहतेहैं यह वर्णाश्रमकेविभागसे अवश्यकर्तव्यहैं इनके न करनेमें प्रतिवायहै ऐसा शास्त्रका योंनेकहाहै ताते यह नित्यकर्तव्य सोई नित्यकर्महै १। अरु जो कर्म निमित्तपायकेकियेजातेहैं जैसे पुत्रोत्पन्नहोनेसे जातिकर्म नामकर्णादि संस्कारकरने अरु मातापितादिपितृयोंके क्षयातिथि अरु तीर्थोंमें पर्वयोगोंमें अमा

वास्थाआदिहैं तिनमें श्राद्धकरना इत्यादि जोकर्म वेदशास्त्र
के अनुसार निमित्तपायके कियेजातेहैं तिनको नैमित्तिक
कर्मकहतेहैं।२॥ अरु प्रायश्चित्तकर्म उसको कहतेहैं जो २
कि पापनिवृत्तिकेअर्थ कर्महैं। जैसे कृच्छ्र चांद्रायणव्रत
हरिसुमिरण तीर्थस्नानादि जोकर्महैं सो प्रायश्चित्तकर्महैं
क्योंकि शास्त्रकारोंने पापकी निवृत्तिकेअर्थ इन्हीं कर्मोंका
विधानकियाहै। तहां पाप दोप्रकारकाहै तहां एक सज्ञान
एक अज्ञान तहां जोकि इसजन्मकेकियेपाप यावत्स्मरण
में आवैंहैं तिनको सज्ञानपापकहतेहैं। अरु इसजन्मके अ-
रु पूर्वलेजन्मके पाप जोकि स्मरणमें नहीं आवते तिनको
अज्ञानपापकहतेहैं इन दोनोंपापोंकी निवृत्तिके अर्थ २
विधानकिये जे शास्त्रकारोंने कृच्छ्रचांद्रायणादि कर्म ति-
नको प्रायश्चित्तकर्म कहतेहैं।३॥ अरु कामुककर्म उसको
कहतेहैं कि जो किसीकामनाकोलेके कर्म कियेजातेहैं जै-
से श्रुतिने कहाहै कि। "पुत्रकामोयजेत, स्वर्गकामोयजेत"
पुत्रकीकामनावाला यज्ञकरे दशरथवत् स्वर्गकीकामना
वाला अश्वमेधादि यज्ञकरे। ताते अश्वमेधादिजे यज्ञरू-
पीकर्महैं सो कामनावालेपुरुषकरके कियेजातेहैं इनके
नकरनेमें प्रत्यवायनहीं नित्यकर्मवत् अरु करनेसे फ-
लकीप्राप्तिहोतीहै ताते अश्वमेधादियज्ञरूप जे कर्म हैं
सो कामुककर्महैं।४॥ अरु जिनकर्मोंको वेदशास्त्रादि-
कोंने निषेधकियाहै तिसको निषिद्धकर्म कहतेहैं जैसे
कहाहै कि "सुरां नपिबेत," कलंजं नभक्षयेत," परदारान्न

गच्छेत् । अनृतं न वदेत्" पराव मतपीयो व्याजमतखायो परस्त्रीभोगमतकरो मिथ्यामतबोलो । इत्यादि कर्म जे वे द शास्त्रने निषेधकिये हैं तिनको निषिद्धकर्म कहतेहैं । ५ ॥ हे सौम्य इसरीतिसे पांचप्रकारकेकर्म कहेहैं तहां जे मुमुक्षुपुरुषहैं सो काम्यक अरु निषिद्ध इन दोनोंक र्मोको त्यागके नित्य नैमित्तिक अरु प्रायश्चित्तरूपकर्म हैं तिनको यथोचित कालकेविभागसे निष्कामहोय ईश्वरार्पण करताहै तब ईश्वरकृपासे उसका अन्तःक रण शुद्धहोताहै । ताते प्रथम कहेप्रकार कर्मकरके जि ज्ञासु अपने अन्तःकरणको शुद्धकरे ५। तहां जब अ न्तरते आत्मजिज्ञासा उत्पन्नहोय अरु विषय विरस लगें तब जानना जो अन्तःकरणशुद्धभया । इसप्रकार अन्तःकरणकी शुद्धताका लक्षण उपजे तब । पूर्वोक्त जे कर्म कर्त्तव्य कहेहैं तिनको ६। प्रथम ७। समाप्तकरके ८॥ अर्थात् संन्यासलेके तदनंतर साधनसम्पन्नहोवे ९॥ अर्थात् प्रथम विहित निष्काम कर्मकरके अपने अन्तःकरणको शुद्धकरे जब अन्तःकरणकी शुद्धिद्वारा आत्मजिज्ञासा उत्पन्नहोय तब सम्पूर्ण बाह्यकर्मको- त्यागके अर्थात् संन्यासलेके आत्मज्ञानके जे अन्तरंग साधनहैं तिनकोंकरे अरु उनसाधनोंको श्रवणकरे

हे सौम्य प्रथम विवेक दूसरा वैराग्य तीसरा षट्- सम्पत्ति चतुर्थ मुमुक्षुता । यह चार साधनहैं तिनके अंकुर शुद्धअन्तःकरणविषे उपजते हैं तिनको पुरुषार्थ

करकेबताबे। अब उन साधनोंके स्वरूप बतावतेहैं तहां प्रथम साधनविवेकहै सो विवेकउसकोकहतेहैं जो सत्य असत्यका विवेचनकरना जो सत्यवस्तुक्याहै अरु असत्यवस्तुक्याहै। तहां सत्य उसकोंकहिये जो उत्पत्ति प्रलयसे रहितहोय सो उत्पत्तिप्रलयसे रहित यथार्थरूपआत्माहै सोई सत्यहै अरु तद्व्यतिरिक्त देहादिप्रपंच सर्व मिथ्याहै। मिथ्याउसकोंकहतेहैं जिसका सत्यत्व असत्यत्व एकही विषेहोय। अर्थात् अधिष्ठानके जानेविना सत्यरूप भासे अरु अधिष्ठानके जाननेसे असत्यरूपभासे सो कहिये मिथ्या। जैसे रज्जुविषे सर्प सो अधिष्ठानरूप रज्जुके ज्ञानविना सत्यरूपभासेहै अरु अधिष्ठानरज्जुके जाननेसे असत्यरूपभासेहै ताते मिथ्याहै। तैसेही देहादि प्रपंच ऐसेही जानना जो अविद्याकरके सम्पूर्ण प्रपंचात्मक जगत् अधिष्ठानरूप आत्माके ज्ञानविना सत्यरूपभासेहै अरु जब अधिष्ठानविषयक अविद्यानिवृत्तहोतीहै तब सर्वप्रपंच असत्यरूपभासेहै। ताते इसप्रकार विचारकरके देहादि सम्पूर्ण जगतकों मिथ्याजानना अरु सर्वाधिष्ठान आत्माकों सत्यजानना इसकानाम विवेक प्रथमसाधनहै १। अब दूसरासाधन वैराग्यकहतेहैं तहां वैराग्य दो प्रकारकाहै तहां एक दृष्टानुविद्ध दूसरा शब्दानुविद्ध तहां दृष्टानुविद्धके चारभेदहैं तहा प्रथम यतमान १ दूसरा व्यतिरेक २ तीसरा एकेंद्रिय ३ चतुर्थवशीकार ४। तहां यतमान उसकों कहतेहैं जो संसारकों दुःखरूपजानके साधुस-

हात्मा की संगतिकरनी अरु इच्छाकरनी जो सत्यरूपपरमे-
श्वर मुझको प्राप्तहोवे अरु संसारके दुःखोंसेछूटों। इस भा
वनाकानाम यतमानवैराग्यहै सो यह दृष्टानुविद्धका प्रथ-
मपादहै १॥ अरु दूसरा व्यतिरेकवैराग्य उसको कहतेहैं
जो सत्संगद्वारा यहविचारकरना कि मेरेविषे कौन २ दैवी
सम्पदाके गुण हैं अरु कौन २ आसुरीसंपदाके गुण हैं। ति-
नको विचारके आसुरीसंपदाके गुण घटावने अरु दैवीसं-
पदाके गुण बढ़ावने इसकानाम व्यतिरेक वैराग्यहै सोय-
ह दृष्टानुविद्धका दूसरापादहै २॥

॥ शिष्य उवाच ॥

हे गुरो आपनेकहा कि आसुरीसंपदाकेगुण घटावने
अरु दैवीसंपदाके गुण बढ़ावने तहाँ कौन २ आसुरीसम्प-
दाके गुणहैं कि जिनको मुमुक्षुकोत्यागकरनाहै अरु कौ-
न २ से दैवीसंपदाके गुणहैं जो मुमुक्षुकोअपने विषे बढ़ाव-
ने हैं तिनको आप कृपाकर कहिये ॥

॥ श्रीगुरुरुवाच ॥

हे सौम्य प्रथम दैवीसम्पदाके नाम अरु लक्षण श्रव-
णकरो भगवद्गीताके सोलहवें अध्यायविषे श्रीकृष्णने
अर्जुनप्रति दैवीसम्पदा अरु आसुरीसम्पदा कहीहैं सो मैं
कहताहों। 'अभयता, अध्यात्मक, अधिभूतक, अधिदैव
क आदि मरणपर्यंतके जे भयहैं तिनसे रहितहोना। १॥
'सत्वसंशुद्धि, भलीप्रकार अंतःकरणकीशुद्धि अर्थात् शु-
द्धभये अंतःकरणमें कामक्रोधादिआसुरीसम्पदाके अंकु-

र भी नउपजे ॥२॥ ज्ञानयोग[3], सम्पूर्णजगतविषे आत्मभावना करनी ॥३॥ दान[4], यथाप्राप्त द्रव्य गौ आदिदेना अरु दीन दुःखी जीवोंकी अन्नवस्त्रद्वारा रक्षाकरनी ॥४॥ दम[5], सर्व विषयोंतें इंद्रियोंका निग्रहकरना ॥५॥ यज्ञ[6], अपने वर्णाश्रम धर्मको अहंकारसेरहितहोयकरना ॥६॥ स्वाध्याय[7], गुरुद्वाराअध्ययनकिया जो वेद शास्त्र है तिसका नित्यपाठ-विचारकरना ॥७॥ तप[8], गुरुआदि ज्येष्ठ श्रेष्ठमहात्माओं-की सेवाकरनी ॥८॥ आर्जव[9], प्राणीमात्रकेदुःखसुख समा-नजानके सर्वविषे सरलता समभावकरनी ॥९॥ अहिंसा[10], काया वचा मनसा तीनोंप्रकारसे किसी प्राणीमात्रकोंक्लेश न देना ॥१०॥ सत्य[11], जैसाहोय तैसा सत्यकहना ॥११॥ अक्रोध[12], क्रोधसेरहितका नाम अक्रोधहै अर्थात् किसीप्रकार क्षोभनकरना ॥१२॥ त्याग[13], सर्व कर्मोंके फलकी अरु विषयकी आकांक्षानकरनी ॥१३॥ शांति[14], इंद्रियद्वारा बहि-र्मुखहुई जे अंतःकरणकीवृत्तियां तिनकों अंतरमुख आत्मा-नुसंधानमें लगावना ॥१४॥ अपैशुन[15], परोक्षमें किंवा प्र-त्यक्षमें किसीकी निंदा नकरना ॥१५॥ दया[16], सर्वजीवोंका शुभचिंतनकरना ॥१६॥ अलोलुपत्वं[17], विषयोंकीप्राप्तिहोत संते भी इंद्रियां चलायमान न होंय ॥१७॥ मार्दव[18], चित्त-की कोमलता ॥१८॥ लज्जा[19], निषिद्धकर्मकरनेमें चित्तका संकोच ॥१९॥ अचपलता[20], इंद्रियसहित संकल्पकी निवृ-त्ति ॥२०॥ तेज[21], अन्यपुरुषोंमें आतंकहोना ॥२१॥ क्षमा[22], आध्यात्मआदिजे दुःख उपद्रव हैं तिनको खेदसेरहितहोकरके

भोगना ॥ २२ ॥ धृति, धीरज अर्थात् इंद्रियोंके चलायमानहो नेसे भी चित्तचलायमाननहोय ॥ २३ ॥ शौच, शुद्धता अर्थात बाह्यस्नानादिकरके अरु अंतर प्राणायाम ध्यान धारणा समाधि आदिकरके शुद्ध रहना ॥ २४ ॥ अद्रोह, जो कदापि अपनेकों दुःखदाईभी होय तथापि उससे द्वेष न मानना ॥ २५ ॥ अमानिता, अपने मानकी इच्छानकरनी अर्थात् अपनेविषे सर्व शुभगुणहोनसंते भी अपनेविषे महत्वकी भावना नफुरे ॥ २६ ॥ इति हे सौम्य यहसर्व २६ छब्बीस दैवीसंपदाके लक्षणहैं अब आसुरीसंपदाकोंसं क्षेपमात्र श्रवणकरो ॥ दंभ, अपनेकों संसारविषे श्रेष्ठत्व विदितकरनेके अर्थ नानाप्रकारके स्वांगरचने ॥ १ ॥ दर्प, कुल विद्या रूप गुण धन इत्यादिकरके अपनेको श्रेष्ठमानना अरु अन्योंकों तुच्छजानना ॥ २ ॥ अभिमान, अपनेविषे महत्वपनेकीबुद्धि ॥ ३ ॥ क्रोध, दूसरेकेअपकारार्थ चित्त का क्षोभ ॥ ४ ॥ पारुष्य, जिसवाक्यके श्रवणसे श्रोताके चित्तमें क्षोभउपजे ऐसेवाक्यका बोलना ॥ ५ ॥ अज्ञान, सत्य असत्यके विवेकका अभाव ॥ ६ ॥ हे सौम्य इत्यादिप्रकार दैवीसंपदासे जो इतर प्रतियोगीहैं सो सर्व आसुरी सम्पदा रजोगुण तमोगुणके कार्य अनर्थकेहेतुहैं इनके वशभया मनुष्य दुःख अरु नीचगतिकों प्राप्तहोताहै। ताते यह जो दैवीसम्पदा अरु आसुरीसम्पदा तुमकों कहीहैं तिनमेंसे दैवीसम्पदाके गुण धारणाकरने अरु आसुरीसम्पदाके गुण त्यागकरना इसका नाम व्यतिरेक वै-

राग्य कहतेहैं सो यह दृष्टानुविद्धका द्वितीयपादहै ॥ २॥
अब एकेन्द्रियको श्रवणकरो । एकेन्द्रिय उसको कहते हैं जो
इंद्रियोंके विषय भोगहैं उनसेतो चित्त उपराम भयाहै परंतु
चित्तविषे किंचित् कामणि भावनाहै तिसकानाम एकेन्द्रिय
वैराग्यहै सो यह दृष्टानुविद्धका तृतीयपादहै ॥ ३॥ अब च
तुर्थ वशीकारको श्रवणकरो इसलोक अरु परलोकके जो
विषयभोगहैं तिनको काकविष्टावत् जानना अर्थात् शेष
लोकादि से ब्रह्मलोकपर्यंत चतुर्दशभुवनविषे जे विषयहैं
तिनको काकविष्टावत् जानना अर्थात् जैसे काकविष्टाविषे
किसीको भी तृष्णाफुरेनहीं तैसे ही सर्वलोकलोकांतरके
जे विषय भोगहैं तिसविषे काकविष्टावत् तृष्णाफुरेनहीं इस
प्रकारका त्यागकरके जो वृत्तिको वशकरनाहै तिसकानाम
वशीकार वैराग्यहै सो यह दृष्टानुविद्धका चतुर्थपादहै ॥४॥
इसप्रकार पूर्व२ से उत्तरोत्तर उत्कृष्टपादोंसहित जो पूर्ण
वैराग्यहैं तिसको दृष्टानुविद्धवैराग्यजानना ॥ अरु शब्दानु
विद्ध उसको कहतेहैं कि अपनेविषयक अन्यकरकेकहे
जे निंदास्तुत्यात्मकवाक्यहैं तिनके अर्थको अपनेविषे न
धारना अर्थात् जब कोईने अपनेको निंदाके किंवा स्तुति-
के वाक्यकहे तब विचारकरनाजो, इन वाक्योंकी प्रवृत्ति दृ-
श्यविषयहै किंवा दृष्टाविषयकहै । दृश्य कहिये शरीर अ-
रु दृष्टाकहिये आत्मा । तहां कहनेवालेके वाक्यकी प्रवृत्ति
दृश्यमेंहै दृष्टामेंनहीं क्योंकि उसकहनेवालेको जो दृष्टआ-
वताहै शरीर अरु तिसकाजो नामहै तिसकोलेके निंदा स्तु

तिकरताहै ताते नामसमेतशरीरविषे उसके वाक्यकी प्रवृत्ति है अरु द्रष्टाजो आत्माहै सो दृष्टिगोचरहै नहीं क्योंजो बुद्धि आदि किसीका भी विषयनहीं निराकारहै अरु नामभी उसविषे कोईनहीं क्योंकि वाणीका विषयनहीं सोई द्रष्टारूप आत्माहै सोई मैं हौं यह रूपशरीरमें नहीं ताते निंदा स्तुतिकरनेवालेकेवाक्यकी प्रवृत्ति मेरेविषेनहीं शरीरविषे है सो हो। इसप्रकार वाक्योंकी प्रवृत्तिको विचार उनवाक्योंके अर्थविषे रागद्वेषसे रहितहोना सोई शब्दानुविद्ध वैराग्यहै। इसप्रकार द्रष्टानुविद्ध अरु शब्दानुविद्ध दो प्रकारके वैराग्यकाहोना सो यह दूसरासाधनहै॥ २॥

हे सौम्य जो शमादि षट्सम्पत्तिरूप तृतीयसाधन है अब तिसको भी श्रवणकरो। शम दम उपरति तितिक्षा समाधान श्रद्धा। तहां शम उसकोंकहतेहैं जोसदैव वासनाकात्यागकर रागद्वेषसे रहित सम रहना। अरु दम उसकों कहतेहैं जो बाह्यके शब्द स्पर्शरूप रस गंधादि विषयहैं तिनसों श्रोत्रादि इंद्रियोंकों रोकना। अरु उपरति उसकोंकहतेहैं जो आयप्राप्तभयेविषय तिसविषे भी मनकी तृष्णा नफुरे। अरु तितिक्षा उसकों कहतेहैं जो शीत उष्ण आदि क्लेशकों क्लेशमानके सहनकरना। अरु समाधान उसकोंकहतेहैं जो अपने मनकों इष्टदेवविषे ध्यानवृत्तिद्वारा स्थिरकरना। श्रद्धा उसकों कहतेहैं मोक्षकेअर्थ गुरुमुखसे श्रवणकियेजे ब्रह्मविद्याउपनिषद् श्रुतिके महावाक्य तिसविषे सत्य प्रतीतिकरना।

हे सौम्य यहजो परसम्पदा तुम से कहीहैं सोइ षट्सम्पत्ति-
रूप तृतीयसाधनहै॥३॥ अब चतुर्थसाधन मुमुक्षुता श्रव-
णकरो सकारणसंसारसे मोक्षहोनेकीइच्छा जिसकानाम मु-
मुक्षुताहै। अर्थात् स्वर्गादि सर्वकामनाको त्यागके सर्वसेमु-
क्तहोनेकी कामनाहोय तिसकानाम मुमुक्षुताहै। जैसे क्षुधा
करके अत्यन्त दुखितजीवको सिवाय भोजनके और नहीं
रुचता। तैसेही संसारके जे जन्ममरणादिक्लेशहैं तिनकर
के अत्यन्त दुखितहोयसंसारसे मुक्तहोनेकी जो दृढ़इच्छा ति-
सकरकेयुक्त जोचित्तवृत्ति तिसकानाम मुमुक्षुताहै सो यह च-
तुर्थसाधनहै ॥४॥ हे सौम्य यह जो चारसाधनकहेहैं सो १
नित्यकर्मादि साधनकीअपेक्षा अंतरंगसाधनहैं तिनको क
रै। अर्थात् पूर्वकहे जोतीनप्रकारके नित्य नैमित्तिक प्राय-
श्चितरूपकर्म तिनकोईश्वरार्पणनिष्कामकरके अन्तःकरण
को शुद्धकरे पश्चात् कर्मत्याग अर्थात् संन्यासलेके ऊपर
कहे विवेकादिसाधन तिनकरके सम्पन्नहोय ९। इसप्रका
र साधनसम्पन्नहोयके तब। आत्मज्ञानकी प्राप्त्यर्थ १०।स-
द्गुरुको आश्रयकरे ११-१२॥ अर्थात् जब भलीप्रकार साध
नोंकरकेसम्पन्नहोवसे तब आत्मज्ञानकी प्राप्तिकेअर्थ स-
द्गुरुकी शरणकोप्राप्तहोय क्योंकि विनाज्ञानके मोक्षहो-
तानहीं "ऋतेज्ञानान्नमुक्तिः"। ऐसा श्रुतिकाप्रमाणहै ताते
आत्मज्ञानार्थ सद्गुरुकी शरणको प्राप्तहोना अवश्यकहै।
क्यों जो विनासद्गुरुके आत्मज्ञानहोतानहीं। तथाच "आ-
चार्य्यवान् पुरुषोवेद" ऐसा छां॰ उ॰ के ६ पृ॰ की १४ श्रुतिमें

प्रमाणहै ताते आत्मज्ञानार्थ अवश्य ही सद्गुरुकी शरणको प्राप्त होय ॥ हे सौम्य जब यह जिज्ञासुपुरुष श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठगुरुकी शरणकों प्राप्तहोताहै तब उसके उपदेशसे सकारणसंसारसेतरके सच्चिदानंदपदकों प्राप्तहोताहै विना श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठगुरुके मुमुक्षु मोक्षकोंप्राप्तहोतानहीं। अब इसकाअर्थ श्रवणकरो एकश्रोत्रियगुरुहोताहै एकब्रह्मनिष्ठगुरुहोताहै एक श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठगुरुहोताहै तहांजिज्ञासुका कल्याण केवल श्रोत्रियगुरुसेभी नहींहोता अरु केवल ब्रह्मनिष्ठगुरुसेभीनहींहोता क्यों जो श्रोत्रियहै सो वेदशास्त्रतो पढाहै परंतु आत्मसाक्षात्कारअनुभवसे रहितहै ताते उससे आत्मसाक्षात्कार होतानहीं। अरु जो ब्रह्मनिष्ठहै सो आत्मसाक्षात्कारअनुभववारकेतोयुक्तहै परंतु वेदशास्त्रकीयुक्तिसे रहितहै ताते उससे जिज्ञासुका संशय निवृत्तहोतानहीं। एतदर्थ इन दोनों आचार्योंसे जो कि केवल श्रोत्रिय अरु केवल ब्रह्मनिष्ठहीहैं जिज्ञासुका कल्याणहोतानहीं। अरु जो श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठआचार्यहै सो जिज्ञासुका शीघ्रही कल्याणकरताहै अर्थात् सकारणसंसारसे पारकरदेताहै॥

हे सौम्य अब इसपर एकदृष्टांत श्रवणकरो। किसी एक पुरुषको किसीप्रयोजनार्थ नदीकेपार जानाथा तब वो पुरुष नदीकिनारेजाय धीवर मल्लाह सों प्रार्थनाकरताभया हे धीवरो कृपाकरके हमको इस नदीके पार प्राप्तकरो। तहां धीवर तीनथे एक अंधा दूसरा पंगु अंधा

था तीसरा सर्वांगसम्पन्न था । तहां अंधा धीमर आप तैरने वालाथा परंतु आंखोंसे अंधाथा उसपारकामी पुरुषको पारकरनेकेअर्थ यत्नकरताभया परंतु पारपहुंचावनेको समर्थन भया अर्थात् जिस अंधेको पारदृष्ट नआवे सो औरोंको पारकैसेकरैगा ताते वो अंधाधीवर पारपहुंचावने को समर्थनहीं ॥ अरु दूसरा जो पंगु गूंगा धीवरथा सो चरण अरु वाणीसे रहितथा परंतु नेत्रकरके सम्पन्नथा सो धीवरभी उस पारकामीपुरुषको पारकरनेको समर्थ न भया परंतु उसको पार दृष्टआवताथा तथापि पंगु गूंगा होनेकेकारण पारलेजाने अरु कहनेको समर्थ नहोके आंखोंके इशारेसे पारलखावताथा अर्थात् वो पंगु गूंगा धीवरभी उसपारकामी पुरुषको पारकरनेको समर्थ न भया ॥ अरु जो तीसरा सर्वांगसम्पन्न धीवरथा सो उस पारकामी पुरुषको शीघ्र ही पारपहुंचावताभया ॥

हे सौम्य इसहीप्रकार जो श्रोत्रिय पुरुषहै सो वेदशास्त्रतोपकाहै परंतु आत्मसाक्षात्कारअनुभव उसकोनहीं ताते वो अंधे धीवरवत्है परंतु शास्त्र युक्ति रूपी वाणी अरु हाथ करके सम्पन्नहै ताते जिज्ञासुपुरुषको संशयरूपी नदीविषे डूबने नहींदेता । अरु जो आत्मसाक्षात्कार करायके अविद्यारूपीनदीके पार पहुंचावनाहै तिसको समर्थनहीं ताते केवल श्रोत्रियपुरुषसे भीजिज्ञासुका कल्याणहोतानहीं ॥ अरु जो दूसरा ब्रह्मनिष्ठपुरुषहै सो वेदशास्त्रका ज्ञातानहीं परंतु किसी बड़ेपुण्योंके समूह

संस्कारोंकरके अरु सत्पुरुष ईश्वरकी कृपाकरके उसकोंस
न्संशयद्वारा आत्मसाक्षात्कारभयाहै सो ब्रह्मनिष्ठ पंगुमूंगा
धीवरवत्है वो आपतोपारभयाहै परंतु औरोंकों पारकरनेमें
समर्थनहीं क्योंजो शास्त्ररूपीवाणी अरु युक्तिरूपीहाथ से
रहितहै ताते जिज्ञासुकों संशयरूपीनदीसों निकासनेकों स
मर्थनहीं अरु जब जिज्ञासुका संशयनिवृत्तकरनेकों समर्थ
नहीं तब निःसंशय आत्मसाक्षात्कार अनुभवकरायके अ-
विद्यारूपीनदीकेपार जिज्ञासुकों कैसेप्राप्तकरेगा अर्थात्
न करेगा ताते केवल ब्रह्मनिष्ठपुरुषसे भी जिज्ञासुकाकल्या-
णहोयनहीं ॥ अरु जो तीसरा श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठपुरुषहै सोस
र्वांगसम्पन्न धीवरवत्है उसकों शास्त्ररूपीवाणीभीहै अरु
युक्तिरूपीहाथभीहै अरु अनुभवरूपी नेत्रभीहै ताते एसा
जो सर्वांगसम्पन्न श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठआचार्यहै सो संसाररूप
संसारसे पारहोनेवाले जिज्ञासुपुरुषोंकों प्रथम संशयरूप
नदीसे निकासके पुनः आत्मसाक्षात्कारकरायके अपार
अज्ञानसमुद्रके पार प्राप्तकरताहै तातें सर्वमें समर्थ श्रोत्रि-
यब्रह्मनिष्ठहोताहै औरनहीं। एतदर्थ आत्मज्ञानकीप्राप्तिके
अर्थ श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठआचार्यकी सरणकों प्राप्तहोनायोग्य
है अरु वेदनेभीकहाहै। तथाच "तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवा-
भिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियंब्रह्मनिष्ठम्" मुंडउ०के२मुंडक
के१२ श्रुतिमें। अर्थात् जो पुरुष वेदशास्त्रतो पढाहैपरंतु अं
तःकरणविषे वैराग्यादि साधनलक्षण नहीं सो पंडितती स
का पढना केवल जीविकार्थहीहै उस श्रोत्रियपुरुषसे जि

तासुकों आत्मसाक्षात्कार होता नहीं । अरु जो केवल ब्रह्मनिष्ठ अश्रोत्रिय है सो पढ़ा नहीं ताते उससे संशयकी निवृत्ति होती नहीं अथवा उसकों उपदेश उपदेशक भाव है नहीं अथवा वो बोलता नहीं एतदर्थ भी उससे संशयकी निवृत्ति होय नहीं ताते केवल ब्रह्मनिष्ठ आचार्यसे भी जिज्ञासुका कल्याण होता नहीं । ताते जो आचार्य रूपके धारण करता सर्व वेदशास्त्रके ज्ञाता आत्मसाक्षात्कार अनुभव करके युक्त श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ गुरु है तिसकरके जिज्ञासुका शीघ्रही कल्याण होता है । अर्थात् आत्मपदकों प्राप्त होता है । तथाच "आचार्य्यवान्पुरुषोवेद" छां० उ० के प्र० ६ के १४ श्रुतिमें ॥

हे सौम्य पूर्व जो जिज्ञासु आत्मपदकों प्राप्त भये है सो सर्व श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठ आचार्यद्वारा ही भये हैं तहां नचिकेता मृत्युद्वारा श्वेतकेतु उद्दालकद्वारा जनक याज्ञवल्क्यद्वारा गार्गी अजातशत्रुद्वारा नारद सनत्कुमारद्वारा इंद्र ब्रह्माद्वारा । इत्यादि जे कोई जिज्ञासु आत्मपदकों प्राप्त भये हैं सो सर्व श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठ आचार्यद्वाराही भये हैं । अरु यावत् पर्यंत श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठ गुरु न प्राप्त होय तावत् साधनोंकों करतसंते दैवीसंपदावाले ब्रह्मनिष्ठकी संगति करनी तिस सत्संगके प्रभावसे श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठ आचार्यकी प्राप्ति होय उनद्वारा आत्मसाक्षात्कार अनुभव "सोहमस्मि" भावसे निश्चय होय परा शान्तिरूप मोक्ष तिसकी प्राप्ति होती है ॥ ताते हे लक्ष्मणजी हे सौम्य सकारणसंसारसे मोक्ष होनेके अर्थ निष्काम विहितकर्मद्वारा अंतःकरण शुद्धकर पश्चात् सं-

॥ क्रिया शरीरोद्भवहेतु राहता प्रियाप्रियौ तौ भ-॥
॥वतः सुरागिणः। धर्मेतरौ तत्र पुनः शरीरकं॥
॥पुनः क्रिया चक्रवदीर्यते भवः॥ ९ ॥

॥ क्रिया शरीरोद्भवहेतुः आहता सुरागिणः तौ प्रिया-
प्रियौ भवतः धर्मेतरौ तत्र पुनः शरीरकं पुनः क्रियाः
भवः चक्रवत् ईर्यते ॥ ९ ॥

॥यज्ञादिकर्म शरीरउत्पत्तिकेहेतु मानेहे [जबशरीरहो-
ताहेतब] रागद्वेषयुक्तहोताहै [तिसकरकेसंसारमें] सोदो-
नों प्रियअप्रियभाव होताहे [तिसकरके] धर्मअधर्मविषे
[प्रवृत्तिहोतीहै] तबतिसकरके पुनः शरीरहोताहे पुनः क्रि-
याहोतीहै [इसप्रकार] संसार चक्रवत् प्रवृत्तहोरहाहै ॥ ९ ॥

त्यासते साधनसम्पन्नहोय आत्मज्ञानकी प्राप्तिकेअर्थ
जिज्ञासुपुरुषको श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठगुरुकी शरणकोप्राप्त
होनायोग्यहै ॥–॥७॥–॥ अव जोपुरुष उक्तप्रकार आ-
त्मज्ञानको प्राप्तनहींहोने सो केवल कर्मरूपीचक्रपर च-
ढेभये भ्रमतेहैं उनका आवागमननहींछूटता सो भीश्र-
वणकरो ॥

॥भावार्थश्लोक ९ मेका॥

हे लक्ष्मणजी पूर्वकहे जे नित्यकर्मादि विहितकर्म
तिनकेकरनेसे अन्तःकरण शुद्धहोताहै तब तिसविषे ज्ञा-

धनचतुष्टयका अंकुर उपजताहै । अरु सकामकर्मकरने-
से संसारमें जन्महोताहै ताते । सकामकर्मको १। शरीरोत्प-
त्तिकाहेतु २। कहतेहैं अरु मानतेहैं ३। अरु जब संसारमें जन्म
होताहै तब पूर्व संस्कारके आश्रय रागद्वेषकरके युक्तहो-
ताहै ४। तिस रागद्वेषकेहोनेसे। सो दोनो ५। प्रिय अप्रिय।
भाव ६। होताहै ७॥ अर्थात् संसारमें स्वर्ग धन पुत्रादिकों
कों प्रियजानताहै अरु नरकदारिद्र्य शत्रु आदिकोंको अप्रि-
यजानताहै तिस प्रिय अप्रियभावसे। धर्म अधर्मविषे प्रवृ-
त्तहोतेहैं ८। तब तिस धर्म अधर्मकरके ९। पुनः संसारवि-
षे रागद्वेषसंयुक्त १०। शरीरहोताहै ११। तब फेर प्रिय अ-
प्रियभावहोनेसे १२। धर्म अधर्मरूप क्रियाहोतीहै १३। ति-
सक्रियाद्वारा फेर शरीर शरीरद्वारा फेर क्रिया इसप्रकार य-
ह। संसार १४। चक्रवत् १५। प्रवृत्तहोरहाहै १६॥ अर्थात् चक्र-
वत् यहजीव भ्रमरहेहै। जैसे कूपके रहटकी हांडियां कधी
ऊर्ध्वकों कधी अधोको भ्रमतीहै। तैसेही संसाररूपी कूपहै
भोगरूपी रहटहै वासनारूपी रज्जुहै जीवरूपीहांडियांहै अ-
ज्ञानरूपी बैलहै सो इसचक्रको भ्रमावनेवालाहै स्वर्गनरक-
रूपी अधः ऊर्ध्वहै ईश्वररूपी पुरुषहै कि जिसकी सत्ताके।
आश्रय सम्पूर्णचक्र भ्रमताहै। ताते हे सौम्य उक्तप्रकार सं-
सारमें भ्रमावनेवाला सकामकर्महीहै ॥ ९॥

॥भावार्थश्लोक ९ मेंका॥

हे लक्ष्मणजी निश्चयकरके १। इससंसारचक्रका २।
एक अङ्गतान ३। हीं ४। आदिकारणहै ५। अरु इस ६। इस-

॥ अज्ञानमेवास्य हि मूलकारणं तद्धानमेवात्र विधौ विधीयते ॥
॥ विद्यैव तन्नाशविधौ पटीयसी ॥
॥ न कर्म तज्जं सविरोधमीरितम् ॥ ९ ॥

॥ हि अस्य [संसारस्य] अज्ञानं एव मूलकारणं अत्र [मुख्यज्ञान] विधौ तद्धानं एव विधीयते तत्[अज्ञानस्य]नाशविधौ विद्यैव पटीयसी कर्म न तज्जं सविरोधं ईरितम् ॥ ९ ॥

॥ निश्चय इस [संसारका] अज्ञान ही आदिकारण है इस [मुख्यविद्याके] विधानविषे तिस अज्ञानका त्याग ही विधान किया है तिस अज्ञानको नाश करनेके प्रकारमें मुख्यविद्या ही अति-समर्थ है कर्म नहीं अज्ञानजन्य [कर्म है] ताते विद्यासे कर्मकूं सहित विरोध कहा है ॥ ९ ॥

विद्याके जो कि संसारसे मोक्षका कारण है विधानविषे ७॥ अर्थात् तिसकीप्राप्तिविषे ॥ तिसअज्ञानका त्याग ॥ निश्चय ९ विधानकिया है १०॥ अर्थात् प्रतिपादनकिया है ॥ तिसअज्ञानके नाशकरनेके प्रकारमें ११॥ अर्थात् इसजगतकामूलकारणजे अज्ञान कि जिसके अभावबिना संसारकीनिवृत्ति कदापि नहीं तिसके नाशकरनेके उपायमें ॥ एक मुख्यविद्याही १२। अतिसमर्थ है १३। यज्ञादिकर्म १४। नहीं १५। क्योंकि १ अज्ञानजन्य कर्म है १६। ताते विद्यासे कर्मको सविरोध १७। कहा है १८॥ अर्थात् कर्म अज्ञानका कार्य है ताते अपनेका-

रण अज्ञानकों नाशकरनेमें कर्म समर्थ नहीं। अरु ब्रह्म विद्याका अज्ञानसे विरोध कहाहै ताते अपने विरोधी अज्ञानके नाशकरनेमें ब्रह्मविद्या अतिसमर्थहै। एककानाश दूसरा तब करताहै जब परस्पर विरोधीहोताहै अरु कर्मसे अज्ञानका परस्पर विरोध नहीं ताते यहनिश्चयभया जो अज्ञानके नाशकरनेकों एकब्रह्मविद्याही समर्थहै औरनहीं। ताते मुमुक्षुपुरुषने अज्ञानकी निवृत्तिके अर्थ ब्रह्मविद्याका आश्रयलेना योग्यहै॥ ९॥

॥ भावार्थश्लोक १०मेंका ॥

हे लक्ष्मणजी सकामकर्मोंते। अज्ञानकी हानि कहियें नाश १। नहीं २। अरु फेर ३। रागद्वेषका भी नाश४। नहीं ५। होता ६। तिससकामकर्मसे ७। सहितदोषके ८। ९ कर्महीं ९। उदय होतेहैं १०॥ अर्थात् सकामकर्मकरनेसे अज्ञानका नाश कदापि नहींहोता अरु रागद्वेषका भी नाश नहीं होता क्योंजो जब चित्तविषे किसीप्रकारकीर कामना उपजी तब तिसकी पूर्णताके लिये कर्म करनेलगा तब जोकदापि दैवइच्छासे कर्मकी निर्विघ्नसमाप्तिसे कामना पूर्णभई तब उस कामना कर्म फल इनविषे रागउपजा तब पुनः कर्मकरनेलगा। अरु जब उस कामनाके कर्ममें किसीने विघ्नकिया तब तिसविघ्नकरताके अर्थ द्वेष उपजा तिसकरके द्वेषी अर्थात् निषिद्धकर्मविषे प्रवृत्तभया। तहां प्रथम जो रागपूर्वककर्मथा सो रजोगुणात्मकथा अरु जब द्वेषपूर्वक कर्मकरनेलगा।

॥ नो ज्ञानहानिर्न च रागसंक्षयो भवेत्ततः कर्म ॥
॥ सदोषमुद्भवेत् । ततः पुनः संसृतिरप्यवारिता ॥
॥ तस्माद्बुधो ज्ञानविचारवान्भवेत् ॥ १० ॥

॥ [कर्मतः] अज्ञानहानिः न च रागसंक्षयो न भवेत् ततः सदोषं कर्म उद्भवेत् ततः पुनः अपि अवारिता संसृतिः तस्मात् बुधो ज्ञानविचारवान् भवेत् ॥ १० ॥

॥ [कर्मोंकरके] अज्ञानकानाश नहीं पुनः रागद्वेषका-नाश नहीं होता तिसकर्मोंसे सहितदोषके कर्मही उदयहोतेहैं तिसकरके फेर निश्चय नहीं निवृत्तहोता संसारमें आवागमन तिसकारणसे बुद्धिमान् ब्रह्मविद्याकाविचारवान् होय ॥

तब सो कर्म तमोगुणात्मक भया । अरु प्रथमजो रजोगुणात्मक कामनारही सो तमोगुणात्मक परिणामहोतीभई ताते काम कर्म राग द्वेष यहसर्व आपुसमें मिलेहैं । अरु इन सर्वका मूलकारण अज्ञान अविद्याहीहै । इसहीसे अविद्याका कार्य जो सकामकर्म सो अज्ञानकों नाशकैसे करैगें अर्थात् नकरैगें । ताते हे सौम्य अज्ञान अरु रागद्वेषादिकोंका नाश सकामकर्मोंसे कदापिहोतानहीं । किंतु सकामकर्मोंसे रागद्वेषसहित कर्मही उपजतेहैं तिनकर्मोंसे फेर निश्चय शरीरउपजताहै फेर क्रियाकरताहै ताते अनिवार्य संसृतिपावताहै । अर्थात् सकामकर्मसे जन्ममरणरूपी

दुःख कदापि नहीं छूटते इसहीसे कहाहै जो सम्पूर्णकाम
कर्मादि जगत्का मूल जो अज्ञान जिसका नाश कर्मकर-
के होता नहीं तिसकारणसे बुद्धिमान् जो मुमुक्षु पुरुषहै १
सो सर्वप्रकार सावधानहोय ज्ञानविचारविषे अभ्यास-
वानहोय ॥ अब इसका अर्थसुनो जो अज्ञान किसकों
कहतेहै कर्मकिसकों कहतेहै ज्ञानकिसकों कहतेहै वि
वेकविचार किसकोंकहतेहै सो सर्व श्रवणकरो ॥

हे सौम्य अज्ञान उसकों कहतेहै जो सत्यवस्तु आत्मा
है तिसकों यथार्थ न जानना सोई अज्ञान अविद्याहै तिस
अविद्याकी दो शक्तिहै एक आवर्ण दूसरी विक्षेप तहां
आवर्ण उसकोंकहतेहैं जो अज अच्युत अनादि अखंड
असंख्य असंग सच्चिदानंद आत्माहै तिसका न भासना
अर्थात् अपनेआप वास्तवीक आत्माका अभाव भास
ना तिसकानाम आवर्णहै । अरु विक्षेप उसकोंकहते
है जो अनित्यविषे नित्यबुद्धि अशुचिविषे शुचिबुद्धि अ-
सत्यअनात्मरूपदेहादिकोंविषे सत्यात्मबुद्धि दुःखरूपभो-
गोंविषे सुखबुद्धि । इसकों विक्षेपकहतेहै । इन आवर्ण
विक्षेपरूप जो अविद्या तिसकानाम अज्ञानहै ॥ अरु क-
र्म उसकोंकहतेहै जो स्थूलसूक्ष्म देह दोनोसाथमिलके पा-
पपुण्यरूपी चेष्टाकरनी तिसकानाम कर्महै ॥ ज्ञान उसकों
कहते जो सजातीय विजातीय स्वगत यह तीन भेदहै
तहां सजातीय भेद उसकों कहतेहै मनुष्यजैसामनुष्य अ-
र्थात् मनुष्यसे जो मनुष्यका भेद तिसकों सजातीयभेद क-

हतेहैं। अरु विजातीय भेद उसकों कहतेहैं जैसे मनुष्य अरु पशुका अथवा मनुष्य वृक्षादिकोंका जो भेदहै तिसकों विजातीय भेद कहतेहैं। अरु स्वगत भेद उसकों कहतेहैं जैसे शरीर अरु हस्तपादादि अवयव अथवा वृक्ष अरु वृक्षकी शाखा इनका जो भेदहै तिसकों स्वगतभेद कहतेहैं॥ इसप्रकार जो सजातीय विजातीय स्वगत भेद तिन सर्व भेदोंसे रहित जो अभेदरूप परमशुद्ध अखंड एकरस केवलकेवलीभाव अपनेआपविषे ज्योंका त्यों अहंकाररूपी कलंकसे रहित निरहंकार निष्कलंक स्वयंप्रकाश। विज्ञानघन ज्ञानस्वरूप आत्माहै सोई आत्मा मैं हौं। इसप्रकारका जो गुरु शास्त्रद्वारा अपनेआपका जो साक्षात् अनुभव तिसकानाम ज्ञानहै। अथवा ऐसे आत्माका साक्षात्कारहोय जिसविवेकविचारसे तिसकानाम ज्ञानहै। इससे इतर सर्व अज्ञानहै ऐसा स्मृतिकाप्रमाणहै तथाच "अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्शनं। एतज्ज्ञानमितिप्रोक्तमज्ञानंयदतोन्यथा," भगवद्गीता अ० श्लोकमें॥ विचार उसकों कहतेहैं जो साक्षी आत्माहै सो स्थूल सूक्ष्म कारण शरीरोंसे ॥ अरु जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति अवस्था तीनोंसे अरु स्थूल विरल आनंद इनतीन भोगोंसे रहितहै आत्माविषे विकार कोईनहीं यहजो षट्ऊर्मी आदिविकार दीखतेहैं सो आत्माविषेनहीं। जन्म मरण देहकीऊर्मी क्षुधापिपासा प्राणकीऊर्मी शोकमोह मनकी ऊर्मी। ताते आत्मानिर्विकार सदा शुद्धहै आत्मा-

षिषे प्रपंच रंचकमात्र भी नहीं। जैसे पाषाणमें तैल नहीं जैसे ककउसमेंरसेतता नहीं जैसे सूर्यमें अंधकारनहीं तैसे ही आत्मामें प्रपंचनहीं आत्मा सदा शुद्ध बोध मुक्तस्वभावहै। वेद शास्त्र भी आत्माको "नेतिनेति" करके सर्वउपाधिसेरहित प्रतिपादनकरतेहैं। ऐसा जो चैतन्यआत्माहै सोई आत्मा मैंहों मेरेविषे जन्ममरणादिविकार कोई नहीं मैं सदा शुद्ध सर्वउपाधिसेरहित सर्वका साक्षी प्रकाशक अधिष्ठान हौं। इसप्रकार युक्तियोंकरके आत्माको विचारना तिसकानाम विचारमननकहतेहैं। अथवा ऐसा विचारकरना जो आत्मा स्थूल शरीरसे भिन्नहै जो यह स्थूलशरीर शय्या अथवापृथिवीकेऊपर पड़ारहताहै अरु आत्मा स्वप्नविषे लिंगशरीर अरु स्वप्नकेपदार्थका ज्ञाता प्रकाशक रहताहै। अरु जब सुषुप्ति अवस्थाहोतीहै तब लिंगदेह अरु स्वप्नके पदार्थ इनसर्वका कारण अज्ञानविषे अभावहोताहै तब तिस अभावअरु अज्ञानका भी प्रकाशक साक्षीआत्मा रहताहै। अरु जब पुनः जाग्रत अवस्थाहोतीहै तब तिस अवस्थाविषे अज्ञानकारणशरीरका अभावहोताहै अरु आत्माप्रकाशरूप तीनों शरीर अवस्था भोग भोक्ता का साक्षी सर्वसे पृथक् सर्वकालस्थितहै सोई सर्वका साक्षी निर्विशेष स्वयंप्रकाश आत्मा मैं हौं। इस प्रकारका जो विचारहै तिसकानाम मननविचार कहतेहैं॥ अथवा जिसचैतन्यआत्माकी सत्तापायके मन इंद्रियादिक सर्व अपने २ व्यापारविषे वर्त्ततेहैं अरु आत्माउनकोप्रा-

पादसे लिप्तहोतानहीं सदा प्रकाशरूप अपनेआपविषे ज्यों का त्यों है ॥ तथाच "सूर्य्योयथासर्वलोकस्यचक्षुर्नलिप्यते चाक्षुषैर्बाह्यदोषैः एकस्तथासर्वभूतान्तरात्मा नलिप्यते लोकदुःखेनबाह्यः" कठवल्ली उ० की ५मी वल्लीकी ११श्रुति-में। अर्थ जैसे सूर्य सर्वजीवोंके चक्षुविषे स्थितहोय सर्व-कों प्रकाशकरैहै अरु बाह्यचक्षुरूपी गोलकके सुखदुःख रूपी धर्मसों अलिप्तरहैहै। तैसेही आत्मा सर्वइंद्रियादिकों के अन्तरहोय सर्वकों प्रकाशकरैहै अरु आप सर्वकेध र्मसोंरहितहै। अथवा जैसे सूर्य अपनी किरणोंद्वारा शुभा शुभ सर्व रसजालकों शोषणकरताहै अरु आपविकारवा न् कदापिहोतानहीं। तैसे ही आत्मा इंद्रियोंद्वारा सर्वका भोक्ता अनुभवी भीहै अरु सर्वके धर्मसों निर्लेपहै। ऐसा जो सर्वसाथमिला अरु सर्वसे पृथक् स्वयंप्रकाश साक्षी कूटस्थ आत्माहै सो मैंहों इसप्रकारका जो वारंवार मनन करना तिसकानाम मननविचारकहतेहैं ॥

हे सौम्य अब अभ्यासकों श्रवणकरो स्थिति जो वस्तुहै तिसकेविषे जो मनहै तिसकानाम अभ्यासहै। तहां स्थि-ति उसकोंकहतेहैं कि जो वृत्तिहैं पांच मनकी तिसतेरहित जो मनकाहोना तिसकानाम स्थिति कहतेहैं। तहां एक प्र-माणवृत्तिहै दूसरी विपर्ययवृत्तिहै तीसरी विकल्पवृत्तिहै चतुर्थ संस्मृतिवृत्तिहै पंचम निद्रावृत्तिहै। अब इनके लक्ष-णभेद श्रवणकरो प्रमाणवृत्तिउसकों कहतेहैं जो मनकी वृत्तिका इंद्रियोंद्वारा बाह्यके घटपटादिपदार्थकों ज्योंका

सों जानना तिसकानाम प्रमाणवृत्तिहै १। अरु जो मनकीवृ-
त्ति इंद्रियोंद्वारा बाह्यके पदार्थों को विपर्यय विषयकरे है
जैसे रज्जुविषे सर्प सीपीविषे रूपा तिसकानाम विपर्यय
वृत्तिहै २ अरु विकल्पवृत्ति उसकों कहतेहैं जो शब्दकों
भी जाने अरु तिसकेअर्थकों भी जाने परंतु तात्पर्यउस-
का ज्योंकात्यों नजाने जो वृत्ति तिसकानाम विकल्पवृत्ति
है अर्थात् किसीने कहा कि 'पुरुषःचैतन्यरूपोसि' पु-
रुषका चैतन्यरूपहै यहजो शब्दभया तिसकों भीजाना
अरु तिसके अर्थकों भी जाना जो एकपुरुषहै तिसका चै-
तन्यस्वरूपहै परंतु यह यथार्थ न जाना क्यों जो यहता-
त्पर्य शास्त्रका नहीं जो एक पुरुषहै तिसका चैतन्यरूपहै
उस शास्त्रका तात्पर्य यहहै जो चैतन्यरूपहीपुरुषहै।
ऐसा तात्पर्य न भासे जिसवृत्तिकरके तिसकानाम विक-
ल्पवृत्तिहै ३। अरु संस्मृतिवृत्ति उसकोंकहतेहैं जो कि पूर्व
व्यतीतकालमें अनुभवकियाहोय जिसका तिसकाजो
स्मरणद्वारा मनन किंवा कथन होय जिसवृत्तिकरके ति-
सकानाम संस्मृति वृत्तिहै। अर्थात् कोई कहतेहैं कि अ-
मुक संवत् में देवदत्तकों हमने काशीमें देखाथा अरु
उसकेसाथ संभाषणादि व्यवहार भी भयाथा। इसप्रका-
र व्यतीतकालके अनुभवका मनन कथनहोय जिसवृ-
त्तिकरके तिसकानाम संस्मृतिवृत्तिहै ४। अरु निद्रावृ-
त्ति उसकोंकहतेहैं कि ज्ञानके अभावकों आश्रयकरे
जो वृत्ति तिसकों निद्रावृत्तिकहतेहैं। अर्थात् जाग्रत

स्वप्नका अभावकरनेवाला जो तमोगुण सो है विषय जिसवृत्तिका सोकहिये निद्रावृत्ति ५॥ हे सौम्य इनवृत्तियोंसेरहित होयके मन जब आत्मस्वरूपकी ओर अंतर्मुख धाराप्रवाहवत् चले। अर्थात् अफुरताके अभ्यासविषे धाराप्रवाहवत् मनकी जो स्थितिहोनी तिसकानाम स्थितिहै। ऐसी स्थिति के पावनेकेअर्थ यत्नहै तिसकानाम आत्म अभ्यास कहतेहैं॥ सो अभ्यास किंवा अभ्यास दो प्रकारकाहै तहां एक अल्परूप दूसरा दृढभूमिकारूप। तहां अल्पउसकों कहतेहैं जो किसी एक कालविषे आत्मविचारपूर्वक वृत्तिके अवरोध द्वारा अभ्यसकरना। अरु दृढरूप अभ्यास उसकों कहतेहैं जो श्रद्धासंयुक्त चिरकालपर्यंत कालके व्यवधानसेरहित अखंड आत्माध्यासकरताहै तब दृढअभ्यासहोताहै तिसदृढभूमिकारूप अभ्यासकेअर्थ यत्नहै तिसकानाम अभ्यास कहतेहैं॥ हे सौम्य इस प्रकार कहा जो अभ्यास विचार ज्ञान कर्म अज्ञान सो इन सर्वकों विचारके मुमुक्षुपुरुष अज्ञान अरु तज्जन्यकामकर्मकों त्यागके मोक्षकेअर्थ विज्ञानके विचार अभ्यासविषे अभ्यासवान्होय

हे सौम्य यहजो आत्मज्ञानहै सो सूर्यरूपहै सो अज्ञानअंधकारको सहितकर्मके अभावकरदेताहै। अरु कर्मकरके अज्ञानकानाशहोतानहीं। जैसे उष्णताकरके अग्निकाअभावहोतानहीं जैसे शीतलताकरकेजलका अभावहोतानहीं। तैसे ही कर्मकरके अज्ञानका अभाव

होतानहीं क्यों जो परस्परकारणकार्यरूपहैं विरोधीनहीं। अरु एककानाश दूसरानहीं करताहै जब परस्परविरोधी होताहै सोतो अज्ञान अरु कर्मका परस्परविरोधनहीं। ताते अज्ञानकों नाशकरनेके अर्थ कर्म समर्थनहीं। जैसे नक्षत्रगण रात्रिविषे अंधकारके आश्रयतेंप्रकाशवान् दीखतेहैं रात्रिविना अभावरूपहोतेहैं अरु नक्षत्रगण असंख्यात प्रकाशवान्हैं अरु रात्रि एकहै परंतु सर्वनक्षत्रगण मिलके भी रात्रिके अभावकरनेकों समर्थनहीं क्यों जो नक्षत्रोंका प्रकाशवान् दीखना रात्रिमें अंधकारके आश्रयहै एतदर्थ रात्रिकेनाशकरनेमें समर्थनहीं अरु एकजोसूर्यहै सो रात्रिकों अंधकारसहित अभावकरताहै तिसकेसाथही अंधकारके आश्रय प्रकाशवान् दीखनेहारे नक्षत्रगण तिनकाभी अभावहोजाताहै। हे सौम्य तैसे ही अविद्यारूपरात्रिमें अज्ञानअंधकारके आश्रय यज्ञ अग्निहोत्रादिकर्म प्रकाशवान् दीखतेहैं परंतु अज्ञानअंधकारको अभावकरनेविषे समर्थनहीं क्यों जो कर्मरूप नक्षत्रोंका । प्रकाशवान् दीखनाहै सो अज्ञानरूपअंधकारके ही आश्रयहै। ताते जिसके आश्रय कर्म प्रकाशवान् होतेहैं तिसके नाशकरनेकों समर्थनहीं। अरु जब आत्मविज्ञानरूपीसूर्य उदयहोताहै तब अविद्यारूपीरात्रिके अज्ञानरूप अंधकारको सहितकर्मरूप नक्षत्रगणोंके अभावकरताहै। ताते अज्ञानकेनाशकरनेमें एक आत्मज्ञानही उपायहै अन्य नहीं॥

॥ ननु क्रिया वेदमुखेन चोदिता तथैव विद्या ॥
॥ पुरुषार्थसाधनम् । कर्त्तव्यता प्राणभृतः प्रचो- ॥
॥ दिता विद्या सहायत्वमुपैति सा पुनः ॥ ११ ॥

॥ हे प्रभो क्रिया वेदमुखेन चोदिता [यथा] पुरुषार्थसाधनम् विद्या [वेदेन चोदिता] तथैव प्राणभृतः कर्त्तव्यता प्रचोदिता [यतः] पुनः सा विद्या सहायत्वं उपैति ॥ ११ ॥

॥ हे स्वामीजी क्रिया वेदवाक्यकरके प्रतिपादित है [अरु जैसे] मोक्षका साधन ब्रह्मविद्या [वेदनेकहाहै] तैसेही प्राणधारियोंको कर्त्तव्यताभी प्रतिपादनकियाहै [अरु] पुनः सो क्रियाभी ब्रह्मविद्याकी सहायताको प्राप्त होती है ॥ ११ ॥

। तथाच "नान्यः पंथा विमुक्तये", "ऋतेज्ञानान्नमुक्तिः", ज्ञानादेवतु कैवल्यं", ज्ञानंलब्ध्वापरां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति" इत्यादि श्रुतिस्मृतिके प्रमाणसे। ताते हे लक्ष्मणजी जो मुमुक्षुपुरुष है सो संसारमें जन्ममरणरूप संसरणसे छूटनेके अर्थ अज्ञानजन्य कर्मको त्यागके आत्मज्ञानके विचाराभ्यासविषे पुरुषार्थवान् होय ॥ १० ॥

॥ भावार्थश्लोक ११ में का ॥

हे प्रिये पार्वती हे सौम्य उक्तप्रकारसे जब भगवान् रामजीने मोक्षके अर्थ कर्मका निराकरणकरके ज्ञानकी प्रशंसा किया तब जिज्ञासु लक्ष्मणजी वादी होयके कहते भये ॥

हे स्वामीजी हे प्रभो आप क्रियाकों निषेधकरतेहो अरु ज्ञानकी प्रशंसा करतेहो सो अस्तु १ परंतु जिसक्रियाकों आप निषेधकरतेहो सो क्रियाभीतो २ वेदकेवाक्योंकरके ३ आज्ञाकी गईहै जो कर्मकरो ४। तथाच "कुर्व्वन्नेवेह कर्म्माणि जिजीविषेच्छतं समा, उदितेसूर्य्येप्रातर्जुहोति, अग्निहोत्रं जुहुयात्, अहरहः संध्यामुपासीत"॥ इत्यादि श्रुतिस्मृतिकेवाक्यसे क्रियाकर्त्तव्यभी प्रतिपाद्यहै। अरु हे स्वामीजी जैसे मोक्षसाधन ५। ब्रह्मविद्यावेदनेप्रतिपादनकियाहै ६। तैसेही ७। प्राणधारीजेमनुष्यहैंतिनकों ८। कर्त्तव्यताभी ९ वेदनेप्रतिपादनकियाहै १०॥ कर्त्तव्यताकहियेवेदकरकेप्रतिपाद्यजे धर्मरूपक्रियाहैं तिसका करना सो भी वेदहीने कहाहै। ताते विद्या अरु क्रिया यह दोनों वेदनेही प्रतिपादनकिये हैं। अरु पुनः ११। वेदोक्तजोक्रियाहै सो करीभई क्रियाभी १२। ब्रह्मविद्याकी सहायताकों १३ प्राप्तहोतीहै १४॥ अर्थात् सहायताकरतीहै। अर्थयह। जो कर्मके करनेसे अंतःकरणशुद्धहोय ज्ञान उपजताहै। एतदर्थ मुमुक्षु पुरुषकों ब्रह्मविद्याकी सहायताके अर्थ। क्रियाभीकरनी योग्यहै॥ हे सौम्य अब क्रियाकेत्यागनेमें जो दोषहै सो भी लक्ष्मणजी कहतेहैं॥ ११॥

॥ भाषार्थश्लोक १२ मेंका॥

हे स्वामीजी कर्मोंकेनकरनेविषे १। श्रुतिशास्त्रोंने २। भी ३। दोष ४। कहाहै ५॥ अर्थात् जब पुरुष कर्मोंका त्यागकरताहै तब वेदशास्त्र उसकों पातकी कहतेहैं।

॥ कर्माकर्तौ दोषमपि श्रुतिर्जगौ तस्मात् सदा ॥
॥ कार्यमिदं मुमुक्षुणा । नैव तु स्वतंत्रा ध्रुवकार्य ॥
॥ कारिणी विद्या न किंचिन्मनसाप्यपेक्षते ॥ १२ ॥

[हे प्रभो] कर्माऽकर्तौ श्रुतिः अपि दोषं जगौ तस्मात् मुमुक्षुणा सदा इदं कार्यं न तु विद्या स्वतंत्रा ध्रुवकार्यकारिणी किंचित् मनसा अपि न अपेक्षते [किंतु अपेक्षते] ॥ १२ ॥

॥ हे स्वामी] कर्मके न करनेमें वेदशास्त्र भी दोष कहतेहैं तिस कारणसे मुमुक्षुपुरुषको नित्यही यह वेदोक्त अग्निहोत्रादि कर्म कर्तव्यहै [अरु बिना कर्मोंके] नहीं है विद्या स्वतंत्र मोक्षकरनेवाली [तातें] क्या ब्रह्मवेत्ता ज्ञानवान् भी [कर्मकी] अपेक्षा नहींकरते [किंतु करतेहैं] ॥ १२ ॥

क्योंकि वेदविषे जो वर्णाश्रमके योग्य कर्म कहेहैं तिनको नहीं करता तब वो पुरुष पातकी होताहै । तथाच । एकाहं जपहीनस्तु संध्याहीनो दिनत्रयम् । द्वादशाहमनग्निश्च शूद्र एव न संशयः ॥ तस्मान्न लंघयेत्संध्यां सायंप्रातः समाहितः । उल्लंघयति यो मोहात्स याति नरकं ध्रुवम् ॥ त्र्यहं संध्याविहीनो द्वादशाहं निरग्निकः । चतुर्वेदधरो विप्रः शूद्र एव न संशयः ॥ हे प्रभो इस प्रकार वेदशास्त्रोंके प्रमाणसे कर्मत्यागी पुरुष पातकी होताहै तिसकारणसे ६ । मुमुक्षुपुरुषको ७ । नित्यही ८ । यह वेदोक्त अग्निहोत्रादि कर्म ९ । करने योग्यहैं १०

अरु कर्मोंसे रहित नहीं ११। है १२। विद्या १३। स्वतंत्र १४। मो
क्षरूपकार्यकरनेवाली १५॥ अर्थात् बिनाकर्मोंकीसहाय-
ताके केवलब्रह्मविद्या मोक्षकरनेको समर्थनहीं क्योंजोक-
र्मोंके कियेबिना अंतःकरणशुद्धहोतानहीं अरु तिसकीशु-
द्धिबिना ज्ञानउपजतानहीं ताते मुमुक्षुको सदाही कर्मक-
रनायोग्यहै त्यागनायोग्यनहीं अरु हेस्वामीजी क्या १६।
ब्रह्मवेत्ता ज्ञानवान् १७। भी १८। कर्मकी नहीं १९ अपेक्षाकर-
तेसोनहीं किंतु अपेक्षाकरतेहैं २०॥ एतदर्थ मुमुक्षुपुरुष
को कर्म अवश्यकरनायोग्यहै त्यागनायोग्यनहीं॥ १२॥

॥भावार्थश्लोक१३मेंका॥

हे स्वामीजी निश्चयकरके १। नहीं है २। सत्यस्वर्गादि
फलरूपकार्यभीजिसका ३।४। ऐसेजे यज्ञहैं ५। जैसे ६। सो
भी ७। अन्यजे ८। होता अध्वर्यु आदिकारकसामग्रीतिन
की अपेक्षाकरके ९। प्रकाशतेहैं १०। जो इसस्थानपर
यज्ञविधानहोताहै। अथवा अपनी सर्वसामग्रीरूप का-
रकआदिकोंकेसहितहोनेसे यज्ञ अपने फलको प्रकाशता
है अर्थात् देखावताहै वा प्राप्तकरताहै॥ हे स्वामीजी
तैसेही ११। ब्रह्मविद्या १२। वेदकेमहावाक्योंकरके १३। प्र
तिपादनकियाहै १४। सो कर्मोंकरकेसहित १५। ही १६।
मोक्षकेअर्थ १७। विशेषकरके प्रतिपादनकियाहै अरु
करतेहैं १८॥ अर्थात् वेदने जो मोक्षकेअर्थ ब्रह्मविद्या
प्रतिपादनकियाहै सो कर्मोंकरकेसहितही कियाहै ताते
ज्ञान अरु कर्म इनके समुच्चयसेवनेसे मोक्षहोताहै वि-

॥न सत्यकार्योपि हि यद्वदग्निः प्रकाशतेऽन्या-॥
॥नपि कारकादिकान्। तथैव विद्या विधितः॥
॥प्रकाशितै विशिष्यते कर्मभि रेव मुक्तये॥ ११॥

॥न हि सत्यकार्यः अपि [तादृशो] अग्निः यद्वत् अपि अन्यान् कारकादिकान् [अपेक्ष्य] प्रकाशते तथा एव विद्या विधितः प्रकाशितैः कर्मभिः [सह] एव मुक्तये विशिष्यते॥

॥नहीं है निश्चयकरके सत्यस्वर्गादिफलरूप कार्य जिसका [ऐसे जो] अग्नि जैसे सोभी अन्य सामग्रियोंकी— [अपेक्षाकरके] प्रकाशतेहैं। तैसे ही ब्रह्मविद्या वेद वाक्यसे प्रकाशितहै [सो] कर्मोंकरके [सहित] ही मोक्षकेअर्थ विशेषप्रतिपाद्यहै ॥ ११ ॥

ना कर्मके केवलब्रह्मविद्या मोक्षकरनेको समर्थनहीं॥ अथवा दूसराअर्थ। निश्चयकरके नहीं है सत्यरूप नाम रूपात्मक कार्य जिसका ऐसाजो आत्मा सो आकाश- वत् निश्चलहै। अर्थात् सर्वविकारोंसे रहित सर्वत्र आ- काशवत् व्याप्तहै। अरु सर्व कार्य कारणका प्रकाशक है। अरु कर्तव्यतादिकोंका अरु अंतःकरणकी वृत्ति- योंका भी प्रकाशकहै। सो भी बिना अहंवृत्तिके संबंध के आत्माका अस्तित्वभाव अरु प्रकाशकभाव होता न- हीं जब अहंवृत्तिरूपीतमसम्बंध आत्माकेसाथ होताहै

तब आत्माविषे व्यापकभाव अरु प्रकाशकभावहोताहै। हे स्वामीजी तैसेही वेदने मोक्षके अर्थ जो ब्रह्मविद्या कही है सो कर्मोंके संयुक्तही कही है। कर्मसंयुक्तजो विद्याहै सो मोक्षकाकारण विशेषकरकेकहीहै विनाकर्मके केवलविद्या मोक्षकरनेकों समर्थनहीं। ताते हे प्रभो विद्या अरु कर्मोंके समुच्चयविना मोक्षनहीं होता ॥ १३ ॥

॥ भावार्थ श्लोक १४ मेंका ॥

हे पार्वतीजी हे सौम्य इस उक्तप्रकारजब लक्ष्मणजीने-११-१२-१३-तीनश्लोककरके मोक्षकेअर्थ ज्ञान कर्मका समुच्चय प्रतिपादनकिया तब समुच्चयके खंडनकर्त्ता जो सिद्धांती रामजी सो उत्तर देतेभये। हे लक्ष्मणजी कोई एकजैव्यनिरेकवादीहैं सो १। ऐसा १। कहतेहैं। अर्थात् कोईएकजैव्यनिरेकवादि पूर्वमीमांसकहैं सो विशेषकरके क्रियाहीकों प्रतिपादन करतेहैं कि क्रियाही मुमुक्षुकों मोक्षप्राप्तकरेगी। जैसे अपने कर्मोंकरकेही इनमनुष्योंको शुभ अशुभ गतिकी प्राप्तिहोतीहै। हे सौम्य इसपर मीमांसक दृष्टांत कहतेहैं कि जैसे कूपकाखोदनेवाला अधोकोंजाताहै अरु भीतका बनावनेवाला ऊर्ध्वको जाताहै। तैसे ही यज्ञादिक शुभकर्मोंका १ करनेवाला स्वर्गलोककोंजाताहै अरु हिंसादि अशुभ १ कर्मोंका करनेवाला नरकको जाताहै। ताते इन मनुष्योंकों शुभाशुभ दुःख सुखकादाताकर्मही है। ताते मुमुक्षुकों मोक्षकेअर्थजो विद्याहै सो भी कर्मके संयुक्तहीहै ताते

॥केचिद्वदन्तीति वितर्कवादिन एतस्मै दुष्टं हि वि-॥
॥रोधकारणात्। देहाभिमानादपि वर्तते क्रिया॥
॥विद्या गताहंकृतितः प्रसिद्धति॥ १५॥

॥केचित् वितर्कवादिनः इति वदंति तत् अत्र विरोध-
कारणात् दुष्टं हि [कथ्यते] स क्रिया देहाभिमानात्
अपि वर्तते विद्या गताहंकृतितः प्रसिद्धति॥१५॥

॥कोईएक वितर्कवादीयोंक ऐसा कहतेहै सो इसमोक्ष
मार्गविषे विरोधकारणसे दुष्ट ही [कहजाताहै] अरु
सो क्रियां देहाभिमानकरके ही होतीहै अरु ब्रह्मवि
द्या दूरभयेअहंकारके प्राप्तहोतीहै॥ १५॥

मोक्षार्थ भी कर्मकरनायोग्यहै। हे लक्ष्मणजी इसप्रकार
मीमांसक प्रतिपादनकरतेहैं। सो ५। इसमोक्षमार्गविषे
६। यथार्थनहीकहते क्योंजो श्रुतिने "ज्ञानादेवतुकैवल्यं,
नान्यःपंथाविमुक्तये"। ऐसाकहाहै जो ज्ञानसेही मोक्षहोताहै
अन्यमार्गमुक्तिकानहीं। अरु कर्मसे मोक्षहोतानहीं ऐसा
भी वेदकाप्रमाणहै तथाच "नकर्मणा नप्रजया धनेन"।
ताते हे सौम्य मीमांसक जो मोक्षकेअर्थ विशेषकरके १
क्रियाहीकों प्रतिपादनकरतेहैं सो उनकाकहना वेदसे २
विरुद्धहै। तिनविरोधकेकारणसे ३। उनकाकथन दूषित
होईहै। हे लक्ष्मणजी जिसक्रियाको वितर्कवादी भी४

मांसक प्रतिपादनकरतेहैं। सो क्रिया२०। देहके अभिमा
नकरके २१। ही २२। प्रवृत्तहोतीहै २३॥ अर्थात् जब पुरुष
कर्ममें प्रवृत्तहोताहै तब प्रथम संकल्पही देहाभिमानस
हित करताहै जो अमुक ब्राह्मणकुलोत्पन्नो ऽमुकगोत्रो
ऽमुकनामाऽहं अमुककार्यसिद्ध्यर्थं अमुककर्माऽहं
करिष्ये। ताते देहादिक अनात्माविषे आत्माभिमान पू-
र्वक ही क्रियाप्रवृत्तहोतीहै॥ अरु आत्मसाक्षात्कारजि
विद्याहै २४। सो अनात्मअभिमानके अभावभये २५। २
प्राप्तहोतीहै २६॥ अर्थात् जब मुमुक्षुपुरुष आदिमें गुरु
के मुखसे महावाक्योंद्वारा आत्माको श्रवणकरनेलगता
है तब गुरुकहताहै जो हे सौम्य तू देहनहीं यह जो स्थू-
ल सूक्ष्मकारण तीनदेह अरु जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति ती-
न अवस्था इत्यादि सर्वसे भिन्न सर्वका साक्षी नित्य शु-
द्ध ज्ञानस्वरूप आत्माहै "स आत्मा तत्त्वमसि" सोई आ-
त्मा तू है। हे लक्ष्मणजी हे सौम्य इसप्रकार गुरुकेमु-
खसे जब मुमुक्षू श्रवणकरताहै तब जानताहैकि मैं
देहादि सर्वसे पृथक् सर्वका साक्षी नित्य आत्माहौं।

हे सौम्य इसप्रकार जब मुमुक्षुको परोक्षज्ञानहो-
ताहै तब देहाभिमान नष्ट होजाताहै। देहादि अनात्म
विषयरूप अहंकारके अभावभये पीछे मनन निदि-
ध्यासनद्वारा आत्मसाक्षात्काररूपिणी ब्रह्मविद्या प्रा-
प्तहोतीहै। ताते परस्परविरोधी जे ज्ञान अरु कर्म ति-
नके समुच्चयसे मोक्षकहनेवाले जे मीमांसक तिनको

॥ विशुद्धविज्ञानविरोचनाञ्चिता विद्याऽऽत्मवृत्ति ॥
॥श्चरमेति भण्यते। उदेति कर्माऽखिलकारका- ॥
॥दिभि र्निहन्ति विद्याऽखिलकारकादिकम् ॥ १५ ॥

॥ विशुद्धविज्ञानविरोचनाञ्चिता चरमा आत्मवृत्तिः विद्या इति भण्यते। कर्म अखिलकारकादिभिः [सह] उदेति विद्या अखिलकारकादिकान् निहन्ति ॥ १५ ॥

॥ विमलविज्ञानप्रकाशअनुभवयुक्त चरमा आत्मविषै वृत्ति [तिसको] विद्या ऐसा कहतेहैं [अरु] कर्म । सम्पूर्णकारकादिकोंके [सहितहुआ] उदयहोताहै [अरु] ब्रह्मविद्या सम्पूर्णकारकादिकोंकोनाशकरतीहै ॥ १५ ॥

श्रुति युक्ति अनुभवसे विरोधकरनेकेकारण इस मोक्ष-मार्गविषै कुछ कहनाहै ताते उनकेवाक्यमानके मुमुक्षुको समुच्चयकरनायोग्यनहीं क्योंकि कर्मअरुज्ञानके समुच्चयसे मोक्षहोतानहीं ॥ १५ ॥

॥भावार्थश्लोक१५मेंका॥

हे लक्ष्मणजी पूर्वकहेप्रकार परोक्षज्ञानहोनेहीसे देहादिक अनात्मविषयक जो अहंकार तिसका अभावहोताहै। अरु जब मनन निदिध्यासनद्वारा आवरणविक्षेप रूपी मलिनतासेरहित। विमलविज्ञानप्रकाश होताहै जिनसेरीसेजे उपनिषद् वेदान्तवाक्य तिनके बारंबारमनन

विचार करके प्राप्तभई जो अनुभवयुक्त १। चरमा २॥
अर्थात् जिससेपरे वृत्तिका वृत्तित्व नहीं तातें चरमा किंवा
अन्तिमा। आत्मवृत्ति ३॥ अर्थात् अहंब्रह्मास्मिरूपीब्रह्मा
कारांतःकरणवृत्ति तिसको विद्वान्। विद्या ४। ऐसा ५। कह
तेहैं ६॥ अर्थात् उपनिषद् वेदान्त महावाक्योंके श्रवण म
नन अभ्याससे प्राप्त भई जो अहंब्रह्मास्मिरूपी अंतःकरण-
की अंतिमावृत्ति कि जिसकेआगे वृत्तिकावृत्तित्व रहना न-
हीं सो ब्रह्माकारवृत्तिरूपी विद्या सो सम्पूर्ण कर्मकारकादि
कोंके अभावभये पश्चात् होनहारहै एतदर्थ इस ब्रह्मा-
कारवृत्तिको चरमा विशेषणकरके कहतेहैं सो ब्रह्माका
रवृत्तिरूपी विद्या कैसीहै कि न तो किसी सत्कर्मोंकर-
के बढ़तीहै अरु न किसी असत् कर्मोंकरके घटतीहै।
तथाच "स न साधुना कर्मणा भूयान्नो एवासाधुना कनी
यान्"। बृ॰उ॰के अ॰६ ब्राह्मण ४ में। तातें इस ब्रह्माकार
चरमावृत्तिको विद्या कहतेहैं। हे लक्ष्मणजी इस मोक्ष-
मार्गविषे दूसरे कथनजिनका ऐसेजे पूर्वमीमांसक सो
मोक्षकेअर्थ जिसकर्मको प्रतिपादनकरतेहैं सो कर्म ७।
अपनेकारकादिकोंकरके सहितही ८। उदयहोतेहैं ९॥ अ-
र्थात् जब पुरुष कर्मकरताहै तब देहाभिमानसहितही हो-
ताहै क्योंकि जबदेहकोंआत्मामानताहै जो ब्राह्मणादि अ-
मुक वर्णोंमें मैं उत्पन्न भयाहौं अरु अमुक हमारा आश्र-
महै तातें हमकों अपनेवर्णाश्रमयोग्यकर्म अवश्य क-
र्त्तव्यहै इनके नकरनेमें प्रत्यवायहै तातें सर्वथा कर्मकर

नायोग्यहै। इसप्रकार देहकेजे वर्णाश्रमधर्म तिनकों अ-
ज्ञानकेआश्रय अपनेविषेमानके कर्ममेंप्रवृत्तहोताहै ताते
हे लक्ष्मणजी कर्मजो उपजतेहैं सो अनात्मअहंकारादि कार-
कोंकेसहितही उपजतेहैं। अरु जो आत्मसाक्षात्कार वि-
षयिणीवृत्तिरूपा विद्याहै सो १०। सम्पूर्णकारकादिकोंके
सहितकर्मका ११। नाशकरनेवालीहै १२॥ अर्थात् जो आ-
त्मसाक्षात्कारविषयिणी वृत्तिरूपा विद्याहै सो अपनीपूर्वा-
वस्थामें जबकि आचार्यसे तत्त्वमस्यादि महावाक्यको श्र-
वणकरके परोक्षज्ञानयुक्तहोतीहै तिसही अवस्थामें क्रिया
के कारकादिक जे अनात्मधर्म अहंकारादि तिनकानि-
षेधकरतीहै। अरु जब मनन अभ्यासद्वारा अपरोक्षआत्म
साक्षात्अनुभवयुक्त शुद्धविज्ञानरूपाहोतीहै तब सम्पूर्णक-
र्म अरु तिनके कारक देहाभिमानादि अरु तिनका मूल अ-
ज्ञान तिनसर्वकों जो कि मोक्ष मार्गविषे विरोधीहै नाश
करतीहै॥ ताते हे सौम्य देहाभिमानके सहित उदयहोने-
हार क्रिया अरु देहाभिमानकों नाशकरनेवाली विद्या ति-
नका समुच्चयबनतानहीं। ताते बुद्धिमान् जो मुमुक्षुहै सो
सम्पूर्णअनात्मधर्मकों त्यागके आत्मविचार परायणहोय
सोई आगेके श्लोकसे प्रतिपादनकरतेहैं॥ २५॥

॥भावार्थश्लोक२६का॥

हे लक्ष्मणजी प्रथमकही जे आत्मसाक्षात् विज्ञानवृ-
त्तिरूपा विद्या सो किसी सत्कर्मं देवीसम्पदाकरके बढ़ती
नहीं अरु किसी असत्कर्म आसुरीसम्पदाकरके घटतीनहीं

॥तस्मात्त्यजेत्कार्यमशेषतः सुधी र्विद्याविरोधा-॥
॥न्न समुच्चयो भवेत् । आत्मानुसंधानपरायणः॥
॥सदा निवृत्त सर्वेंद्रियवृत्तिगोचरः ॥ १६ ॥

॥तस्मात् सुधीः अशेषतः कार्यं त्यजेत् [कस्मात्] विद्याकर्मणोः विरोधात् समुच्चयो न भवेत् [अस्मान्मुमुक्षु] निवृत्तसर्वेंद्रियवृत्तिगोचरः सदा आत्मानुसंधानपरायणो भवेत् ॥ १६ ॥

॥ताकारणसे श्रेष्ठबुद्धिमान कुछभीअवशेषनरखके कियोंको त्यागदेवे [किसकारणसेकि] विद्या अरुकर्मकापरस्पर विरोधहोनेसे समुच्चय होतानहीं [इसकारणसेमुमुक्षुपुरुष] अपनीसर्वइंद्रियोंकीवृत्तियोंकोविषयोंसे हटाय सदा आत्माकेविचारअभ्यासपरायणहोय ॥ १६ ॥

हे लक्ष्मणजी इसकारणसे १। श्रेष्ठबुद्धिमान् जोमुमुक्षुपुरुषहैसो २। निःशेषकरके ३। देहादिअनात्मअहंकारादिकोंके आश्रयहोनहार जे सम्पूर्णकामकर्मादितिनको ४। त्यागदेवे ५। किसकारणसेकि ब्रह्मविद्याअरु कर्मोंकापरस्परविरोधहै ६। तातें इनकासमुच्चय ७। नहीं ८। होता ९। अर्थात् समुच्चयकहिये एकहीकर्त्ताकरके एककालमेंहोय सो ब्रह्मविद्या अरु कर्मोंका परस्परविरोधकारणसे समुच्चयहोतानहीं। जैसे प्रकाश अरु तमका सत्य अरु अस-

त्व इनका परस्पर विरोधकारणसे समुच्चय नहींहोता तैसे-
ही ब्रह्मविद्या अरु कर्मका समुच्चयनहींबनता। तातें हे सौ-
म्य बुद्धिमान जे मुमुक्षुपुरुषहैं विद्याके विरोधीजे कामका-
मादि तिनसर्वको त्यागके। अपनी चक्षुआदि सर्वइंद्रियों
की वृत्तिको विषयोंसे हटाय १०। सर्वदाकाल ११। आत्मा
के अध्यात्मविचारपरायणहोय॥ १२॥–॥ १६॥

॥ शिष्यउवाच ॥

हे गुरो आप आज्ञाकरतेहो कि ज्ञानवान् जो विवेकीहै
कि जिसको आत्मसाक्षात्कार भयाहै सो पुरुष सम्पूर्णक-
र्मको त्यागदे सो हे प्रभो जब मुमुक्षुकरके कर्म त्यागने
ही योग्यहैं तब वेद कर्मोंको क्यों प्रतिपादनकरतेहैं जो
पुरुष अपने वर्णाश्रमयोग्य क्रियाकोकरे। तथाच "कु-
र्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः एवंत्वयिनान्य
थेतोस्तिनकर्मलिप्यतेनरे"॥ ईशावास्य उपनिषद्का दूसरा
मंत्र। अर्थ जो कदापि सौ वर्ष भी जीवनेकी इच्छाकरे अ-
थवा जीवतारहै तो भी अपने कर्मोंको करता ही रहै इस
से इतर पुरुषको कर्मबंधनकी निवृत्तिका अन्य उपाय
कोईनहीं॥ तातें हे भगवन् वेदतो कर्मको प्रतिपादनक-
रतेहैं अरु आप कर्मका त्यागकरना कहतेहो सो इस-
विषयमें जैसाहोय तैसा हमारे संशयकी निवृत्तिकेअर्थ
आप कृपाकरके कहिये॥

॥ गुरुरुवाच ॥

हे सौम्य जिसपुरुषको केवल एक मोक्षहीकी काम-

नाहै और सर्वकामनाका अभावहै ऐसाजो मुमुक्षुपुरुषहै
तिसकों कर्म कर्त्तव्यनहीं क्यों कि कर्मके करनेसे जन्ममरण-
छूटतेनहीं जो पुरुष यथाविधि कर्मकरते हैं सो अंतमें श-
रीरत्यागके अनन्तर ब्रह्मलोकमेंजाय अपने कर्मानुसारफल
भोगकों भोगके अपने पुण्योंका क्षयहोनेसे गिरायदिये-
जातेहैं। अर्थात फेर जन्मपावतेहैं उनका आवागमनछूटता
नहीं। तथाच "आब्रह्मभुवनाल्लोकाःपुनरावर्त्तिनोऽर्जुन ॥"
भगवद्गीता अ०८ के १६ श्लोकमें। तातें हे सौम्य केवलमो-
क्षेच्छुपुरुष जिसकों कि ब्रह्मलोकादि तृणपर्यन्त सर्वसंसा-
रसे दृढवैराग्यभयाहै तिस बुद्धिमानपुरुषकों कर्मकर्त्तव्य
नहीं क्यों कि वेदने कर्मकरके मोक्ष कहानहीं। तथाच न
कर्मणा न प्रजया न धनेन। कैवल्य उ०विषे। तातें मोक्ष
कामीमुमुक्षुकों कर्मकर्त्तव्यनहीं। अरु जो स्वर्गादिसंसा-
रके भोगोंकी कामनावालेपुरुषहैं तिनकों सर्वप्रकार वेदो-
क्तकर्मकरनायोग्यहै। वेदने जो कर्मकर्त्तव्य कहाहै सो स-
कामी पुरुषकेअर्थकहाहै। तथाच "स्वर्गकामोयजेत, धन
कामोयजेत, पुत्रकामोयजेत, पशुकामोयजेत" इत्यादि। जो
सकामीपुरुषका परमप्रयोजन स्वर्गादिसुखकी प्राप्तिहै सो
कर्मोंके करनेसेही प्राप्तहोगा। तथाच "यत्कर्मकुरुतेतद-
भिसम्पद्यते, 'स्वर्गलोकाअमृतत्वंभजंते" इत्यादि बृहदार-
ण्य कठादि उ०विषे। तातें स्वर्गादिसुखप्राप्तिकी कामनावा
लेपुरुषकों वेदोक्तकर्म अवश्यकरनाचाहिये॥ अरु जिस
पुरुषका अंतःकरणअशेषशुद्ध नहीभया अरु इच्छाउस-

कों आत्मलाभकीहै परंतु संसारसे निःशेषवैराग्यभयानहीं तिसपुरुषकों केवल जो वेदोक्त सात्विकी विहितकर्महैं सोनिष्कामहोय श्रद्धासंयुक्त ईश्वरार्पणकरै तिसकरके अंतःकरणशुद्धिका लक्षण जो संसारसे अशेषवैराग्य सो जब अंतःकरणविषे उत्पन्नहोय तब सम्पूर्णकर्मकों त्याग अर्थात् संन्यासलेके आत्मअभ्यासपरायणहोय। ताते हे सौम्य जिसपुरुषकों स्वर्गादिसंसारके भोगोंकीकामनाहै तिसकों यज्ञादिकर्मकर्तव्ययोग्यहै। अरु जिसपुरुषकों मोक्षकी इच्छाहै परंतु अंतःकरणकी मलिनताकेहेतुसे अशेषवैराग्य भयानहीं तिसकों काम्यक अरु निषिद्ध इनदोकर्मोंके त्यागपूर्वक केवल निष्काम विहितकर्म अंतःकरणकी शुद्धहोनेपर्यंत कर्तव्यहै। अरु जिसपुरुषकों वैराग्यादि साधनपूर्वक आत्मजिज्ञासा उदयभईहै तिसकोंसर्वकर्मोंके त्यागपूर्वक सर्वदाकाल आत्मानुसंधानरूप मननअभ्यासहीकर्तव्यहै कर्मकर्तव्यनहीं॥

हे सौम्य "कुर्वन्नेवेहकर्माणि" यह जो श्रुतिहै सो इसणाकेत्यागपूर्वक आत्मअभ्यासमें असमर्थपुरुषकेअर्थहै कि आत्मअभ्यासमें असमर्थपुरुष यावत् जीवे तावत् पर्यंत विहितकर्मोंकों करताहीजीवे तिसकेकरनेसे उसपुरुषविषे निषिद्धकर्मस्पर्शनहींकरते। एतदर्थ इसश्रुतिने जो कर्मकर्तव्यकहाहै सो आत्मअभ्यासमें असमर्थपुरुषके अर्थकहाहै ज्ञानवान्केअर्थनहीं ताते जो आत्मकामी पुरुषहै सो आत्मानुसंधान परायणहोय॥

॥ शिष्यउवाच ॥

हे भगवन् आप आज्ञाकरते हो मुमुक्षुपुरुष सम्पूर्णक
र्मको त्यागके आत्माभ्यासपरायणहोय सो सत्य परंतु
कर्मोंकोकरतेहुये आत्मअभ्यासकरना सो कर्मत्यागकीअ
पेक्षामें श्रेष्ठहै अरु श्रुतिने भी आज्ञाकियाहै कि "अविद्य
यामृत्युंतीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते ,, अविद्याजे कर्महैं तिसके
करनेकरके अंतःकरणकी मलिनतारूपीमृत्युकोंतरके वि
द्या जो ब्रह्मविद्याहै तिसके अभ्यासद्वारा मोक्षकोंप्राप्तहोना
है। ताते हे प्रभो सर्वथा कर्म न त्यागके विद्या अरु कर्मके
समुच्चयसेवनसे भी श्रुतिने मोक्षकहाहै ताते समुच्चयकर
ना उचितहै अरु आप समुच्चयका निषेधकरते हो ताते
इस संशयकोंभी आप निवारणकरिये ॥

॥ गुरुरुवाच ॥

हे सोम्य वेदने जो कर्मकर्त्तव्यता प्रतिपादनकियाहै ति
सका तात्पर्यजाननायोग्यहै जो वेद कर्मोंको प्रतिपादनक
रैहै तिसका तात्पर्यक्याहै अरु विधि क्याहै सो श्रवणक
रो हे सोम्य एक समुच्चयपक्षहै अरु एक विकल्पपक्षहै
अरु एक व्यवस्थापक्षहै तहां समुच्चय उसकोंकहतेहैं जो
कर्म भीकरना अरु साथही ब्रह्मविद्याका अभ्यासभीकरना
सो समुच्चय उनकाहोताहै कि जिनका परस्पर विरोधनहीं
सोतो कर्म अरु ज्ञानका परस्परविरोधहै क्योंकि कर्म
देहादिअनात्मविषयकअहंकारपूर्वकहोताहै अरु विद्या
जो ब्रह्मविद्याहै सो प्रथमही अनात्मअभिमानकों नाश

करके उदय होती है ताते कर्म अरु ब्रह्मविद्याका परस्परवि-
रोध होनेके कारणसे कर्म अरु विद्याविषे समुच्चयपक्ष नहीं
बनता । अरु तुमनेकहा कि श्रुतिने कर्म अरु विद्याके स-
मुच्चयसे मोक्ष कहा है सो नहीं उस श्रुतिका तात्पर्य यह है कि
अविद्या जे कर्म तिनके करनेसे अकरणजन्य प्रत्यवायरूपी
मृत्युसौं तरके विद्या जे अग्निआदि देवताकी स्वरूप आय-
तन आदिकोंकी ज्ञानपूर्वक उपासना तिसकरके अमृतभा-
व जे देवभाव तिसकी प्राप्ति होती है क्योंकि देवताओंकोंभी
अमर कहते हैं ताते देवभावकी प्राप्ति सोई अमरभावकी प्रा-
प्ति विद्वान् उपासककों होती है ताते तुमने कहीजे समुच्चय-
वादकी श्रुति सो कर्म अरु ज्ञानके समुच्चयकी प्रतिपादक
नहीं किंतु कर्म अरु उपासनाकी समुच्चयप्रतिपादक है ।
अरु अन्य श्रुतिनेभी कहा है । तथाच "विद्यया देवलोकः"
विद्याकरके देवलोककी प्राप्ति होती है ताते तुम्हारी कही श्रु-
ति कर्म उपासनाके समुच्चयसूचक है कर्म ज्ञानके समु-
च्चयसूचक नहीं क्योंकि कर्म अरु ज्ञानका परस्परविरोध
कारणसे समुच्चय बनता नहीं ताते ब्रह्मविद्या अरु कर्मका
समुच्चय करना योग्य नहीं ॥ अरु विकल्पपक्ष उसकों क-
हते हैं कि इच्छा आवे कर्म करो इच्छा आवे आत्मज्ञानका
अभ्यास करो सो विकल्पपक्षभी कर्म अरु ज्ञानविषे बने
नहीं क्योंकि कर्मकरके मोक्ष होती नहीं । तथाच "नास्त्य-
कृतः कृतेन, 'न कर्मणा"' । अकृत जो आत्मा तिसकी प्राप्ति कृ-
त जो कर्म तिसकरके होती नहीं ताते कर्मकरके मोक्ष नहीं

अरु ज्ञानकरके मोक्षहोताहै। तथाच "ज्ञानादेव तु कैवल्यं
। ताते हे सौम्य कर्ममोक्षसाधकनहीं अरु ब्रह्मविद्यामोक्ष
साधकहै ताते कर्मलघुहैं अरु ज्ञान सर्वसेश्रेष्ठहै कर्म
खद्योतवत्‌हैं ज्ञान सूर्यवत्‌है कर्म गुडतुल्यहैं ज्ञान अ-
मृततुल्यहै कर्म पित्तलतुल्यहैं ज्ञान सुवर्णतुल्यहै। हे सौ-
म्य जिनका परस्पर ऐसा उत्तम निकृष्ट भावहै तिनविषे
विकल्पपक्ष भी बनतानहीं ताते कर्म अरु ज्ञानकेविषे स-
मुच्चय अरु विकल्प यह दोनों पक्ष योग्य नहीं। अब य-
हां एक व्यवस्थापक्षहै तिसको भी श्रवणकरो अवस्था
इसको कहतेहैं जो पूर्वकालविषे कर्मकरना पुनः तिसका
त्यागकरके ब्रह्मविद्याके विचारविषे अभ्यासवान्‌होय।
अर्थात्‌ यावत्‌ अंतःकरणकी शुद्धताकालक्षण वैराग्यादि
कोंका अंकुर सो अंतःकरणविषे न उपजे तावत्‌ पर्यन्त।
निष्काम विहितकर्मकरे तिसके करनेसे जब वैराग्यादि सा-
धनोंकेलक्षण उदयहोय तब सम्पूर्णकर्मको त्यागके अ-
र्थात्‌ सन्यासलेके तब सर्वदाकाल आत्मानुसंधान पराय-
णहोय। इसकानाम व्यवस्थापक्षहै सो तीनोंपक्षोंमेंश्रेष्ठ
है ताते कर्म अरु ज्ञानकेविषे समुच्चय अरु विकल्प इ-
न दोनों पक्षोंको त्यागके व्यवस्थाप्रमाणकरनायोग्यहै।
हे लक्ष्मणजी हे सौम्य इनपुरुषोंको कबतक कर्म करना
योग्यहै सो भी श्रवणकरो ॥१६॥

॥भावार्थश्लोक १७मेंका॥

हे लक्ष्मणजी इनपुरुषोंको। मायाकरके १। शरीरा

॥यावच्छरीरादिषु माययात्मधीस्तावद्विधेयो॥
॥विधिवादकर्मणाम्। नेतीति वाक्यैरखिलं नि-॥
॥षिध्य तज्ज्ञात्वा परात्मानमथ त्यजेत्क्रियाः॥

॥मायया शरीरादिषु यावत् आत्मधीः तावत् विधि वादकर्मणां विधेयः। अथ परमात्मानं [आत्मत्वेन] ज्ञात्वा [तथा] नेतीति वाक्यैः तत् अखिलं [अनात्मकं] निषिध्य क्रियाः त्यजेत् ॥ २७ ॥

॥मायाकरके शरीरादिकअनात्माविषे यावत् आत्मबुद्धि है तावत् वेदोक्तकर्मका अधिकार है। [अरु] जब पर-मात्माको [आत्मत्वसे] जानता [तब श्रुतिके] निषेधरूप वाक्यसे सो [अनात्मबुद्धि] सम्पूर्ण तिरस्कारकरके [पश्चात्] क्रियाको त्यागकरे ॥ २७॥

जिसोंविषे २। यावत् ३। आत्मबुद्धि है ४। तावत् ५। वेदोक्त कर्मकरनेका ६। अधिकार है ७॥ अर्थात् अविद्याकर-के पुरुषोंको शरीरविषे अहंबुद्धि अरु शरीरके सम्ब-न्ध हस्तपादादि किंवा मातापितादि यावत् सम्बन्धी हैं। तिनविषे ममत्वबुद्धि अरु तिनके दुःखसुखकरके आप दुःखी सुखी होता है अरु तिन रक्षाकरके सर्वदाका-ल धनादिविषयोंविषे ही प्रवृत्त रहता है अरु स्वर्गादि परलोकके सुखभोगनेकी भी अभिलाषा अधिकारहोते

हैं ऐसे जे पुरुष हैं तिनकों वेदके वाक्योंकरके प्रतिपाद्य जे यज्ञ अग्निहोत्रादि कर्म सो कर्त्तव्य ही हैं। ऐसे जे अज्ञानीपुरुष हैं सो जो कदापि वेदोक्तकर्म त्यागदें तो न इसलोकके सुखपावेंगे न परलोकमें सुखपावेंगे किंतु अकरणे प्रत्यवायकरके नरकादि नीचलोकोंके कष्टोंको प्राप्तहोंगे ताते अज्ञानी पुरुषकों नीचगतिकी निवृत्तिकेअर्थ अरु इसलोक परलोकमें सुखप्राप्तिकेअर्थ अरु अकरणप्रत्यवायकी निवृत्तिकेअर्थ वेदोक्तकर्म अवश्यकरनायोग्य है ॥ अरुजब जिज्ञासापूर्वक आचार्यसे तत्त्वमस्यादिवाक्यकों भलीप्रकार श्रवणमनन करनेसे आवरणविक्षेपपूर्वक अज्ञानके १ अभावहोनेसे २। परमात्माकों अपनाआत्मस्वरूपकरके ९। १ जाना १०। तब वेदसिद्धान्त उपनिषद् ब्रह्मविद्याकी श्रुतिसे जे देहादि बुद्धिपर्यंत सर्व अनात्मविषयक आत्मभावके निषेधक जो। "अस्थूलमनण्वह्रस्वमदीर्घमलोहितमस्नेहमच्छायमतमोऽवाय्वनाकाशमसंगमरसमगंधमचक्षुष्कमश्रोत्रमवागमनोऽतेजस्कमप्राणममुखममात्रमनन्तरमबाह्यं" बृ०उ०के अ०५के ब्रा०८ वेकी ८ श्रुतिमें ॥ नेति नेतिवाक्य है ११। तिनवाक्यकरके १२। सो १३। सम्पूर्ण देहादि अनात्मविषयक आत्मभावकों १४। तिरस्कारकरके १५। सर्वक्रियाकों १६। त्यागदेवै १७॥

॥ शिष्यउवाच ॥

हे प्रभो आपनें मोक्षकेअर्थ ज्ञानकों प्रतिपादनकरतेहैं सो अस्तु परंतु कईएक आचार्योंकेद्वाराही मोक्षकहते

हैं सो सत्यकहतेहैं किंवा असत्यकहतेहैं सो आपकहिये॥

॥गुरुरुवाच॥

हे सौम्य जो आचार्य कर्मोंद्वारा मोक्षकहतेहैं सो आचार्य वेदसे बाह्य बोलतेहैं एतदर्थ उनआचार्योंको वेदने निन्दाकि याहै तथाच। "प्लवा ह्येते अदृढा यज्ञरूपा अष्टादशोक्तमव रं येषु कर्म। एतच्छ्रेयो येऽभिनन्दन्ति मूढा जरामृत्युं ते पुन रेवापि यन्ति"॥ "अविद्यायामन्तरे वर्त्तमानाः स्वयं धीराः पण्डि तम्मन्यमानाः। जङ्घन्यमानाः परियन्ति मूढा अन्धेनैव नी यमाना यथान्धाः"॥ "अविद्यायां बहुधा वर्त्तमाना वयं कृता र्था इत्यभिमन्यन्ति बालाः"। "यत्कर्मिणो न प्रवेदयन्ति रागात्ते नातुराः क्षीणलोकाश्च्यवन्ते"॥ मु० उ० के प्रथम मुंडकके द्विती यखंडकी ७।८।९ की श्रुतिपर्यंत॥ अर्थ हे सौम्य जो आचार्य मोक्षार्थ कर्महीकों विशेषकरके प्रतिपादनकरतेहैं उन मूर्ख आचार्यके अर्थ जिज्ञासुप्रति आप वेदभगवान् ऐसा कहते हैं कि हे पुरुषो जैसे कोई पुरुष तृणकों आश्रयकरके स मुद्रकेपारहोनेकेअर्थ प्रयत्नकरताहै सो कितौभुजापरकाद्य पि समुद्रसे पार होता नहीं। तैसेही सह जो षोडश ऋत्वि ज आदिब्राह्मण अरु यजमान अरु यजमानकी पत्नी इन अष्ट दशपुरुषोंकरके साध्य जे यज्ञादिकर्म तो अदृढ नौका वत्हैं तिनकरके अज्ञानरूप अपारसमुद्र न तरेंगे। ताते जे कोई पुरुष इनकर्मोंकों श्रेयरूपजानके इनकी प्रशंसा करतेहैं सो मूढबुद्धिपुरुष वारंवार जन्म जरामरणकों प्रा प्तहोतेहैं। पुनः कैसेहैं वो पुरुष जो देहादि अनात्मअभिमान

के आश्रय होनहार कर्मरूपी अविद्या तिसविषे घनीभूतहु-
येहैं अरु आपकों बडे धीर पंडित मानतेहैं सो महामूढहैं।
जैसे अंधे पुरुषकरके प्राप्तकिया अंधा सो संकट गर्तादिक
विषमस्थानोंमें गिरताहै। तैसे ही कर्मीअज्ञानी कर्मके आश्र
य वारंवार संसारसमुद्रमें गिरते अरु कष्टपावतेहैं। तिसकु-
पापर भी पुनः बडा आग्रह सहित कर्ममेंही प्रवृत्तहोतेहैं अ-
रु आपकों कृतार्थ मानतेहैं सो पुरुष अत्यंत मूढहैं। तातें ये
कर्मीपुरुष कर्मफल स्वर्गादिकोंविषे रागवान् होनेके हेतुसे अ
पने आप अक्रिय अविनाशी आत्माको न जानके दुःखीभये
संते अंतमें क्षीणभये स्वर्गादिकर्मफल तिसहीकों प्राप्तहोतेहैं ता
ते उन कर्मीपुरुषोंके वाक्य अरु उनका संग मुमुक्षुपुरुषकों
मंतव्य अरु कर्तव्य नहीं। हे सौम्य इसप्रकार पूर्वोक्त आचा
र्यद्वाराहोके साक्षात् वेद भगवान् ही आज्ञाकरतेहैं तातें जे।
आत्मज्ञानाऽभ्यासीपुरुषहैं तिनकों सर्वथाकर्मकरनायोग्यन
हीं। अरु जो मुमुक्षुपुरुषहै कि जिसकों आत्मविद्याके श्रव-
णद्वारा परोक्षज्ञानभयाहै तिसकों भी वेदशास्त्रके जेकर्ममें
प्रेरकवाक्यहैं तिनका आदरकरना अर्थात् स्वीकारकरनायो-
ग्यनहीं ऐसा श्रीकृष्णने उद्धवप्रतिकहाहै। तथाच "जिज्ञासा
यां संप्रवृत्तो नाद्रियेत्कर्मचोदनाम्" तातें मुमुक्षुपुरुषकों
संन्यासले सर्वकर्मोंकोत्यागके आत्मतत्त्वके मनन अभ्या-
सपरायणहोनायोग्यहै क्योंकि संन्यासबिना कर्मत्यागबने
नहीं अरु कर्मत्यागबिना निरंतर ब्रह्मआत्माका अभेदअ
भ्यासबने नहीं अरु तिस अभ्यासबिना मोक्षहोवेनहीं।

ताते जिस जिज्ञासुपुरुषकों आत्मतत्त्वके श्रवणज्ञानद्वारा प-
रोक्षज्ञानभयाहै सो उक्तप्रकार आत्मअभ्यासपरायणहोय।
अरु जिसपुरुषकों आत्मजिज्ञासानहीं अरु विषयोंसेवैराग्य-
भीनहीं ऐसाजोअज्ञानीहै सो शुभकर्मत्यागनेसे पापीहोता
है ताते उसकों वेदोक्तकर्मकरनायोग्यहै। ज्ञानी अरु मुमुक्षु-
कों कर्मकर्तव्यनहीं ॥

॥शिष्यउवाच॥

हे प्रभो आपने आज्ञाकिया कि आत्मवेत्ता अरु जिज्ञा-
सु इन दोनों पुरुषोंकों कर्मकर्तव्ययोग्यनहीं अरु जो अ-
ज्ञानी विषयसेवी देहात्मवादीपुरुषहैं तिनकों कर्मकरना-
योग्यहै सो अस्तु परंतु हे भगवन् श्रुतिने इसप्रकारकहाहै
जो "विद्वान्यजेत" विद्वान् आत्मज्ञानी यजनकरे ताते ज्ञान-
वान्कों कर्मकरनायोग्यहै त्यागनायोग्यनहीं ॥

॥गुरुरुवाच॥

हे सौम्य यह जो तुमने श्रुतिकही सो कर्मविद्वान्केअ-
र्थकहीहै तत्ववेत्ताज्ञानवान्केअर्थनहीं। हे सौम्य जिसवि-
द्वानकों परावरज्ञानकरके सर्वत्र सर्वकों अखंड परिपूर्ण
एक सच्चिदानंदआत्माही निश्चयभयाहै अरु आत्मवि-
ज्ञानरूपी अग्निकरके द्वैतभ्रम निर्मूलभयाहै। अरु आ-
त्माहीविषे रतिहै आत्माहीकरके तृप्तहै अरु आत्माही-
करके संतुष्टहै तिस आत्मज्ञानी जीवन्मुक्त पुरुषकों कर्म-
कर्तव्य विधाननहीं। तथाच "यस्त्वात्मरतिरेवस्यादात्मतृ-
प्तश्चमानवः आत्मन्येवचसंतुष्टस्तस्यकार्यंनविद्यते"

भगवद्गीताके अ॰ ३ के १७ श्लोकमें। अरु इनसे इतर जे अ-
ज्ञानी पुरुषहैं कि जिनकी प्रीति विषयोंविषेहै तृप्ति अन्नादि
कोंसेहै अरु संतुष्टता धनादिकोंसेहै तिनकों कर्म कर्तव्यहै।
अरु जिसकों प्रीति तृप्ति संतुष्टता यहतीनों आत्मविषयक
है तिसकों कुछ कर्तव्य नहीं। हे सौम्य अब आत्मरति आत्म
तृप्ति आत्मसंतुष्टता इनकेअर्थ श्रवणकरो "आत्मरति" अर्थ
यह जो गुरूसे तत्वमस्यादि महावाक्य श्रवणकरके तिसके-
मनन अभ्यासद्वारा आत्मसाक्षात्कारकरके अहंब्रह्मास्मि
भाव दृढ़भयाहै अरु तिसदृढताद्वारा नित्यानंदरस जे अ-
द्वितीयआत्माहै तिसविषे व्यवधानसेरहित अखंड अध्या
सरूपी क्रीड़ा रमणहै जिसकों सो कहिये आत्मरति। तथाच
"आत्मरतिः आत्मक्रीड आत्ममिथुन आत्मानंदः" इत्यादि
छां॰ उ॰ के ७ मे प्र॰ की– श्रुतिमें॥ "आत्मतृप्तः" अपने आप
विषे आत्मानंद अमृतरसकरके पूर्ण तृप्तहैं अरु त्रैलोक्यके
विषयलाभसे उपरामभयाहै चित्तजिसका तिसकों आत्म
तृप्त कहतेहैं। तथाच "आत्मलाभान्नपरविद्यते" इतिश्रुति।
"आत्मसंतुष्ट" जैसे नेत्र सर्वत्र रूपकोंही देखतेहैं इतरन
हीं। तैसेही जो आत्मवेत्ता विद्वानहै सो सि बाह्याभ्यंतरोह्यजः"
"आत्मैवाधस्तादात्मोपरिष्टादात्मापश्चादात्मापुरस्तादात्मा-
दक्षिणत आत्मोत्तरत आत्मैवेदꣳ सर्व्वमिति"। इत्यादिश्रु
तियोंकेवाक्यसे बाहिर भीतर नीचे ऊपर पश्चिम पूर्व दक्षि
ण उत्तर सर्वत्र केवल एक अखंड परिपूर्ण आत्माही देख
ताहै आत्मासे इतर दृष्टिका अभावहै जोकुछ देखताहै सु

नताहै लेताहै देताहै अर्थात् जोकुछ मनबुद्धिइंद्रियादिद्वारा विषय अनुभवहोताहै तिन सर्वकों एक अखंड आत्मा ही देखताहै ऐसीदृष्टिकरकेयुक्तकों आत्मसंतुष्टकहतेहैं। हेसौम्य ऐसा जो आत्मरति आत्मतृप्त आत्मसंतुष्ट कृतकृत्य भया॰ विद्वान् जीवन्मुक्त आत्मज्ञानी तिसकों कर्मविधाननहीं। हे सौम्य क्रियाप्रवृत्तिमें जितने हेतुहैं तावत् सर्वका ज्ञानी के विषे अभावहै ताते ज्ञानवान्कों कर्तृत्व बनेनहीं। अरु जिनकेविषे क्रियाप्रवृत्तिके हेतुहैं तिनकों कर्म कर्त्तव्यहै। देहमें अहंभाव इसलोक परलोकादिकोंके सुखभोगकीइच्छा लोकहितार्थ अकरणेप्रत्यवायबुद्धि। इत्यादिजे कर्ममें प्रवृत्तिके हेतुहैं तिनमेंसे एकभी ज्ञानवान्के विषेनहीं क्योंकि ज्ञानवान्को तो पूर्व मुमुक्षु अवस्थामें श्रवण मननद्वारा इन सर्वहेतुओंका अभावहोताहै। प्रथमजबगुरु कहताहै कि हे सौम्य तूं देहनहीं देहसेभिन्न आत्माहै जिसका तीनोंकालमें नाशनहीं सोई महासूक्ष्मआत्मा तूंहै इसप्रकार श्रवणहोनेसेही देहाभिमान नष्टहोताहै ताते देहार्थकर्मबनेनहीं। अरु इसलोक परलोकके जे विषयभोगहैं तिनकोंभी वेद शास्त्र अनुभवद्वारा मिथ्या अनित्य जानचुकाहै। तथाच "पुण्यचितोलोकःक्षीयते,'कर्मचितोलोकःक्षीयते' क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकेविशंति" "आब्रह्मभुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोऽर्जुन"॥ इत्यादिप्रमाण करके अरु प्रत्यक्ष कर्मकाफल जो सुखदुःखादि तिनकी॰ परस्पर व्यभिचारिता अनित्यता क्षीणता दुःखमयता इत्या

दिजानके सम्पूर्ण कर्मोंका फलरूप जे इसलोक परलोका-
दिकोंके विषयभोग तिनकेलाभसे उपराम वैराग्यशीलस्वभा-
वहै ताते इनकेअर्थ भी कर्मप्रवृत्तिबनेनहीं। अरु पुत्रका-
मना ज्ञानवान्कों हैनहीं क्योंकि परलोककी कामनावाले
कों पुत्रार्थ क्रिया कर्तव्यहै। तथाच "पुत्रेणायंलोकःजय्यो
नान्येनकर्मणा" यह बृ॰उ॰की श्रुतिप्रमाण। तो ज्ञानवान्-
की लोकैषणा अरु तत्कालीन पुत्रैषणा पूर्वही अभावभ-
ईहै ताते विद्वान्कहताहै। तथाच "पूर्वेविद्वांसःप्रजांनका-
मयंते किंप्रजयाकरिष्यामः" इति बृ॰उ॰के ६ के अ॰के ४ के
ब्रा॰की श्रुतिहै। ताते ज्ञानवान्कों पुत्रकेअर्थ भीकर्म
बनेनहीं। अरु ज्ञानवान्कों धनलाभार्थ भी कर्मबनेनहीं
क्योंकी उनकों एक लोष्टकांचनहै सो धनकारकेहोतानहीं
तथाच "अमृतत्वस्यतुनाशास्तिवित्तेनेति" बृ॰उ॰के ४ केअ॰
की पहिलीश्रुतिहै। अरु धन सर्वअनर्थोंका मूलहै याते
तिसकेअर्थ भी ज्ञानवान्कों कर्ममें प्रवृत्तिबनेनहीं। याते
मुमुक्षुकेअर्थ श्रुतिनेकहाहै। तथाच "न कर्मणा न प्रज-
या धनेन त्यागेनैके अमृतत्वमानशुः" कैवल्य उ॰विषे कि-
योहै सो न यज्ञादिकर्मकरके न प्रजाकरके न धनकरके
होताहै केवल एक इनसर्वके त्यागसे होताहै। अरु इस-
ही कारणसे विद्वान् जे साक्षात् आत्मानुभवी पुरुषहैं सो
लोकैषणा पुत्रैषणा वित्तैषणा से उठके अर्थात् ईषणादि
बुद्धिआदिकोंके धर्मजानके तिसबुद्धिकासाक्षी शुद्ध अरु
तिसकेधर्मसे पृथक् चैतन्य स्वयंप्रकाश आत्मारूपकेआ

पकों साक्षात् अनुभवकरके भिक्षान्नभोजनकरते निःशं-
क विचरतेहैं। तथाच "तेह स्म पुत्रैषणायाश्च वित्तैषणाया-
श्च लोकैषणायाश्च व्युत्थायाथ भिक्षाचर्यं चरन्ति" इत्या-
दि वृ० उ० अ० ६ के ४ थे ब्रा० का ३१ श्रुतिसें। तातें हेसौम्य ज्ञानी
विषे ईषणात्रयके अभावहोनेसे पुत्रार्थ धनार्थ लोकार्थ
क्रिया असंभवहै ताते बनेनहीं। अरु कर्मकाहेतु यावत्
कामनाहै तावत् सर्वका ज्ञानीकेविषे अभावहै। तथाच
"इहैवसर्वे प्रविलीयंतिकामाः" इतिश्रुतेः। एतदर्थ भी ज्ञानी
कों कर्मकर्तव्यबनेनहीं। अरु कुटुम्बरक्षार्थभी ज्ञानीसों
कर्मबनेनहीं क्यों कि पुत्रादि ईषणाका तिसविषेअभाव
है अरु पुत्रदारादिविषे स्नेह भी उसकोंहैनहीं अरु उनके
हर्षशोकसों पृथक्भयाहै। तथाच "असक्तिरनभिष्वंगः
पुत्रदारगृहादिषु" इत्यादि भगवद्गीता अ० १३ के ९ श्लो-
कमें। एतदर्थ कुटुम्बरक्षार्थ भी ज्ञानीसों कर्म बनेनहीं॥
अरु जो ऐसाकहोकी ज्ञानी लोकहितार्थ कर्मकरे तो सो
भी बनेनहीं। हे सौम्य जिसकों श्रुतिप्रमाण अपने अनुभ-
वद्वारा साक्षात् सर्वत्र एकआत्मभावउदयभयाहै तिसक-
रके लोकादि द्वैतभावका अभावहै तातें व्याप्य व्यापकस्व-
रूपसे सर्वत्र एक आत्माही कों देखताहै रूपलेन्द्रवत्। तथाच
"सर्वंखल्विदंब्रह्म" "एकोवशीसर्वभूतान्तरात्मा" "एकोदेवःस-
र्वभूतेषुगूढः" "वासुदेवःसर्वमिति" "सकलमिदमहंचवासु-
देवः"। इत्यादि श्रुति शास्त्रके वचनप्रमाण सर्वत्र परिपूर्ण
एक आत्मभावही सम्यक् अनुभवभयाहै अरु तिसके १

इससे लोकादि द्वैतभावका अभावभयाहै तिस विद्वान् आत्मवेत्ता पुरुषको लोकहितार्थभी कर्म बनैनहीं । ताते हे सौम्य जिस ब्रह्मवेत्ताको सर्वत्र साक्षात् आत्माऽनुभवद्वारा सम्पूर्ण २ द्वैतभावका अभावहोनेसे क्रियाप्रवृत्तिकेहेतु अभावभयेहैं तिस ब्रह्मवेत्ताको यती किंवा गृही को कर्माधिकारनहीं

॥ शिष्य उवाच ॥

हे प्रभो ज्ञानवान्को भिन्न पुत्र लोकार्थ कर्म कर्त्तव्यनहीं सो अस्तु तथापि आत्मशुद्धीकेअर्थ उसको कर्मकरनायोग्य है सर्वथात्यागकरनायोग्यनहीं ॥

॥ गुरुरुवाच ॥

हे सौम्य तुमनेकहा कि ज्ञानवान् आत्मशुद्धिकेअर्थ कर्म करे तहां देह चित्त अरु साक्षी इन तीनोंको आत्मत्वहै तहां किसकी शुद्धिकेअर्थकर्मकरे तहां जोकदापि ऐसाकहो कि देहशुद्धिकेअर्थ कर्मकरे तो अशक्यहै । तथाच "कलेवरंमूत्रपुरीषभाजनं" । यहजो कलेवर शरीरहै सो मूत्र विष्ठा मांस अस्थि मज्जा कफ वातपित्त रक्त लार पीप इत्यादि अति २ अपवित्रवस्तुओंसे पूर्णकिया मानो अति अशुद्धहै तिसकी सर्वप्रकारसे शुद्धि असंभवहै एतदर्थ शरीरशुद्धिकेनिमित्त कर्मबनैनहीं । अरु जोकहो कि चित्तशुद्धिकेअर्थ ज्ञानवान् कर्मकरे सोभी योग्यनहीं क्योंकि ज्ञानवान्ने पूर्वही विहित नित्यादिकर्मोसे जब अन्तःकरण शुद्धकियाहै तब तिसविषे मुमुक्षुतादि साधन उपजनेसे श्रवणादिविषे पुरुषार्थ २ अभ्यासद्वारा साक्षात् आत्माऽनुभवप्राप्तभयाहै ताते ज्ञानी

साधनउत्पत्तिसे पूर्वही अपने अंतःकरणकों शुद्धकरचु-
काहै। तथाच "यतयःशुद्धसत्वाः" मु०उ०के तृतीयमुंडके २
खंडकी ६ठीश्रुतिमें। तातें ज्ञानवान्कों चित्तशुद्धिभीक-
रनीनहीं। अरु जो कहो कि ज्ञानवान् आत्मशुद्ध्यर्थकर्म
करै तो श्रवणकरो हे सौम्य आत्मा निराकार निर्विकार नि-
रवयव सदा शुद्ध बुद्ध मुक्तस्वभावहै तिस आत्माकी शुद्ध्य-
र्थ कल्पनाव्यर्थहै क्यों जो ब्रह्मा विष्णु रुद्रादिक जे ज्ञानवा-
न् जीवन्मुक्तहैं जिस आत्माके बलके आश्रय अनेकका-
र्योंकों करतसंते आपसदाशुद्धरहतेहैं अरु अन्योंकों शु-
द्धकरतेहैं सो आत्मा सर्वकाल शुद्धहीहै। तथाच "अस्ना-
विरं शुद्धमपापविद्धम्" ई०उ०के ८ मेंमंत्रमें। तथा "य
आत्माऽपहतपाप्मा" छां०उ०के ८ मेंप्रपाठकमें। तातें हे
सौम्य शरीरशुद्धि चित्तशुद्धि आत्मशुद्धि इनके अर्थभी
ज्ञानवान्कों क्रियाकर्त्तव्ययोग्यनहीं। हे सौम्य जिस वि-
द्वान्नें सर्वप्रवृत्तिका बीज जो अज्ञान अरु तिसका आश्रय
अंतःकरण अरु तिसका विषय प्रपंच इन सर्वकों एका-
त्मविज्ञान अग्निकरके भस्मकियाहै। तथाच "ज्ञानाग्नि-
दग्धकर्माणं तमाहुःपंडितंबुधाः" भगवद्गीता अ०४
के १९ श्लोकमें। अरु आप अक्रिय ब्रह्मपदविषे सोहमस्मि
भावसे साक्षात् प्राप्तभयाहै तिस आप्तकाम जीवन्मुक्त
ज्ञानवान्का किसीप्रकार क्रियामें प्रवृत्तहोनाबनेनहीं॥

॥शिष्यउवाच॥

हे प्रभो जो अपरोक्षज्ञानीकों क्रियाविषे प्रवृत्तहोना

बनैनहीं सो श्रस्तु परंतु परोक्षज्ञानी कों तो कर्मकरनायोग्य है वा नहीं सो कृपाकरके कहिये ॥

॥ गुरुरुवाच ॥

हे सौम्य परोक्षज्ञानी जो मुमुक्षु तिसकों लोकार्थ किंवा स्वार्थ श्रवण मनन अभ्यास ध्यान धारणा समाधि योग रूपीकर्म कर्त्तव्यहै तद्व्यतिरिक्त श्रौत स्मार्त्त कर्म कर्त्तव्य नहीं क्योंकि कर्मकाप्रयोजन अंतःकरणकी शुद्धिपर्यंतहै अरु जो अंतःकरणशुद्धभये पश्चात् कर्मकरताहै तब शुद्धअंतःकरणविषे उपजे जो वैराग्यादिसाधनरूपी अंकुर सो नष्ट होजातेहैं अरु तिसके नष्टभयेपीछे आत्मसाक्षात्काररूपी फलकीप्राप्तिहोतीनहीं । जैसे किसान खेतीकरनेवाला प्रथम हल चलायके पृथिवीको शुद्धकरताहै तदनंतर बीजबोवताहै पश्चात् अंकुरउपजताहै । तब तिसकी रक्षाद्वारा फलको प्राप्तहोताहै । अरु जोकदापि अंकुरोत्पत्तिके पश्चात् पुनः हल चलावे तो वो उत्पन्नभयाअंकुर नष्टहोताहै तब फलकीप्राप्तिहोतीनहीं । हे सौम्य तैसे ही आत्मकामी विवेकीपुरुष प्रथम विहितकर्मकर्त्तव्यरूपी हल को चलाय अपने अंतःकरणरूपी पृथिवीकों शुद्धकरताहै पश्चात् श्रवण मननरूपी बीजकों बोवताहै तब प्रथम परोक्षज्ञानरूपी अंकुर उपजताहै तिसकी आसुरीसंपदारूपी पशुओंसे रक्षाकरतसंते अभ्यासरूपीजलसों सिंचनकरताभया आत्मसाक्षात्कार मोक्षफलकों प्राप्तहोताहै । अरु जो साधनरूपीबीजबोवनेकेपश्चात् जब परोक्षज्ञानरूपी अंकुरउपजताहै तब

पुनः जो अंतःकरणरूपीपृथिवीपर कर्मरूपी हल चलावताहै, तो बीजसुद्धां अंकुर नष्टहोजाताहै अरु मोक्षफलकीप्राप्तिहो-तीनहीं। ताते हे सौम्य परोक्षज्ञानी मुमुक्षुकों सिवाय श्रवण मनन निदिध्यास समाधिके अपनेअर्थ किंवा लोकसंग्रहा-र्थ अन्यकार्य कर्त्तव्यनहीं ॥ हे लक्ष्मणजी विद्वान् जो आत्म-ज्ञानीहै सो देहात्मबुद्धि अरु तदाश्रित संपूर्णक्रिया तिसकों त्यागके आत्मअभ्यासपरायणहोय ॥ १७॥

॥ भावार्थश्लोक १८ मेंका ॥

हे लक्ष्मणजी जिसकालमें १। परमात्मा अरु जीवात्मा १ का जो २। अविद्याजन्यभेद तिसभेदको ३। भेदन अर्थात्ना-शकरनेवाला ४। परमउज्वलप्रकाशकरनेवाला ५। साक्षात् आत्मानुभवरूपविज्ञान ६। जब अपनेआपविषे ७। ही ८। १ अर्द्धसूर्याग्नि भावसें प्रकाशता अर्थात् उदयहोताहै ९। त-त्क्षणहीक्षण १०। आत्माकों ११। संसारविस्तारबारजन्म-मरणरूपबंधनका १२। कारणजे १३। मायासंबंधअज्ञान १४। सो सहित अपने आवरण विक्षेपरूपकार्यके १५। साक्षा-त् १६। बिनाप्रयासकों प्राप्तहोताहै १७। -॥ १८ ॥

॥ शिष्यउवाच ॥

हे प्रभो अज्ञानकिसकों कहतेहैं अरु आवरण अरु वि-क्षेप किसकोंकहतेहैं सो सर्व आपकृपाकर कहिये ॥

॥ गुरुरुवाच ॥

हे सौम्य आत्मविचारसेप्रथम उदासीनहोकर कहताहैजो मैं आत्माकों नहींजानता यह जो भावनावृत्तिहै तिस कों १

॥यदा परात्मात्म-विभेद-भेदकं विज्ञानमात्मन्यव॥
॥भाति भास्वरं। तदैव माया प्रविलीयतेऽञ्जसा स-॥
॥कारका कारणमात्मसंसृतेः ॥ १९ ॥

॥यदा परमात्मआत्मनो-विभेद [तत्] भेदकं विज्ञानं भा-स्वरं आत्मनि-एव विभाति तदैव आत्म संसृतेः कारणं । सकारका माया अञ्जसा प्रविलीयते ॥ १९ ॥

॥जब परमात्मा अरु आत्माका-जो-भेद-तिसको-नाश-करता प्रकाशरूप विज्ञान [जब] अपने आत्माविषे ही प्रकाशताहै [तब] तिसही क्षण आत्माको संसृतिका कारण । सहित अपने आवरणविक्षेपरूप कार्यसे माया साक्षात् । विनाशको प्राप्त होतीहै ॥ १९ ॥

अज्ञान कहतेहैं । अरु जो यह जीव कहतेहैं कि जिसको कूटस्थ आत्मा कहते हो सो भासतानहीं जाने है भी नहीं जो आत्मा होता तो भासता यह अभावापत्ति असत्तापत्ती भासताहै तिसका नाम आवरणहै । अरु स्थूल सूक्ष्म देह रूप संघात साथ मिलके अपनेको कर्ता भोक्ता पापी पुण्यी मानना है तिसका नाम विक्षेपहै । सो यह आवरण विक्षेप सहित अपने कारण मायासंज्ञक अज्ञानको आत्मा परमात्माके अभेद विज्ञानकरके साक्षात् विनाशको प्राप्त होतेहैं एतदर्थ आत्मज्ञानार्थ पुरुषार्थ करनायोग्यहै ॥ १९ ॥

रा॥ जिसकोकहतेहैं सो आप कृपाकरकेकहिये ॥ हे सौम्य शु
न शब्द आदि प्रमाणोंके विषेमें नैयायिक वेदान्ति आदि शास्त्र
कार आपसोंमें परस्पर भिन्न २ रीतिसे लक्षणादि ग्रंथकहेहैं
परंतु यहांतुम्हारेप्रश्नकेउत्तरमें बहुत संक्षेपमात्रकहताहोंति
सको श्रवणकरो। हे सौम्य आत्माके जाननेकेलियें शब्द २
आदि षट् प्रमाणकहेहैं तहां शब्द अनुमान उपमान अ
र्थापत्ति ऐतिह्यक प्रत्यक्ष। यह षट् प्रमाणहैं तहां श्रुतियों
के “प्रज्ञानमानंदंब्रह्म” „सत्यंज्ञानमनंतंब्रह्म” „अयमात्माब्रह्म” „त
त्त्वमसि” „अहंब्रह्मास्मि” । इत्यादि महावाक्योंको श्र
वणकरके आत्माको जानना तिसकानाम शब्दप्रमाणहै १
और जैसे पर्वतादिस्थानोंमें अदृश्यरूपजोअग्नि तिसके २
धूमको देखके उस अग्निकी प्रतीति होतीहै कि इसस्थान-
में अग्निहै क्योंजो अग्नि नहोता तो धूम भी नहोता तातें
जहां धूमहै तहां अग्निभी अवश्यहै। तैसे ही आत्माजो
है सो स्थूल सूक्ष्म कारण इन तीनों शरीरोंसे विलक्षणहै
और अवस्था तीनोंका साक्षीहै जिसकरके अभावरूप सु-
षुप्ति सिद्धहोतीहै सोई सबसे पृथक् सबका प्रकाशक सा-
क्षी आत्माहै जो कदाचि सर्वसे पृथक् सर्वकाप्रकाशक २
ज्ञाता आत्मा नहोतातो जिसविषे इंद्रियां अंतःकरणकीवृ
त्ति सहित लयहोजातीहैं ऐसी जो सर्वको अपनेविषे लयकर्त्ता
अज्ञान तमरूप कारण सुषुप्ति तिसका अनुभव जिसतत्व
से होयहै पुनः जाग्रत अवस्थामें उसही अनुभवतत्वकीस-
त्ताकरके बुद्धि वाणीद्वारा बाह्य प्रकटकरतीहै औ ऐसे २

आनंदसे सोये कि कुछभी ज्ञान नरही ऐसा आनंद अरु अ-
ज्ञानका अनुभव जाग्रतअवस्थामें न होना चहिये सो तो स-
र्वदोंहोताहै तातें सर्व विशेषताके भाव अभावका प्रकाशक
अनुभवी सर्वसे पृथक् सर्वका साक्षी सर्वका अपना आप
ही सिद्धहै। तथाच "चक्षुषोद्रष्टा वाचोद्रष्टा मनसोद्रष्टा तम
सोद्रष्टा" इत्यादिश्रुति। इस प्रकार आत्माको जाननेकानाम
अनुमान प्रमाणहै। २॥ अरु दृष्टान्तयुक्त श्रुतियोंके वाक्य
प्रमाणसे आत्माकोजानना। तथाच "आकाशवत्सर्वगतःसू-
क्ष्म, अग्निर्यथैको भुवनं प्रविष्टो रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव, एकस्त-
थासर्वभूतांतरात्मा। इत्यादि श्रुतियोंके प्रमाणसे अरु विचा
रकरना जो चैतन्य आत्मा आकाशसेभी महासूक्ष्म आकाशा-
दिसर्वविषे व्याप्त है अरु सर्वके धर्मसे असंग निरंश अक्रिय
अनंत अखंड अविनाशी है। इस प्रकार दृष्टान्तोंसहित आ
त्माकोजानना तिसकानाम उपमान प्रमाणहै। ३॥ अरु जैसे
कोई कहे कि यहपुरुष मोटा बहुतहै अरु श्रवणकियाहै कि
यह भोजन नहींकरता परंतु प्रतीतहोताहै कि एकान्तरात्रिमें
भोजनकरताहै क्यों जो सर्वथा भोजन न करता होता तो मोटा-
भी न होता तातें इसकी पुष्टता ही सरवावती है जो यह पुरुष ए
एकान्तरात्रिमें अवश्य भोजनकरताहै। इस ही प्रकार आत्मा
विषयक विचारकरना जो यह जाग्रतादि पदार्थ जानेजाते-
हैं सो सर्व आत्माहीकरके जानेजातेहैं अरु यह जो अभा-
वरूप सुषुप्ति है सो भी आत्माकरके ही सिद्ध होतीहै जो सर्व
सेपृथक् प्रकाशक साक्षी आत्मा नहोयतो यह अभावादि

कैसेसिद्धहोय एतदर्थ जिसकरके अभावादि जानेजाते हैं सो ज्ञाताआत्मा सर्वसेपृथक् अपना आपहै। इसप्रकार विचारकेजाननेकानाम अर्थापत्तिप्रमाणहै।४॥ अरु किसीनेकहा कि इसस्थानविषे यक्ष बसताहै परंतु देखा किसीने नहीं अरु अनुमानकरके भी नहींजानाजाता केवलपरंपराकरके सुननेविषेही आवताहै। तैसेही आत्माविषयक विचारकरना जो यह आत्मासर्वका अपना आपहै परंतु देखाकिसीनेनहीं तथापि परंपराकरके सुननेविषेआवताहै जो ईश्वरआत्मासत्यहै सर्वकाअंतर्यामी अपनाआप है। इसप्रकारजाननेकानाम ऐतिह्य प्रमाणहै।५॥ अरु अन्तःकरणकीवृत्ति इंद्रियोंद्वारा निकसके घटपटादि विषयोंकेसाथमिलके तदाकारहोतीहै तिसकेमध्य जो अनुभवकरनेवाली ज्ञानसत्ताहै कि जिसकरके वृत्ति इंद्रिय विषय प्रकाशतेहैं सोई सर्वकाप्रकाशक अनुभवीआत्मा मैंहों मुझसेइतरमेराज्ञाता कोईनहीं। तथाच "येनेदꣳसर्वंविजानीयात् तत्केनविजानीयात्" तस्मात् "अहंब्रह्मास्मि" ताते सर्वका ज्ञाता ब्रह्म आत्मा मैं हों। इसप्रकारजाननेकानाम प्रत्यक्षप्रमाणहै।६॥ हे सौम्य इसप्रकार श्रुतिके शब्दादि प्रमाणकरके आत्मसाक्षात्काररूपी शुद्ध अद्वैत विज्ञानप्रकाशताहै तब अविद्या भलीप्रकार नाशहोतीहै सो नाशभई अविद्या पुनः अपने आवरण विक्षेपादिक कार्योंकरनेवाली कदापि नहीं उपजती। जैसे रज्जुको भलीप्रकार जाननेसे तिसविषे पुनः सर्पभ्रांतिनहीं उपजती

॥ यदा ऽस्य नष्टा न पुनः प्रसूयते कर्त्ता हमस्येति मतिः॥
॥ कथं भवेत्। तस्मात् स्वतंत्रा न किमप्य पेक्षते॥
॥ विद्या विमोक्षाय विभाति केवला॥ २०॥

॥ यदा अस्य [पुरुषस्य अविद्या] नष्टा पुनः न प्रसूयते [तदा] अस्य [कर्मणः] कर्त्ता अहं इति मतिः कथं भवेत् [नभवेत] तस्मात् स्वतंत्रा विद्या किमपि न अपेक्षते केवला विमोक्षाय विभाति ॥ २० ॥

॥ जिससमय इसमुमुक्षुकी [अविद्या] निःशेषनाश भई पुनः नहीं उपजती [तबतिसपुरुषकों] इस [कर्मका] कर्त्ता मैंहूं ऐसी देहात्म बुद्धि कैसे होगी [नहोगी] इसहेतुसे स्वतंत्र जो ब्रह्मविद्या है सो किसीकी भी [सहायता] नहीं अपेक्षाकरती केवलअपनहीं मोक्षकेअर्थ प्रकाशितहै॥

तैसे ही जब श्रुतिओंके वाक्यप्रमाणसे आत्मविज्ञान साक्षात् उदयहोताहै तब पुनः अविद्या भ्रम नहीं उपजता ॥ २९ ॥

॥ भावार्थश्लोक २० मेंका ॥

हे लक्ष्मणजी पूर्वकहेप्रकार श्रुतिओंके षट्प्रमाणकरके। जिसकालमें १। इसमुमुक्षुपुरुषकी अविद्या २। भलीप्रकार निःशेषनाशभई ३। फेर ४। नहीं ५। उपजती ६। और जब अविद्याहीनहीं तब तिसकाकार्य जो। इस ७। कर्मका कर्त्ताभोक्ता ८। मैंहूं ९। ऐसी १०। देहात्मसंबंधी

बुद्धि ११। कैसे १२। उपजे १३॥ अर्थात् नहीं उपजती ॥ हे सौम्य दूसरी हेतुसे १४। स्वतंत्रजो १५ ब्रह्मविद्याहै १६। सोकिसीकी भी १७। सहायताकों नहीं १८। अपेक्षाकरती १९। केवलएक आपही २०। मोक्षकरनेके अर्थ २१। विशेषप्रकाशित है २२॥ अर्थात् मोक्षकरनेकों एक ब्रह्मविद्याही स्वयं स्वतंत्र है। "नान्यःपंथाअयनाय"। अतिरथीयोद्धावत् ॥ प्र० हे प्रभो अतिरथी योद्धा किसकोंकहतेहैं सो आप कृपाकरकेकहिये ॥ उ० हे सौम्य योद्धा तीन प्रकारकेहोतेहैं तहां एक रथी दूसरा महारथी तीसरा अतिरथी। तहां रथी उसकों कहतेहैं जो एक रथीसाथअकेला युद्धकरे। अरु महारथी उसकों कहतेहैं जो दशहजार रथीसाथअकेला युद्धकरे। अरु अतिरथी उसकों कहतेहैं जो असंख्यातोंसाथअकेलायुद्धकरे। इनमें जो रथीहै तिसकों दूसरेकीसहायता अपेक्षितहोतीहै। अरु जो महारथीहैं तिसकों भी अन्यकीसहायता अपेक्षितहोतीहै। अरु जो अतिरथीहै तिसकों अन्यकी सहायता अपेक्षित नहीं होती ॥ तैसेही श्रवणज्ञानवाले रथीकों अरु मननज्ञानवाले महारथीकों दैवीसंपदा सत्कर्मोंकी सहायता अपेक्षितहोतीहै। अरु जो आत्मसाक्षात्कार अध्यासज्ञानवाला अतिरथीहै तिसकों सब श्रुतियोंके शब्द आदि प्रमाणोंकरके अविद्याके निःशेषनाशपूर्वक साक्षात् दृढ आत्मानुभवरूपी ब्रह्मविद्या उदयहोतीहै सो विद्या किसी दैवीसंपदासत्कर्मादिकोंकी अपेक्षा न करके मोक्षकरनेके अर्थ केवलएक आपही प्र-

॥ सा तैत्तिरीयश्रुतिराह सादरं न्यासं प्रशस्ताखिल॥
॥ सकर्मणां स्फुटं। एतावदित्याह च वाजिनां ॥
॥ श्रुतिर्ज्ञानं विमोक्षाय न कर्मसाधनम्॥ २१॥

॥ सा तैत्तिरीयश्रुतिः सादरं प्रशस्ताखिलकर्मणां न्यासं।
॥ स्फुटं आह। पुनः एतावत् इति वाजिनां श्रुति आह
[तस्मात्] विमोक्षाय [साधनं] ज्ञानं कर्मसाधनं न ॥२१

॥ सो तैत्तिरीयशाखाकीश्रुति आदरपूर्वक प्रशंसाकियेजे
यज्ञअग्निहोत्रादिसम्पूर्णकर्मतिन्होंका त्याग प्रख्यात क
हतीहै पुनः तैसेही कर्मोंकोत्याग वाजसनेयीशाखाकी
श्रुति कहतीहै [एतदर्थ] मोक्षकेअर्थ आत्मज्ञानहीहै
कर्ममोक्षकोसाधन नहीं ॥ २१ ॥

काधीनहै। तथाच "विद्ययामृतमश्नुते" ॥ २० ॥

॥ भावार्थश्लोक २१ मेंका ॥

हे लक्ष्मणजी सो १। कृष्णयजुतैत्तिरीयशाखाकीश्रुति २।
आदरपूर्वक ३। प्रशंसाकियेजेवेदकीपूर्वकांडकरकेयज्ञअ-
ग्निहोत्रादिसम्पूर्णकर्मतिन्होंका ४। त्यागही ५। प्रख्यात ६।
कहतीहै ७। पुनः ८। तिसहीप्रकार ९। सम्पूर्णकर्मोंकात्यागही
१०। शुक्लयजुवाजसनेयीशाखाकी ११। श्रुति १२। प्रतिपादन
करतीहै १३। तातेमुमुक्षुपुरुषकों विशेषकरकेमोक्षार्थ १४
आत्मज्ञानहीप्रतिपादनकियाहै १५। कर्ममोक्षसाधन १६।

॥ विद्यासमत्वेन तु दर्शित स्त्वया क्रतुर्न दृष्टान्त ॥ मुदाहृतः समः। फलैः पृथक्त्वा द्बहुकारकैः क्रतुः ॥ ॥ संसाध्यते ज्ञान मतो विपर्य्ययम् ॥ २२ ॥

॥ त्वया क्रतुः विद्यासमत्वेन तु दर्शितः [तत्र] समः दृष्टांतं न उदाहृतः फलैः पृथक्त्वात् बहुकारकैः क्रतुः संसाध्यते अतः विपर्य्ययं ज्ञानम् ॥ २२ ॥

॥ तुमने यज्ञादिकर्मको [मोक्षार्थ] ब्रह्मविद्याकेसमानकर के ही प्रतिपादनकिया [परंतु तिसके] समान दृष्टांत नहीं प्रतिपादनकिया [तहांहेतु] फलोंकरके पृथक्होनेसे अरु होताअध्वर्य्युआदिबहुतसामग्रीसे यज्ञादिकर्म साध्यहै इस हेतुसे [कर्मसे] विपर्य्ययज्ञानहै [तहांविशेषताकाअभावहै]

नहींकहा २२॥ ज्ञानादेवतुकैवल्यं अतोज्ञानान्नमुक्तिः॥ २३॥

॥ भावार्थश्लोक २२ मेंका ॥

हे लक्ष्मणजी तुमने१। क्रतुजोहैयज्ञादिकर्मतिनको२। मोक्षकेअर्थ ब्रह्मविद्याकेतुल्यकरके ३। ही४। प्रतिपादनकिया५। परंतु तिनके समान६। दृष्टान्त७। नहीं८। प्रतिपादनकिया९॥ अर्थात् ब्रह्मविद्याको अरु यज्ञादिकर्मोंको - दृष्टान्तकरके तुल्य नहींकहा ॥ हे सौम्य देखो यज्ञादिकर्महै सो फलोंकरके १०। पृथक्होनेसे ११। अरु होता अध्वर्य्युत था नानाकामनावाले नानाकर्त्ता आदि बहुतसामग्रीकरके

१२। यज्ञादिकर्म १३। साध्यहै १४। इसकारणसे १५। कर्मसे विपर्य्यय १६। ज्ञान है १७। यहां सर्वविशेषताका अभावहै अर्थात् ज्ञानवानोंने इसीहेतुसे मोक्षका साधन ज्ञान ही कहाहै कर्म मोक्षका साधन नहीं क्यों जो यज्ञादिकर्म हैं सो अपने नामोंकरके नानाप्रकारकी कामनावाले नानाकर्त्ताकरके नानाफलोंकरके नानाप्रकारसामग्रीकरके नानारूपहैं अरु ज्ञान जो है सो स्वरूपकरके नामकरके एकनिष्कामसुमुक्षुकर्त्ताकरके अरु आत्मापरमात्माकीअभेदताहूपी फलकरके एक ही रूपहै। तातें यज्ञादिकर्मसे विपर्य्यय अर्थात् विरुद्ध ज्ञानहै तम प्रकाशवत् एतदर्थ इनका समुच्चय न होयसे केवल ज्ञान ही मोक्षका साधन श्रुतिस्मृतिद्वारा विद्वानोंने निश्चय किया है। "ज्ञानं विमोक्षाय न कर्मसाधनम्" ॥ २२ ॥ अब कर्म अरु ज्ञानके अधिकारीको श्रवणकरो ॥

॥भावार्थश्लोक२३मेंका॥

हे लक्ष्मणजी जिसपुरुषको १ मैं हूं २ ऐसी ३ देहादिअनात्माविषे आत्मबुद्धीहै ४॥ अर्थात् यह संघातरूपदेहहीमें हों इसप्रकारकी अनात्माविषे आत्मबुद्धीहै। जिसपुरुषको १ सह ५। अकरणप्रत्यवायजन्य दोष ६। प्रसिद्धहै ७। तथा स एकाहं जपहीनस्तु संध्याहीनो दिनत्रयम्। शूद्रत्वं लभते न नित्य पादुपचलसंशयः॥ अर्थात् जिसपुरुषको स्थूल सूक्ष्म देह दोनोंसाथमिलके देहात्मभावसहित मैं कर्त्ता भोक्ताहों ऐसी अहंकारबुद्धिहै जिसपुरुषको वेदशास्त्रकरके विधान

॥स प्रत्यवायो ह्यहमित्यनात्मधीरज्ञ प्रसिद्धो न ॥
॥तु तत्त्वदर्शिनः । तस्माद्बुधैस्त्याज्यमविक्रियात्म-॥
॥भिः विधानतः कर्मविधिः प्रकाशितम् ॥ २३॥

॥अस्य अहं इति अनात्मधी [तस्य] सः प्रत्यवायः प्र-
सिद्धः तत्त्वदर्शिनः तु न तस्मात् अविक्रियात्मभिः बुधैः
विधि प्रकाशितं कर्म विधानतः त्याज्यम् ॥ २३॥

॥जिसकों मैंहूं ऐसी देहात्मबुद्धीहै [तिसकों] यह [अक-
रणजन्य] दोष प्रसिद्धहै । अरु तत्त्वदर्शीकों तो येदोष
नहीहै तिसकारणसे शुद्धअंतःकरणवाले ज्ञानियोंने
वेदोक्तविधानकरके प्रकाशितहुआ [जो] कर्म [सो] वि-
धिपूर्वक त्यागकरनेयोग्य [कहाहै] ॥ २३॥

कियेजे अग्निहोत्रादिकर्महैं तिनकेकरनेका अधिकारहै
जो कदापि वोपुरुष कर्मकोंत्यागकरेतो अवश्यदोषभागी
होगा ॥ अरु जो तत्त्वदर्शी आत्मज्ञानीपुरुषहै उनकों ८।
तो ९। वो अकरणजन्य प्रत्यवाय दोष। नहींहै १०॥ क्योंजो
आत्मज्ञानीकों देहादिअनात्मविषे आत्माभिमानबुद्धिहै
नहीं एतदर्थ ज्ञानवान्कों कर्मके अकरणजन्यदोषहैन-
हीं इसहेतुसे ज्ञानवान्कों कर्मकाअधिकारनहीं। तथाच
"यस्त्वात्मरतिरेवस्यादात्मतृप्तश्चमानवः । आत्मन्येवचसं
तुष्टस्तस्यकार्यंनविद्यते" ॥ भगवद्गीता अ० ३ के १७ मेंश्लो-

कर्मं ॥ जिसकारणसे १२। शुद्धअंतःकरणवाले १४। ज्ञानियोंसे १३। वेदोक्तविधानकरके १५। प्रकाशितहुआ १५ जो कर्म १६ सो विधिपूर्वक १७। त्यागकरनायोग्यकहाहै- १८॥ अर्थात् सर्वप्रकार अनात्माभिमानबुद्धित्यागकरनेयोग्यहै। अरु यावत् पर्यंत यथार्थआत्मज्ञाननहोय तावत् पर्यंत कर्मत्यागनकरै अरु जब श्रवण मनन निदिध्यासनकरके दृढआत्मज्ञानहोय तब संन्यासलेके कर्मका त्यागकरै। तथाच "एतमेव प्रव्राजिनो लोकमिच्छन्तः प्रव्रजन्ति"। बृ॰उ॰अ॰६के चतुर्थब्रा॰की २२ श्रुतिमें। तथाच "यदहरेवविरजेत्तदहरेवप्रव्रजेत्" इतिश्रुतिः॥

॥ भावार्थश्लोक २४ मेंका॥

हे लक्ष्मणजी शुद्धअंतःकरणवाला जिज्ञासुपुरुष १ श्रद्धासंपन्नहोय २। सद्गुरुके ३। उपदेशसे ४। निश्चयपूर्वक ५। तत्त्वमसि ६। इत्यादि ७। वेदकेमहावाक्योंकेविचारसे ८। परमात्मा अरु जीवात्माको ९।१०।११। अभेदएकरूप १२। भलीप्रकारअनुभवकरके १३। सुमेरुपर्वतकेसमान १४।१५। अचल १६। सुखी १७। होय १८॥ अर्थात् सम्यक् आत्मज्ञानद्वारा अचलसुख ब्रह्मानन्दकों प्राप्तहोय॥

॥ शिष्यउवाच॥

हे गुरो हे स्वामीजी आपने कहा कि तत्त्वमस्यादिमहावाक्यद्वारा जीवात्मा अरु परमात्माकों अभेदएकजानके सुखीहोय। सो इसविषे हमकों संशयहोताहै जो जीव ईश्वरकी एकता नहींबनती क्योंजो प्रत्यक्षादि प्रमाणोंकरके

विरोधआवताहै प्रत्यक्षकरके जीवकों जन्ममरण सुखदुः
खादि संसार अरु कर्मके बंधन पायेजातेहैं। अरु ईश्वर
कों जन्म मरण सुख दुःखादि हैं नहीं ताते इनकी एकता न
भई। अरु आपका कहना यहहै कि जो जीव सोई ईश्वर
यह दोनों एक ही हैं। तब इसकहनेसे ईश्वरसे व्यतिरिक्त
संसारके पाप पुण्यसुखदुःखादिकोंका कर्त्ता भोक्ता को
ईनहीं ईश्वरहीकों संसारभया तब श्रुतिके वाक्यसे विरो-
धआया। तथाच "अनश्नन्नन्योऽभिचाकशीति"। मुं०उ०
के ३में मुंडककी प्रथम श्रुतिमें॥ अरु हे भगवन् आपके
वाक्यानुसार जो जीव ईश्वर एकहीहैं तो जीवसे व्यतिरि-
क्त ईश्वरका अभावआया अरु जब ईश्वरका अभावआ-
या तब जीवहीकों सर्वनियंतृत्व सर्वज्ञातृत्व स्वतंत्रत्वादि
आया अरु संसारित्वका तिसकों अभावआया जब जी-
वकों संसारित्वका अभावआया तब इसप्रसंगसे संसार
अरु संसारी दोनोंका अभावभया तब पुनः प्रत्यक्षादिप्र-
माणकरके विरोधआया क्योंकी संसार अरु संसारी प्र-
त्यक्ष पायेजातेहैं। अरु श्रुतिके प्रमाणकरकेभी विरोध
आवताहै क्योंकी श्रुतिने संसारका भोक्ता जीवकोंकहाहै
। तथाच "तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्ति', 'अनीशया शोचति मु-
ह्यमानः', 'ध्यायतीव लेलायतीव" इत्यादि। ताते प्रत्यक्ष अ-
रु श्रुतिके प्रमाणोंकरके जीव ईश्वरकी एकताविषे विरोध
आवताहै आप इनकी एकता कैसेकहतेहौ॥ हे भगवन्
और श्रवणादिके वेदके तीन कांड हैं कर्म उपासना ज्ञान

इन तीनोंकांडोंकरके जीव ईश्वर भिन्न२ प्रतिपादनकियेहैं
ताते इनकी एकता नहींबनती तहां प्रथम कर्मकांडकी श्रुति
।तथाच "मंत्रेषु कर्माणि कवयो यान्यपश्यंस्तानि त्रेतायां
बहुधा सन्ततानि तान्याचरथ नियतं सत्यकामा एषवः प-
न्था स्वकृतस्यलोके" मु०उ०के१मुंडककी१श्रुति। इसप्रका
र कर्मकांडकी श्रुतिने जीव ईश्वरका भेद सूचित कियाहै।
अब उपासनाकांडकी श्रुति।तथाच "द्वा सुपर्णा सयुजा
सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते। तयोरन्यः पिप्पलंस्वा
द्वत्त्यनश्नन्नन्योऽभिचाकशीति" मु०उ०के३मुंडककी१श्रुति
इसप्रकार उपासनाकांडकीश्रुतिने भी जीव ईश्वरको भि-
न्न२ सूचितकियाहै। अरु तैसेही ज्ञानकांडकीश्रुति भी
जीव ईश्वरका भेद ही सूचनाकरतीहै।तथाच "तरतिशो
कमात्मवित्" छां०उ०के७प्र०की१श्रुतिमें।तथाच "आ-
त्मावा अरे द्रष्टव्यःश्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः"।
बृ०उ०के अ०६के५ब्रा०की६ठी श्रुतिमें। इत्यादि ज्ञानकां-
डकी श्रुतियोंने भी जीव ईश्वरकी पृथक्ताही सूचितकि-
याहै। ताते हे भगवन् यह जो कर्म उपासना ज्ञान तीनों
कांडोंकी श्रुतियोंने जीव ईश्वरको भिन्न२ ही सूचितकि-
याहै सो क्या अनर्थ कियाहै। अरु सर्व प्राणीमात्र भी जी
व ईश्वरको भिन्न मानतेहैं सोभीक्या असत्यही मानतेहैं।
नहीं यथार्थमानतेहैं। ताते हे भगवन् जीव ईश्वरकी अ-
भेदता नहीं सिद्धहोती अरु आप इनकी एकता प्रकाश-
करतेहो ताते जिसप्रकार जीव अरु ईश्वरकी अभेदताहै

सोप्रकार मेरेबोधार्थ कृपाकरके कहिये ॥

॥ गुरुरुवाच ॥

हे सौम्य तुमने श्रुति अरु प्रत्यक्षादिप्रमाणोंकरके जीव ईश्वरको भिन्न२ प्रतिपादनकिया सो अस्तु परंतु इनको भिन्न२ जाननेकरके बहुतसी श्रुतियोंसे विरोध आवताहै। तिनको श्रवणकरो। तथाच "अयमात्माब्रह्म, प्रज्ञानंब्रह्म, अहंब्रह्मास्मि, एतद्ब्रह्माद्वयं सदानन्दचिन्मात्रं आत्मैव, तदेतत्सत्यमात्मैवब्रह्म, [illegible] किल्वं, सूक्ष्मात्सूक्ष्मतरंनित्यं, तत्त्वमेव त्वमेवतत्, सआत्मातत्त्वमसि"। इत्यादिबहुतश्रुतियोंकरके तुमारेकहनेविषे विरोधआवताहै। अब स्मृतिआदिक भी श्रवणकरो। तथाच "सोहं सच त्वं सच सर्वमेतत्, आत्मनो ब्रह्मणो भेदमसंतं कः करिष्यति, एकस्त्वमात्मा पुरुषः पुराणः, सकलमिदमहं च वासुदेवः, जीवो ब्रह्मैव नापरः, सर्वेषयमतःपरम्, ओंकारं यज्ञतपसां, क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि, उपद्रष्टानुमंता च, वासुदेवः सर्वमिति" इत्यादिस्मृतियोंकरकेभी भेदवादसे विरोधआवताहै तातें हे सौम्य बहुतसी श्रुति स्मृतियोंने ब्रह्म आत्माकी एकता नेमकरके प्रतिपादनकियाहै तातें आत्माही ब्रह्म है ब्रह्मही आत्माहै अरु सत्यता चैतन्यता आनंदता अक्रियता असंगता इत्यादि लक्षणप्रमाणकरके इनकी अभेदताही है एक माया अरु अविद्याकी विषमतासे भेद भासैहै। जैसे घट अरु मठ इनकी छोटी बडी विषमतासे एक आकाशविषे घटाकाश मठाकाशका भेद भासैहै

परंतु निरुपाधि महदाकाशविषे भेदकोई नहीं। तैसेही २ माया अरु अविद्याकी उपाधिसे चैतन्याकाशविषे जीव ईश्वरकी पृथकता भासेहै सो अज्ञानके आश्रय भासेहै अरु जब अज्ञान दूरहोताहै तब तत्कल्प माया अरु अविद्यारूप कल्पित उपाधि दूरहोतीहै तब चैतन्याकाशरूप आत्मा एकहीहै महदाकाशवत्। ताते हेप्यारे श्रुति स्मृति युक्ति आदिप्रमाणसे भलीप्रकार विचार देखो जो उपाधिके २ अभावसे ब्रह्म आत्माविषे भेद किंचित्मात्र भी नहीं। अरु जो पुरुष अज्ञानकरके ब्रह्म आत्माविषे भेदमानतेहैं सो वारंवार जन्म मरणरूप महती विपत्तिको प्राप्तहोतेहै। तथाच "नात्रकाचनभिदास्ति, नैवकाचनभिदास्ति, अत्र भिदाइव मन्यमानः शतधा सहस्रधा भिन्नो मृत्योः स मृत्युमाप्नोति, मृत्योः स मृत्युमाप्नोति इह नानेव पश्यति, यदाह्येवैष एतस्मिन्नुदरमन्तरं कुरुते, अथतस्य भयं भवति अन्योऽसावन्योऽहमस्मीति न स वेद यथापशुरेवं स देवानां"। इत्यादि प्रकार अनेक श्रुतियोंने आग्रहपूर्वक मुमुक्षुकेअर्थ भेददृष्टिका निषेधकियाहै अरु अनर्थकाकारणकहाहै। ताते जिसको मोक्षकी कामनाहै तिसपुरुषने ब्रह्म आत्माकी एकतारूप विज्ञानको भलीप्रकार विचार अभ्यासकरनाचाहिये॥

॥शिष्यउवाच॥

हे भगवन् आपने श्रुति स्मृति युक्तियोंसे जीव अरु ईश्वरकी एकताकही परंतु अहंसुखी अहंदुःखी इत्यादिक-

रके आत्माकों प्रत्यक्ष संसारित्व जीवत्व पायाजाताहै अरु आप इसकों ब्रह्मसे अभेद ब्रह्मरूपहीकहतेहौ सो हमारेचित्तमेंयथार्थ नहींआवता ताते हमारे इसबोधार्थ कृपाकरके फेरकहिये॥

॥गुरुरुवाच॥

हे सौम्य आत्माविषे जो संसारप्रतीतहोताहै सो अविद्याकरके आरोपितहै ताते मिथ्याहै वास्तवकरके आत्माविषे संसारनहीं। तथाच "असङ्गो ह्ययं पुरुष इति" इतिश्रुतिः। ताते वास्तवसे आत्मा असंसारी ही है केवल अविद्याकरके संसारीवत् प्रतीतहोताहै। जैसे नेत्ररोगवाले कों अर्थात् जिसकों कमलवायहोताहै तिसकों जो शुभ्र वस्तुहोतीहै सो भी पीत प्रतीतहोतीहै। तैसे ही आत्मा जो असंसारीहै सो अज्ञानियोंकों संसारीवत् प्रतीतहोताहै वास्तवमें संसारीनहीं। तथाच "अयमात्मा सन्मात्रो नित्यशुद्धबुद्धः सत्यो मुक्तो निरंजनो विभुरद्वयानंदः परःप्रत्यगेकरसः" इतिश्रुतिः। आत्मा नित्य शुद्ध बोधरूप मुक्तस्वभाव है। हे सौम्य संसार अनात्माकाधर्महै आत्माकाधर्मनहीं अरु जो कदापिसंसारआत्माकाधर्ममानोगेतो कदापि आत्माकामोक्षनहीं अरु श्रुतिद्वारा आत्माकामोक्ष सुनाजाताहै। तथाच 'तरति शोकमात्मवित्', 'विमुक्तश्च विमुच्यते', 'ब्रह्मैव सन् ब्रह्माप्येति', 'ब्रह्मविद्ब्रह्मैव भवति' इत्यादिश्रुति। ताते आत्माविषे केवल अविद्याकरके संसार प्रतीतहोताहै वास्तवमें आत्मा सदा असंसारी मुक्तरूपहीहै। जैसे पुरुष स्वप्नमें अपनेर

आपको कुछकाकुछ देखतेहैं कभी राजा कभी भिखारी क-
भी देवता कभी पशु कभी जीता कभी मरा कभी नरकमें
कभी स्वर्गमें इत्यादि जोकुछ अपनेआपको यह देखतेहैं
सो सर्व निद्रादोष अवस्थाकेभेदसों देखते हैं सो देखना उ
नका वास्तवमें सत्यनहीं परंतु स्वप्नमें स्वप्नके व्यवहारकों
असत्य नहीं मानते उसअवस्थाविषे जोकुछ वो देखते हैं
सो सर्व सत्य ही मानतेहैं अरु उनकों वो उसअवस्थामें स-
र्व सत्य ही हैं। हे सौम्य तैसे ही अज्ञानअवस्थाविषे मोहा-
दि दोषकरके जोकुछ द्वैतप्रपंच दीखताहै सो सर्व सत्य ही
है। तथाच "यत्र हि द्वैतमिव भवति तदितर इतरं पश्यति
तदितर इतरं जिघ्रति तदितर इतरꣳ रसयते तदितर इत
रमभिवदति तदितर इतरꣳ शृणोति तदितर इतरं मनुते
तदितर इतरꣳ स्पृशति तदितर इतरं विजानाति" इतिश्रुति
बृ० उ० के चतुर्थ वा षष्ठ अ० के मैत्रेयी ब्रा० विषे। ताते उस
अज्ञानअवस्थाविषे जो कर्मकांड उपासनाकांड ज्ञानकांड
की द्वैतसूचक श्रुतियाँहैं सो सर्व सत्य ही हैं तिसअवस्था-
विषे कोईभी अनर्थनहीं। अरु जब ब्रह्मविद्याके उदयहुये
पीछे बोधरूप जाग्रत्अवस्थाको प्राप्तहोताहैं तब स्वप्नवत्
द्वैतरूप प्रपंच सर्व मिथ्याही होताहै केवल एक अपने-
आप आत्मा हीकों सर्वत्र सर्वरूपसे परिपूर्ण अद्वैत ही दे
खताहैं। जैसे निद्रावालेपुरुष जब जाग्रतअवस्थाको प्राप्त
होते हैं तब स्वप्नके सर्वव्यवहार मिथ्याहीजानके एक अपने
आपकों सत्यरूप देखतेहैं। तैसे ही जब बोधरूप जाग्रत

अवस्थाकों प्राप्तहोतेहैं तब अविद्याजन्य सर्वप्रपंच मिथ्याही होताहै तिस विज्ञानघन अवस्थाविषे जो ब्रह्म अरु आत्मा-की अभेदएकताप्रतिपादकजे श्रुतियाँहैं सो भी अनर्थनहीं।

हे सौम्य प्रमाणशिरोमणि जे श्रुतिके महावाक्यहैं सो ब्र-ह्म अरु आत्माकी अभेद एकताही प्रतिपादनकरतेहैं। त-थाच "एतदात्म्यमिदंसर्वं तत्सत्यं स आत्मा तत्त्वमसि"। "अयमात्माब्रह्म"। इत्यादि श्रुति आत्मा अरु ब्रह्मकी अभे-द एकता महावाक्योंद्वारा प्रतिपादनकियाहै। तातेआत्मा सदा अद्वैत सर्वउपाधिसेरहित सैंधवलवणवत् एकरस विज्ञानघनहै। तथाच "स यथा सैन्धवघनोऽनन्तरोऽबाह्यः कृत्स्नो रसघन एवैवं वा अरेऽयमात्माऽनन्तरोऽबाह्यः कृत्स्नो प्रज्ञानघनः" बृ० उ० अ० ६ के ब्राह्मण ५ में। अरु जैसे जलसमुदायरूप समुद्रविषे नानाप्रकारके लहर बुद्बुद झाग भँवर आदि अपने नाम रूपसमेत पृथक् २ कहने अरु देखनेविषे आवतेहैं परंतु वास्तवकरके एक समुद्र नामा जलसमुदाय हीहै जलसे इतर इनकी पृथक्सत्ता का अभावहै। तैसेही जोकुछ नामरूपात्मक जगत्नाम से नानारूप द्वैतप्रपंचभासेहै अरु कहने सुननेविषेआवे है सो सर्व वास्तवकरके एक आत्मसत्ताहीहै तिससे इ-तर संसारसत्ताका अभावहै ताते एक अद्वैत आत्माही है। तथाच "सत्यं ज्ञानमनन्तंब्रह्म' एकमेवाद्वितीयम्' स-र्वंखल्विदंब्रह्म' एकोरुद्रो न द्वितीयोवतस्थे' एकोदेवोनारा-यणः' एकएवहिभूतात्मा' एकस्तथासर्वभूतान्तरात्मा' एकं

सद्विप्रा बहुधा वदन्ति, एकः सन् बहुधा विचचार, एकं सन्तं बहुधा
कल्पयन्ति, एको दधार भुवनानि, एको देवो बहुधा सन्निविष्टः, त्व-
मेकोसि बहूननुप्रविष्टः, एको देवः सर्वभूतेषु गूढः, तदेतद्ब्रह्मा-
पूर्वमनपरमनन्तरमबाह्यं, ईशावास्यमिदं सर्वं, सद्वीदम-
वं, विद्धीदं सर्वं, पुरुष एवेदं सर्वम्, ओंकार एवेदं सर्वं, आत्मै-
वेदं सर्वं, ब्रह्मैवेदं विश्वमिदं वरिष्ठम्, नान्यत्किंचन, मायामात्र-
मिदं द्वैतम्, नेह नानास्ति किंचन, नह्यस्ति द्वैतसिद्धिः" ॥ इत्यादि
श्रुतियोंने एक अद्वैत आत्माही प्रतिपादन कियाहै आत्मासे
इतर एक परमाणुमात्रकी भी पृथक् सत्ता नहीं। हे सौम्य तुम
को जो द्वैत प्रतीत होताहै सो असत्है "यद्द्वैतं तदसत्" तातें
सत्य अद्वैत एक आत्मसत्ताही है अपने विषे आपही सुशोभि-
तहै द्वैत कुछ नहीं। तथाच स्मृतिः "ज्ञानं विशुद्धं विमलं विशोकं
एकः समस्तं यदिहास्ति किंचित्, विशुद्धं ज्ञानमेवैकं, अतः परत-
रं नान्यत्, वासुदेवः सर्वमिति, वेदार्थः परमाद्वैतं" । इत्यादि स्मृ-
तियोंनेभी आत्माको अद्वैतही प्रतिपादन कियाहै तातें या-
वत् जो कुछ है तावत् सर्व एक आत्मसत्ताही है सो आत्मा कै-
साहै "अणोरणीयान्" सूक्ष्मसे भी महासूक्ष्म है तातें तद्रूप
वत् स्थितहै। जैसे आकाश सर्वत्र परिपूर्ण निराकार निर्ले-
प तद्रूपवत् स्थितहै। तैसेही आत्मा "आकाशवत्सर्वगतः
स सूक्ष्मः" इत्यादि श्रुतिप्रमाण सर्वत्र एकरस परिपूर्ण है ॥ यां-
का आपनेआप जो आत्मा तद्रूपवत् स्थितहै सो इसकहने
से प्राप्त सिद्ध भया ॥ अब हे ज्ञानी यहां हम तुमसे यह
प्रश्न करते हैं कि तुमने इसका अनुभव कियाहै वा नहीं

जो तुमने शून्यका अनुभवकियाहै तो वो शून्य नहीं क्योंकि जो वस्तु अनुभवकीजातीहै सो अभावरूप शून्य नहींहोती अरु जो तुमने शून्यका अनुभवनहींकिया तो शून्यसिद्धभया यह तुम्हाराकहना असत्यहै क्यों कि जो वस्तु अनुभव नहींभई तिसका सिद्धहोना पापोके शृंगवत् असत्यहै। तातें सर्वविशेषताके अभावसे जहां तुमको शून्यभासताहै तहां शून्य कुछवस्तु न होके एक महासूक्ष्म निर्विशेष सामान सर्वाधिष्ठान एकरस आत्मसत्ताहीहै सो आत्मा शून्यकाभी ज्ञाताहै जो शून्यसे पृथक् शून्यका ज्ञाता नहोय। तो शून्य कैसेसिद्धहोय ताते जिस चैतन्यआत्माकरके शून्यका अस्तित्व नास्तित्व सिद्धहोताहै सो शून्यनहीं। एतदर्थ सर्व श्रुति स्मृतिके प्रमाणसे एकमहासूक्ष्म अद्वैत आत्माही सिद्धभया तिस आत्मतत्त्वमें माया अरु अविद्याकरउपाधिके अभावसे जीव ईश्वरकी अभेदएकताहोतीहै ताते हे प्रियदर्शन श्रद्धासम्पन्नहोय गुरुके मुखारविंदसे तत्त्वमस्यादि महावाक्योंका उपदेश श्रवणकर जीव ईश्वरके भेदकोंमिटाय एकात्मतत्त्वविषे स्थितहोय सुमेरुपर्वतवत् अचल सुखीहोवो ॥ २४ ॥ हे सौम्य इन जीव ईश्वरकी एकता आचार्योंने भागत्यागलक्षणाकरके भी कहीहै तिसको भी सावधानतासे श्रवणकरो ॥ ॐ तत्सत् ॥

॥ भावार्थश्लोक २५ मेंका ॥

हे लक्ष्मणजी यह जो "तत्त्वमसि" महावाक्यहै तिसको। वाक्यार्थके जाननेके प्रकारमें १ प्रथम ३ पदके अर्थका-

॥आदौ पदार्थावगति र्हि कारणं वाक्यार्थविज्ञा-॥
॥नविधौ विधानतः। तत्त्वंपदार्थौ परमात्मजीवका॥
॥वसीति चैकात्म्यमथा नयो र्भवेत् ॥ २५ ॥

॥वाक्यार्थविज्ञानविधौ आदौ विधानतः पदार्थावगतिः हि कारणम् अथ तत्त्वंपदार्थौ परमात्मजीवकौ त्वं असि इति अनयोः ऐकात्म्यं भवेत् ॥ २५ ॥

॥वाक्यार्थकेविज्ञानप्रकारमें प्रथम विधिपूर्वक पदार्थ-विज्ञान ही कारणहै। अब तत्त्वं इनपदोंकाअर्थ पर-मात्मा और जीवात्माहै और असि यहपदकरके इनदो-नोंका एकत्व होताहै ॥ २५ ॥

विज्ञान३। ही४। कारणहै५॥ अर्थात् 'तत्त्वमसि' यह जो महावाक्यहै जिसके तीन पदहैं तहां प्रथम तत् दूसरा त्वं तीसरा असि पदहै तहां तत् पद ईश्वरकावाच्यहै और 'त्वं' पद जीवका वाच्य है और 'असि' यह क्रियापद है॥ अब७। 'तत्' और 'त्वं' इनपदोंकाअर्थ८। परमात्माअ-रु जीवात्माहै९। जिनको१०। 'असि'११। इसक्रियापदकर-के१२। सर्वाधिष्ठानचैतन्यसत्ताविषे भागत्यागलक्षणा-करके इनदोनोंका१३। एकत्व१४॥ अर्थात् अभेदभा-व॥ होताहै१५॥—॥२५॥—॥ अब परमात्मा अरु जीवा-त्माका वाच्यार्थकरके जो जीव ईश्वरकाभेद जिसको त्या

॥प्रत्यक्परोक्षादिविरोधमात्मनोर्विहाय संगृह्य॥
॥तयोश्चिदात्मतां। संशोधितां लक्षणया च लक्षितां॥
॥तां ज्ञात्वा स्वमात्मानमथाद्वयो भवेत् ॥ २६॥

॥तयोः आत्मनोः प्रत्यक्परोक्षादिविरोधं विहाय चिदा-
त्मतां संगृह्य पुनः लक्षणया संशोधितां लक्षितां स्वं
आत्मानं [पुनः] ज्ञात्वा अथ अद्वयः भवेत् ॥२६॥

॥उनदोनो परमात्माजीवात्माका प्रत्यक्षअरुपरोक्षआ-
दिकरकेजेविरोधतिसको त्यागके चैतन्यरूपताको ग्र-
हणकरके फेर भागत्यागलक्षणाकरके शोधित लक्षिता
को अपने आत्माको जानकरके फेर अभेद होय ॥२६॥

गके लक्षार्थ चैतन्यअधिष्ठानविषे दोनोंकी एकताहोती
है सो आगे लक्षणाकरके प्रतिपादनकरते है तिसको१
सावधानहोकर श्रवणकरो ॥—॥

॥भावार्थश्लोक२६मेंका॥

हे लक्ष्मणजी उनदोनो१ परमात्मा अरुजीवात्मा वा
ईश्वर अरु जीवका२ वाच्यार्थप्रमाण प्रत्यक्ष अरु परोक्षा-
दिकरके जो विरोधहै तिसको३॥ अर्थात् वाच्यकरके १
ईश्वर परोक्ष सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् धर्म यश ऐश्वर्य श्री-
य ज्ञान वैराग्य इन षट् ऐश्वर्यकरके संपन्नहै। अरु
जीवका वाच्य प्रत्यक्ष अल्पज्ञ अशक्त क्षुधा पिपासा

शोक मोह जरा मरण इन षट्भावविकारकरके सम्पन्नहै
ताते वाच्यविषे ईश्वर अरु जीवका प्रत्यक्ष परोक्षादिकर-
के विरोधहै तिसविरोधको ॥ त्यागकरके ४। दोनोंविषे
अर्थात् ईश्वर अरु जीवविषे जो लक्षरूप अविरोधी अभेद
चैतन्यरूपताको ५। ग्रहणकरके ६। फेर ७॥ अर्थात् ईश्व-
र जीवके वाच्यविषे॥भागत्यागलक्षणाकरके ८। वाच्यार्थ
केत्यागपूर्वक शोधित ९। चैतन्यरूपलक्षिताको १०। सो-
ई चैतन्य अपनेआप ११। आत्माको १२। जानकरके १३॥
अर्थात् सोई चैतन्यआत्मा मैंहूं इसप्रकार जानकरके॥पु-
नः१४। परमात्माकेसाथ भेदसेरहित अभेद१५। होय१६॥
॥–॥२६॥–॥ अब जिसप्रकार भागत्यागलक्षणाकरके
ईश्वर अरु जीवका जो वाच्यरूप उपाधिभेद तिसकेत्याग
पूर्वक लक्षरूपचैतन्यविषे इनकी एकताहोतीहै तिसको
भी सावधानतासे श्रवणकरो ॥

॥भावार्थश्लोक२७मेंका॥

हे लक्ष्मणजी ईश्वर अरु जीव किंवा परमात्मा अरु
जीवात्मा इनकी वास्तव चैतन्यस्वरूपताविषे एकात्मता१
होनेसे २। केवलजहतीलक्षणाभी ३। नहीं३। संभवती४।
अरु तैसेही ५। अजहल्लक्षणाकरके भी एकता नहीं सं-
भवती ६। क्योंजो वाच्यविषे ईश्वर जीवका विरोधहै७।८
इसहेतुसे 'सोयंदेवदत्तः' इसपदार्थ ८। वत् ९। तत्त्वंपद-
की १०॥ अर्थात् परमात्मा जीवात्माकी॥ विरोधताके ११
भागत्यागलक्षणाकरके एकताकरनी १२। युक्तहै १३॥१

॥एकात्मकत्वाज्जहती न संभवे तथाऽजहल्लक्ष॥
॥णया विरोधतः। सोयंपदार्थाविव भागलक्ष॥
॥णा युज्येत तत्त्वंपदयो रदोषतः ॥ २७॥

॥[ईश्वरजीवयोः] एकात्मकत्वात् जहती [लक्षणा] न संभवेत् तथा अजहल्लक्षणया विरोधतः [सापिनसंभवेत्तस्मात्] सोयंपदार्थौ इव तत्त्वंपदयोः अदोषतः भागलक्षणा युज्येत ॥२७॥

॥[ईश्वरजीवकी] एकात्मतासे जहल्लक्षणा नहीं संभवै तौ तथा अजहल्लक्षणाकरकेभी विरोधहै [तातेवोभीनहींसंभवती तिसकारणसे] सोयंपदार्थ वत् तत्त्वंपदकी निर्दोषतासे भागत्यागलक्षणा युक्तहै ॥ २७ ॥

अर्थात उचितहै ॥

॥ शिष्यउवाच ॥

हे प्रभो परमात्मा अरु जीवात्माकी वास्तवमें अभेदता होनेसे उन दोनोंविषे जहत्लक्षणा अरु अजहत्लक्षणा जो नहीं संभवती अरु जिस भागत्यागलक्षणाकरके इनकी एकताहोतीहै। तिनलक्षणाओंकेस्वरूप अरु जिसप्रकार एकताहोतीहै सो सर्व आपकृपाकरके कहिये ॥

॥ गुरुरुवाच ॥

हे सौम्य अब इसको सावधानहोके श्रवणकरो जिसको

लक्षणा कहते हैं सो तीनप्रकारकी है तहां एक जहल्लक्षणा दूसरी अजहल्लक्षणा तीसरी जहद जहल्लक्षणा है। तहां जहल्लक्षणा त्यागसूचकहै अरु अजहल्लक्षणा अत्यागसूचकहै अरु जहद जहल्लक्षणा त्याग अरु अत्याग उभयसूचकहै। तहां जीवात्मा अरु परमात्माकी अभेदताविषे जहल्लक्षणा जो सर्वथा त्यागसूचकहै अरु अजहल्लक्षणा जो सर्वथा अत्यागसूचकहै सो दोनो लक्षणा नहीं संभवती क्यो जो जीवात्मा अरु परमात्माका वाच्यविषे भेदहै अरु लक्ष्यविषे अभेदहै ताते केवल त्यागसूचक अरु केवल अत्यागसूचक ऐसी जे जहद अरु अजहत लक्षणा सो न होयके एक जहद जहल्लक्षणा जो त्याग अरु अत्याग दोनोंकी सूचकहै तिसकरके अभेदतायुक्त है ॥ अब प्रथम जहल्लक्षणा कहतेहैं कि जो त्यागसूचक होनेसे जीव अरु ईश्वरकी एकताविषे नहीं संभवती क्यो जो आत्मासत्यरूपहै तिसका सर्वथा त्याग नहीं संभवता। जैसे किसीनेकहा जो 'गंगायांघोषः' गंगाविषेग्रामहै यह जो शब्दहै सो अपनेअर्थको त्यागदेताहै क्यो जो गंगाविषेग्राम होता नहीं ताते इस शब्दके वाच्यार्थको त्यागके लक्षणाकरके अर्थनिकसताहै जो गंगाविषे ग्राम नहीके गंगाके तट विषे ग्रामहै यह अर्थभया सो इसविषे जो लक्षणाभई सो लक्षणाभी एकताविषे बनती नहीं जो कहिये कि उपाधिसहित जीवहै सो ब्रह्महै ही नहीं मिथ्याही है तो यहभी नहीं बनता क्यो कि जो जीव मिथ्याही होता तो ब्रह्म

के साथ इसकी एकता किसीप्रकार नहोती अरु श्रुतिने (
इसकी एकताकहीहै । तथाच "सआत्मातत्त्वमसि" "अयमा
त्माब्रह्म" "ब्रह्मविद्ब्रह्मैवभवति" । तातें यह जहत्लक्षणाजी-
व ईश्वरकी एकताविषे नहीं बनती ॥ अरु अजहत्लक्षणा
भी असंभवहै जैसे किसीने कह्याकी 'शोणोधावति' अ-
र्थात् शोणकहिये लालरंग सो दौडताहै अर्थ इसका य-
ह भया जो लालरंगकी घोडिका अश्व आदिजो पशुहै
सो दौडताहै तातें 'शोणोधावति' इसवाक्यके अर्थकाकोई
भी अंशत्यागनहींहोता तौभी अर्थ ग्रहणहोताहै । इसी
प्रकार ऐसाकहिये जो उपाधिसहित यहजीव ब्रह्महै तो (
यह अजहत्लक्षणाकरके भी जीवकी ब्रह्मकेसाथ एकता नहीं
बनती क्योंजो जीवकावाच्य अल्पज्ञ दुःखी कर्त्ता भोक्ता
है । तथाच "अनीशयाशोचति मुह्यमानः" "कर्त्ताहं सुख
दुःखभोक्ता" इत्यादिश्रुति । तातें वाच्यविषे एकता नहींसं
भवती क्योंजो ईश्वरकावाच्य परोक्ष सर्वज्ञ सुखीहै अरु
जीवकावाच्य अपरोक्ष अल्पज्ञ दुःखीहै तातें ईश्वर जीव
केवाच्यभेदहोनेसे अजहत्लक्षणा नहीं बनती क्योंजो एक-
ताहै तातें दोनोंका त्याग नहीं बनता अरु अजहत्लक्ष-
णाकरकेभी दोनोंकी एकता नहीं बनती क्योंजो वाच्यरू-
प उपाधिसहित ईश्वर जीव एकनहीं इनका परस्पर वा-
च्यभेदहै तातें सर्वथा उपाधिसहित भी एकता नहीं बनती।
अर्थात् वाच्यरूप उपाधिसहित ईश्वर जीवकी एकता-
का सर्वथा त्यागभी नहीं बनता अरु दोनोंविषे वाच्य-

रूप उपाधिका भेद होनेसे उपाधिसहित सर्वथा ग्रहणभी नहीं बनता ताते ईश्वर अरु जीवकी एकताविषे जहत् अरु अजहत् दोनों लक्षणा नहीं संभवती । अब जिस जहदजहत् लक्षणाकरके इनकी एकताहोतीहै तिसकों श्रवणकरो हे सौम्य जहदजहत्‌लक्षणा उसकों कहते हैं कि एक अंशकों त्यागके एक अंशका ग्रहणकरना । जैसे किसीनेकहाकि "सोयं देवदत्तः" यह वो पुरुषहै । अर्थात् यह वो ही देवदत्तहै कि जिसकों दशवर्षपहिले मथुराजीमें बडे वैभवसंयुक्त देखाथा अब वो ही देवदत्त इसवर्तमानकालमें दुर्भिक्षकेकारणसे काशीमें भिक्षामांगताहै । तहां दशवर्ष पहिलेका जो व्यतीत भया पूर्वकाल अरु तिस कालविषे उसदेवदत्तकी जो वैभवसामग्री तिन दोनों उपाधिकी भावनाकों त्यागदेवे अरु वर्तमानकाल अरु दारिद्रता इनदोनों उपाधिकी भावनाकों त्यागदेवे तब उस देश काल वस्तु रूपी उपाधिके अभावसे रहा जो देवदत्त नामा पिंड शरीर सो सर्व उपाधिभेदसे रहित अभेद एकहीहै । वोही पूर्वकालविषे मथुरा देशमें वैभवसंपन्नथा सोई वर्तमानकालविषे काशीदेशमें दारिद्रसंपन्नहै ताते दोनों अवस्थाविषे देवदत्तनामका पिंड । अभेद एकहीहै । अरु वाच्यजो उसका परोक्ष पूर्वकाल मथुरादेश वैभववस्तु । अरु अपरोक्ष वर्तमानकाल काशी देश दरिद्रतावस्तु । इन दोनों उपाधिविषे भेदहै ताते देवदत्तकी वाच्यरूप उपाधिविषे एकता नहींबनती

अरु वाच्यरूप उपाधिके त्यागसे देवदत्तनामक पिंडविषे भेदनहींहोनेसे एकहीहै ॥ हे सौम्य तैसे ही ईश्वरकावाच्य परोक्ष सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् सुखीहै । अरु जीवकावाच्य अपरोक्ष अल्पज्ञ अशक्तिमान् दुःखीहै । इनदोनोंवाच्य रूप उपाधिके त्यागकरनेसे एक जो अभेद अखंड सर्वाधिष्ठान सच्चिदानन्द चैतन्य आत्माहै तिसविषे दोनोंकी एकताहै ताते सर्वाधिष्ठानचैतन्यसत्ताविषे जीव अरु ईश्वरकी एकताकों ग्रहणकरना इसकानाम जहदाजहल्लक्षणाहै इस ही लक्षणाकर जीव ईश्वरकी एकताहै ॥

हे सौम्य जिस चैतन्यके आश्रय मायाविषे यह स्फुरण होताहै जो मैं सर्वज्ञहों जगतकी उत्पत्ति पालन संहारका करनेवाला सर्वशक्तिमान् सदा शुद्ध आनंदघनहों । अरु जिस चैतन्यके आश्रय अविद्याविषे यहस्फुरणहोताहै जो मैं अल्पज्ञ अशक्त पराधीन दुःखीहों । इसप्रकार माया अरु अविद्या इन दोनोंविषे जिसचैतन्यकी सत्तासे ईश्वर अरु जीवका स्फुरणहोताहै सो चैतन्यतत्त्व एकहीहै । ताते माया अरु अविद्या इनकीस्फुरणरूप उपाधि कि जिसकरके ईश्वर अरु जीवका भेदहै तिसकेत्यागसे समानचैतन्य एकही ग्रहणहोताहै सोई चैतन्यसत्ता हिरण्यगर्भसेलेके तृणपर्यंत एकसमानहै उपाधिके भेदसे नानाप्रकार प्रतीतहोताहै सोई माया अविद्याहै तिसकों त्यागनेसे सत्य चैतन्यविषे सर्वकी एकताहै ताते सर्वत्र नामरूपक्रियात्मक जो उपाधि भेद तिसकोंत्यागके एकचैतन्यतत्त्वमें सर्वकी अभेदताकों ग्रह-

एकरना उसविषे सर्वकी अभेदताहै ॥ जैसे एक मृत्तिका॰
का घटहै एक सुवर्णका घटहै उन्न दोनों घटोंकी उपाधि मृत्ति॰
का अरु सुवर्ण तिसविषे भेदहै परंतु दोनों घटोंविषे आका
श एकहीहै । तैसे ही जो भेदहोताहै वाच्यरूप उपाधिविषे॰
होताहै तिस उपाधिके त्यागकरनेसे सर्वाधिष्ठानचैतन्या-
काश सर्वत्र अभेद एकही ग्रहणहोताहै । तैसेही जब ईश्व-
र अरु जीवकी वाच्यरूप उपाधिकों त्यागकिया तब अधि
ष्ठानचैतन्य एक ही ग्रहणहोताहै । अथवा जैसे समुद्र अरु
जलकी एक बुंद इनके वाच्यविषे बड़ा भेदहै कहां सर्वजल
कासमुदायरूप समुद्र अरु कहां जलकी अल्प बुंद जो का
र्य समुद्रसेहोताहै सो कार्य बुंद सों नही होता परंतु जब॰
दोनोंकी वाच्यरूप उपाधि समुद्र अरु बुंद तिसका त्याग॰
किया तब दोनोंविषे जलत्व एकही ग्रहणहोताहै । अथवा
जैसे सुवर्णका पर्वत किंवा खानि अरु एक रत्ती सुवर्ण
तहां इनका जो वाच्यहै पर्वत अरु रत्ती तिसविषे महान॰
भेदहै जो कार्य सुवर्णके पर्वतसे सिद्धहोगा सो कार्य एक
रत्ती सुवर्णसे न होगा अरु जब वाच्यरूप उपाधिकात्याग-
किया तबलक्ष्यरूप सुवर्ण दोनों विषे समान अभेद एकरू-
पहीहै ताते दोनोंविषे लक्ष्यरूप सुवर्णकी एकताहै । इस ही
प्रकार ईश्वर अरु जीवका जो भेदहै वाच्यरूप उपाधिविषे
है अरु लक्ष्य जो चैतन्यहै तिसविषे भेदनहीं ॥ ताते हेसौम्य
जो बुद्धिमान पुरुषहै सो वाच्यरूप उपाधिकों त्यागके एक
अखंड परिपूर्ण सच्चिदानंद ब्रह्म जो सर्वाधिष्ठान चैतन्यसा

ना सर्वका लक्ष्यहै तिसका ग्रहणकरै ॥

हे सौम्य तेरीदृढताकेअर्थ पुनः कहतेहैं सो श्रवणकरो। जीवका अरु ईश्वरका जो वाच्यहै कि जिसको त्यागकरना है अरु जीवका अरु ईश्वरका जोलक्ष्यहै कि जिसको ग्रहणकरनाहै सो सर्व श्रवणकरो। अविद्योपाधि अन्तःकरणसाथमिलके अपनेकों सुखी दुःखीआदिमानताहै अरुस्थूलशरीरकेसाथमिलके अपनेकों परिच्छिन्न जन्म मरणवान् जानताहै अरु कारणअविद्याकेसाथमिलके अपनेकोअल्पज्ञतादिदोषयुक्त मानताहै सो यह जीवकावाच्यहै ॥ अरु अंतःकरणके धर्मोंसेरहित अरु देहतीनोंसे अरुअवस्थातीनोंसे रहितमायाकेसाथमिलके जगत्का उत्पत्ति पालन संहारकरना अरु सर्वशक्तिमत्ता सर्वज्ञता आदिगुण मानताहै सो ईश्वरका वाच्यहै। इसप्रकार ईश्वर जीवके वाच्यविषे भेदहै अरु इसहीकारण वाच्यविषे इनकी एकतानहीं एतदर्थ वाच्यरूप उपाधि मुमुक्षुकरकेत्याज्यहै। अबलक्ष्य श्रवणकरो। हे सौम्य जीवकाजो लक्ष्यहै सो देह। तीनों अरु तिनकी अवस्था अरु तिनके गुणकर्मादि सर्वसे पृथक् सर्वका प्रकाशक साक्षी नित्य शुद्ध बोध मुक्तस्वभाव सच्चिदानंद आत्मा वहजीवका लक्ष्यहै। अरु यह जो। मायाका कार्य उत्पत्ति पालन संहारादि तिनसहित सर्वका कारण माया प्रकृति प्रधान अव्याकृत आदि संज्ञासे जो विख्यात तिनसर्वका साक्षी प्रकाशक सत्याधिष्ठान निराकार निर्विकार निरवयव निर्गुण निष्कलंक अज अखंड अ-

चिन्मात्र अनामय परिपूर्ण एकरस अपनेविषे आपज्योंकात्यों
है सोयह ईश्वरका लक्ष्यहै । हे सौम्य इसप्रकार जीव अरु
ईश्वरके वाच्यार्थ अरु लक्ष्यार्थ कों विचारके वाच्यार्थकी
जो उपाधि माया अरु अविद्या सोंहै पुनि जिसकी ऐसा
जो अज्ञान तिसविषे माया अविद्याकी एकताकर तिसका
त्यागकरि तिसके उपरांत अवशेषरहाजो लक्ष्यरूप निर्वि
शेष सर्वाधिष्ठान अचैत्यचिन्मात्र अद्वैत आत्मा तिसविषे
जीव ईश्वरके लक्ष्यार्थकी एकताहै तिसकों ग्रहणकरे ता
ते हे सौम्य जीवात्मा अरु परमात्मा किंवा ईश्वर अरु जीव
इनकी एकता जिसप्रकार भागत्यागलक्षणाकरकेहोतीहै
सो संक्षेपमात्र तुमकों श्रवणकराया । हे सौम्य सर्वाधिष्ठा
न जो चैतन्यआत्मा सर्वका लक्ष्यार्थ तिसविषे वाच्यरूप-
अज्ञानका अभावकरे जो सर्वाधिष्ठान चैतन्यसत्ताहै ति-
ससे पृथक् अज्ञानकी सत्ता नहीं । अर्थात् नाम रूप क्रि
यात्मक उपाधिरूप अज्ञान सो अधिष्ठानसत्ताविषे भ्रम
के आश्रय कल्पितहै सो जो जब विज्ञानरूप प्रकाशलेके
अज्ञानअंधकारकों देखिये तोपायानहींजाता ताते अज्ञा
न कुछवस्तुनहीं केवल सर्वाधिष्ठानविषे कल्पक कल्प-
ना कल्पित तीनोंप्रकार कल्पित स्फुरणरूप था सो संवेदन
स्फुरणके अभावसे आत्माविषे शशेकेशृंगवत् अभाव
होता है । ताते यावत् नाम रूप क्रियात्मक जगत्है ताव
त् सर्व सर्वाधिष्ठान आत्मासे इतरनहीं एतदर्थ सत्य
चिन्मात्रसत्ताविषे सर्वकी एकताहै । तथाच "परब्रह्मे

एकीभवन्ति 'नात्र काचन भिदास्ति' इति श्रुतिः तहां भेदभाव किसीका नहीं सोई लक्ष्यार्थका लक्ष्य जानो ॥

हे सौम्य वेदप्रतिपाद्य जो सर्वभेदसे रहित एक समान चैतन्यसत्ता है तिसविषे अज्ञानकरके माया अरु अविद्याद्वारा देश काल वस्तुका परिच्छेद होयके जीव अरु ईश्वरकी कल्पना भई है। अब परिच्छेदको श्रवणकरो हे सौम्य मूलाज्ञानकी दो शक्ति हैं एक माया एक अविद्या। तिसमें जो माया है तिसकरके ब्रह्मविषे देश काल वस्तुका परिच्छेद है तहां सत्व रज तम यह जो तीन मायाके गुण हैं सो तीन देश हैं। अरु उत्पत्ति पालन संहार यह तीन काल है। अरु विराट हिरण्यगर्भ अव्याकृत यह तीन वस्तु है सो यह मायाकृत परिच्छेद है तिसविषे जो चैतन्य आत्माका आभास है तिसकी ईश्वर संज्ञा है ॥ अरु अज्ञानकी जो अविद्यानाम्नी शक्ति है तिसकरके ब्रह्मविषे देश काल वस्तुका परिच्छेद है तहां नेत्र कंठ हृदय यह तीन देश है अरु जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति यह तीन काल है। अरु विश्व तैजस प्राज्ञ यह तीन वस्तु है सो यह अविद्याकृत परिच्छेद है तिसविषे जो चैतन्य आत्माका आभास है तिसकी जीव संज्ञा है। इसप्रकार अज्ञानके आश्रय माया अरु अविद्याके परिच्छेदकरके शुद्ध एकरस समान अद्वैत सर्वाधिष्ठान चैतन्यसत्ताविषे ईश्वर अरु जीव दोनों कल्पित हैं ॥ अब जिसप्रकार इन परिच्छेदोंके अभावसे शुद्ध आत्मतत्व ज्योंका त्यों ग्रहण होता है सो श्रवण-

करो। हे सौम्य माया अरु अविद्याका जो परिच्छेदहै सो अज्ञानसे भासताहै सो वास्तवमें असत्यहै ताते अज्ञानके साथ इनकी एकताहै एतदर्थ ईश्वर अरु जीवके देश काल वस्तु रूपी परिच्छेदकों अज्ञानकेसाथ एककरे फेरउस अज्ञानकों आत्माविषे असत्यजाने क्यो जो बोधभये पश्चात् अज्ञान नहीं पायाजाता अरु नहीं कहाजाता जो कहागया। जैसे दीपकलेके देखनेसे अंधकार नहीं पायाजाता अरु नहींकहाजाता जो कहा गया। तैसे ही जब आत्मबोधरूपी प्रकाशकों लेके देखै तब अज्ञान नहीं पायाजाता अरु नहीं कहाजाता जो कहांगया। ताते इसकरके यह सिद्धभयाजो अज्ञानकुछ वस्तुनहीं अरु जब मूलकारणरूप अज्ञान ही नहीं तब तिसका कार्य माया अरु अविद्या अरु तिनकाकीया देश काल वस्तु रूपी परिच्छेद सो कहा कदापिनहीं ताते हे सौम्य यहसिद्धभया जो आत्माविषे किसीप्रकारका परिच्छेदनहीं आत्मसत्ता सर्वप्रकारकी उपाधि अरु तज्जन्य नानाभेद तिनसर्वसे रहित अपनेविषे आप अभेद सदा एकरस ज्योंकीत्योंहै। इसप्रकार माया अरु अविद्याकृत ईश्वर अरु जीवका जो वाच्यरूप परिच्छेद तिसपरिछेदकों सहित माया अरु अविद्याके मूलकारण अज्ञानविषेलयकरेपुनः उस अज्ञानकों अधिष्ठानसत्ताविषे असत्य निर्मूलकरे तिसकेपश्चात् जो शेष रहीजो निर्विशेष एक समान आत्मसत्ता तिसविषे सर्वका [illegible]

॥ रसादिपञ्चीकृतभूतसंभवं भोगालयं दुःख॥
॥ सुखादिकर्मणां । शरीरं माद्यं दुरितादिकं-॥
॥ मजं मायामयं स्थूलमुपाधिरात्मनः ॥ २९ ॥

॥ रसादिपंचीकृतभूतसंभवं दुःखसुखादिकर्मणां भो-
गालयं दुरितादिकर्मजं मायामयं आद्यं स्थूलं शा-
रीरं आत्मनः उपाधिः ॥ २९ ॥

॥ पृथिवीआदिपञ्चीकृतपंचमहाभूतोंकरकेउत्पन्न
दुःखसुखादिकर्मोंकेफलकों भोगनेकास्थान पापपु-
ण्यआदिकर्मोंकेनिमित्तसेउपजा मायामय आदि स्थू-
ल शरीर आत्माकों उपाधिहै ॥ २९ ॥

कीरीतिसे वाच्यार्थकोंत्यागके सर्वका लक्षार्थ जो आ-
त्मसत्ताहै तिसकों ग्रहणकरो अर्थात् "सोहमस्मि" भा-
वकोंनिश्चयकरो। अ॰ हेप्रभो ऐसा जो सर्वका लक्ष्यरूप
परमशुद्ध निर्विशेषआत्माहै तिसविषे देहकी उपाधिकै-
सेभई सोआपकहिये ॥ हे सौम्य इसकोंभी सुनो ॥-॥

॥ भावार्थश्लोक २९ मेंका ॥

हे लक्ष्मणजी यहजो आत्माहै सो सदा शुद्धहै तिस-
कों जो उपाधिहै सो तीन शरीरोंकरके है तहाएक स्थू-
लशरीरहै दूसरा सूक्ष्मशरीरहै तीसरा कारणशरीरहै
तिनमें जो स्थूलशरीरहै तिसकों प्रथम श्रवणकरो। य-

हजो स्थूलशरीरहै सो पृथिवी जल अग्नि वायु आका-
श इन पांचभूतोंके तमोगुणभागका कार्यहै सो कैसेहै
पंचमहाभूत पंचीकृतरूपहै तिन पंचीकृत पंचमहाभू-
तोंका कार्यहै १। अर्थात् इस स्थूलशरीरका उपादानका
रण पंचीकृत पंचमहाभूतहैं। अरु पाप पुण्यरूपीकर्म
के फल जे सुख दुःखादि २। तिनके भोगनेकास्थानहै ३।
अर्थात् स्थूलशरीररूपीघरमें बैठके जीवात्मा अपने पा-
प पुण्यरूपीकर्मकेफल दुःख सुख तिनको भोगताहै ए-
तदर्थ इसको भोगालय कहतेहै। अरु पाप पुण्यरूपीसं
चितकर्मोंके निमित्तसे उपजाहै ४॥ अर्थात् पूर्वकृतजेपा
प पुण्यादिरूपकर्महै सोई इस स्थूलशरीरकीउत्पत्तिहो-
नेमें निमित्तकारणहै। अरु मायामयहै ५॥ अर्थात्
नामरूपात्मक असत्यहै। ऐसा जो तीनोंशरीरोंमेंप्रथम
६। गणनामें आवनहार। स्थूल७। शरीर८सो९आत्माकोई
उपाधिहै १०॥—॥२९॥

हे सौम्य अब पंचीकृतको श्रवणकरो। यह जो तन्-
मात्रारूप अपंचीकृत पंचमहाभूतहै सो त्रिगुणात्मकहैं
तहां उनका जो तमोगुणभागहै तिसके यह पंचीकृतपं
चमहाभूतहै तिनका जिसप्रकार पंचीकरणभयाहै सो श्र
वणकरो। यह जो पंचमहाभूतहै सो पांचपदार्थोंवत् स-
र्वसमानहै। जैसे पांचपदार्थ सेर२ भरकेप्रमाण सर्वस
मानहोय तैसे। अरु पृथक्२ हैं। तिन पांचोभूतोंसो जो
कि सेर२ भरके समानहै तिनप्रत्येकके दो दो भागकर

के पांचोंके दश भाग त्यारे २ किये तिन दशभागमेंसे पां-
चोभूतोंके पांच भाग जो कि अब आध २ सेरकेप्रमाणहैं
तिनको त्यारे किये अरु अवशेषरहे जो पांचों भूतोंके आ
ध २ सेरके प्रमाणके पांचभाग तिनप्रत्येकभागके चार २
भाग आध २ पावके प्रमाणसे पृथक् किये ॥

हे सौम्य अब इनका मिलाप पंचीकृत श्रवणकरो। प्र-
थमजो पांच भूतोंके अर्ध २ भाग आध २ सेरकेप्रमाणसे
पृथक्कियेहैं तिसमेंसे प्रथम पृथिवीके भागको लिया -
जो कि अर्धभागहै तिसको मुख्यकरके तिसमें औरसर्व
भूतोंके जो कि अर्धभागके चार २ भागकियेहैं तिनमेंसे
पृथिवीकाभागत्यागके और चारोंतत्वोंके जो अर्धभाग
के चार २ भाग आध २ पावके प्रमाणहैं तिनमेंसे एकभा
गलेके पृथिवीके मुख्यअर्धभागमें मिलाया। अर्थात्
पृथिवीके अर्धभागको मुख्यकरके तिसमेजलके अर्ध
भागके चौथेभागको मिलाया अरु अग्निके चौथे भाग
को मिलाया अरु वायुके अर्धभागके चौथे भागको मि-
लाया अरु आकाशके अर्धभागके चौथे भागको मि-
लाया। इसप्रकार पृथिवीका जो मुख्य अर्धभाग है तिस
में और चारोंतत्वोंके अर्धभागके चतुर्थ २ भागमिलने-
से पृथिवीकाभाग पूर्णसेरके प्रमाणहोताभया तिसको
पृथिवीका पंचीकरणकहतेहैं ॥ १॥ इस ही प्रकार जल-
तत्वका जो अर्धभागहै तिसको मुख्यभागकरके तिसमें
जलके भागको त्यागके और जे पृथिवी अग्निवायुआ

काश इन चारतत्वोंके अर्धभागके चार२ भागहैं तिनमेंसे
एक२ भागकों मिलाया तब जलतत्वका जो अर्धभागमु-
ख्यहै सो भी पूर्णसेरकेप्रमाणहोताभया पृथिवीवत् ति-
सकों जलका पंचीकरणकहतेहैं।२। तैसे ही अग्नितत्वका
जो अर्धभागहै तिसकों मुख्यमानके तिसमें अग्निकाभा
गत्यागके और जे पृथिवी जल वायु आकाश चारोंतत्वों
के अर्धभागके चतुर्थांश२ भागकों मिलाया तब अग्नि
तत्वका जो मुख्यअर्धभागहै सो भी पूर्णसेरकेप्रमाणहो-
ताभया तिसकों अग्निका पंचीकरणकहतेहैं।३। तैसेही
वायुतत्वकाजोअर्धभागहै तिसकों मुख्यकरके तिसविषे
वायुकेभागकों त्यागके और जो पृथिवी जल अग्नि आ-
काश इन चारतत्वोंके अर्ध२ भागके चतुर्थांश२ भागकों
वायुके मुख्य अर्धभागविषे मिलाया तब वायुतत्वका अ-
र्धभाग पुनः पूर्णसेरकेप्रमाणहोताभया तिसकों वायुका
पंचीकरणकहतेहैं।४। तिस ही प्रकार आकाशतत्वका जो
अर्धभागहै तिसकों मुख्यभागकरके तिसविषे आकाश
केभागकों त्यागके और जे पृथिवी जल अग्नि वायु तिन
के जे अर्ध२ भागके चतुर्थांश२ भागहैं तिनकों मिलाया
तब आकाशतत्वका जो मुख्य अर्धभागहै सो भी पुनः१
पूर्णसेरकेप्रमाणहोताभया तिसकों आकाशका पंचीकर
णकहते है।५।। हे सौम्य इसप्रकार पंचीकृत पंचमहाभूत
होते भये तहां पृथिवीकाजो पंचीकरणहैसो अंडजजीवों-
के स्थूलशरीरोंका उपादानकारणहै। अर्थात जिनशरीरों

विषे पृथिवीतत्व अधिकहै ऐसेजे मनुष्यादिशरीर तिनका सर्वव्यापार चलना बैठनाआदि पृथिवीके ही आश्रयहोता है। अरु जलका जो पंचीकरण कि जिसविषे जलकाभाग अधिकहै सो जलजंतुओंके शरीरोंका उपादानकारणहै। अर्थात् जिनशरीरोंविषे जलतत्व अधिकहै ऐसे जे मच्छादि जलचर तिनका सर्व व्यापार जलके ही आश्रयहोताहै॥ अरु जो अग्निका पंचीकरणहै कि जिसविषे अग्निकाभाग अधिकहै सो नक्षत्रोंके किंवा अग्निके कीटादिकोंके शरीरोंका उपादानकारणहै। अर्थात् जिनशरीरोंविषे तेजतत्व अधिकहै तिनका सर्वव्यापार अग्नितत्वके ही आश्रयहोताहै॥ अरु वायुका जो पंचीकरणहै कि जिसविषे वायुतत्व अधिकहै सो पक्षियोंके शरीरोंका उपादानकारण है। अर्थात् जिनशरीरोंविषे वायुतत्वअधिकहै ऐसे जे पक्षिआदि अंतरिक्षमें उडनेहारे तिनका सर्वव्यापार वायुतत्वके आश्रयहोताहै वायुविषे वो खेदको नहींपावते॥ अरु जो आकाशका पंचीकरणहै कि जिसविषे आकाशतत्व अधिकहै सो देवता अरु प्रेतादिकोंके शरीरोंका उपादान कारणहै। अर्थात् जिनशरीरोंविषे आकाशतत्वअधिकहै ऐसेजे देवतादिकोंके शरीर सो आकाशविषे खेद नहींपावते उनका सर्वव्यापार आकाशविषेहोताहै इसीसे उनको सर्वज्ञकहतेहैं जहांकोई उनका स्मरणकरतेहैं तहां ई उसको प्रत्यक्षहोतेहैं॥ हे सौम्य यह तुमको पंचीकृत पंचमहाभूतोंकास्वरूप अरु तिनका कार्य सर्व शरीरोंकाविस्तार कहाहै

तातें सर्वभूतोंके शरीरोंका उपादानकारण इन पंचीकृत पंचमहाभूतोंकों जानना। ऐसे जे पंचीकृतपंचमहाभूतोंका कार्य स्थूलशरीर सो आत्माकों उपाधिहै। अरु इनका नि मित्तकारण सर्वजीवोंके पाप पुण्यरूप संचितकर्म हैं ऐसा जोस्थूलशरीरहै सो पाप पुण्यके फल जे दुःखसुखादि ति नके भोगनेकास्थानहै ताते इसकों भोगालय कहतेहैं सो वास्तवमें मायामय नाशमानहै॥ हे सौम्य यहजो तुमकों पंचीकृतकहाहै सो शरीरोंके उपादानकारण भूतोंकाकहाहै अब सूक्ष्म जो अपंचीकृत पंचमहाभूतहै सो जिसप्रकार परस्पर पंचीकृतहोयके स्थूलभयेहैं तिसकों श्रवणकरो। अपंचीकृत सूक्ष्मजो तन्मात्रारूप पंचमहाभूतहै तिनप्रत्ये कके पचीस २ विभाग बराबर होतेभये तिनमेंसे प्रत्येकत त्वोंके चार २ भागकों त्यागके एकवीस २ भाग प्रत्येकजु दे २ एकत्रभये तिन मुख्य भागोंमेंसे जो कि पृथिवीकाभा गहै तिसमें पृथिवीका भाग त्यागके पृथक् रक्खे जे प्रत्येक तत्वके चार २ भाग तिसमेंसे एक २ भागकों मिलाया तब एकवीसभाग पृथिवी अरु एक२ भाग औरचारोंतत्वोंके मिलके पुनः पचीस भागप्रमाण पृथिवी पूर्णहोतीभई। इ सहीप्रकार पांचोतत्वोंका पंचीकृतभया सो यह स्थूल पंच महाभूत भयेहैं सो भी तुम्हारे जाननेकेअर्थ संक्षेपमात्रक हाहै॥ अब सूक्ष्मशरीर जो आत्माकी द्वितीय उपाधिहै तिस कोंभी सावधानहोय श्रवणकरो॥ २८॥

॥ भावार्थश्लोक २९ वेंका॥

॥सूक्ष्मं मनोबुद्धिदशेन्द्रियैर्युतं प्राणैरपञ्चीकृत॥
॥भूतसंभवम्। भोक्तुः सुखादेरनुसाधनं भवेच्छ॥
॥रीरं मन्यद्विदुरात्मनो बुधाः॥ २९॥

॥मनोबुद्धिदशेन्द्रियैः प्राणैः युतं अपञ्चीकृतभूतसंभवं सूक्ष्मं शरीरं सुखादेः भोक्तुः साधनं अपि भवेत् [परंतु] बुधः आत्मनः अन्यत् विदुः॥ २९॥

॥मनबुद्धिदशइंद्रियां [अरु] पांचप्राण [इनसहितकरके] युक्त अपंचीकृतपंचभूतोंसेउत्पन्नभया सूक्ष्म शरीर सुखदुःखादिकोंको भोगका साधन ही भयाहै [परंतु यह आत्मा नहीं] तातें बुद्धिमान् आत्मासे [इसकोंउपाधिरूप] पृथक् जानेहै॥ २९॥

हे लक्ष्मणजी। मन बुद्धि दश इंद्रियाँ १॥ अर्थात् पांच कर्मेंद्रिय अरु पांच ज्ञानेंद्रिय॥ अरु पांच प्राण २। इनकरकेयुक्त ३। सप्तदशतत्त्वका अपंचीकृतपंचमहाभूतोंसे उत्पन्नभया ४। सूक्ष्म ५। शरीर ६। जिसकों लिंगशरीर भी कहतेहैं सो कर्मोंके फलजो। सुखदुःखादि तिनके ७। भोगका ८। साधन ९। ही १०। भयाहै ११॥ अर्थात् सूक्ष्म शरीरही दुःखसुखादिकोंका भोक्ताहै परंतु यह आत्मा नहीं॥ तातें बुद्धिमान मुमुक्षु १२। अपनेआप आत्मासे १३। इसउपाधिरूपको पृथक् १४। जानेहै ॥१५॥

हे सौम्य अब इसका भेद सुनो यह जो तन्मात्रारूप अपं-
चीकृत पंचमहाभूत हैं तिनके सत्वगुणभागसे पांच ज्ञानेंद्रि-
यां अरु मन बुद्धि यह सात भयेहैं। अरु इन ही भूतोंके
रजोगुणभागसे पांच कर्मेंद्रियां अरु पांच प्राण यह दश
भयेहैं अरु इन सत्रहतत्वके एकत्रहोनेसे सूक्ष्मशरीर भ-
याहै। अब इसका विस्तार सुनो यहजो पंचतन्मात्रारूप
पंचमहाभूतहैं आकाश(शब्द), वायु(स्पर्श), अग्नि(रूप), जल(रस), पृथिवी(गंध) इन-
के सत्वगुणभागसे क्रमकरके श्रोत्र त्वचा नेत्र रसना
घ्राण यह पांचो इंद्रियां अरु इन पंचभूतोंके समष्टि स-
त्वगुणभागसे मन बुद्धि इसप्रकार अपंचीकृत पंचमहा-
भूतोंके पृथक् २ अरु समष्टि सत्वगुणभागसे पांच ज्ञानें-
द्रियां अरु मन बुद्धि यह सात तत्व होते भये। अरु इनअ-
पंचीकृत पंचमहाभूतोंकेही रजोगुणभागसे क्रमकरके २
वाचा हाथ चरण लिंग गुदा। अरु इन पांच भूतोंके स-
मष्टि रजोगुणभागसे पांच प्राण। इसप्रकार अपंचीकृ-
तपंचमहाभूतोंके रजोगुणभागसे पांचकर्मेंद्रियां अरु पां-
चप्राण यह दशहोतेभये। इसप्रकार तन्मात्रारूप अपं-
चीकृत पंचमहाभूतोंके सत्वगुण रजोगुणभागके सत्रह
तत्वोंका सूक्ष्मशरीर सुखदुःखादिकोंका भोक्ता अज्ञानरू-
पउपाधि सो आत्मानहीं। तातें बुद्धिमान् अपनेआपआ-
त्माको इससे पृथक जानैहै॥ २९ ॥

॥ भावार्थश्लोक ३० मेंका ॥

हे लक्ष्मणजी अब तीसरा जो कारणशरीर अज्ञानादि

॥अनाद्यनिर्वाच्यमपीह कारणं मायाप्रधा-॥
॥नं तु परं शरीरकं। उपाधिभेदात्तु यतः पृ-॥
॥थक्स्थितं स्वात्मानमात्मन्यवधारयेत्क्रमात्॥

॥३०॥

॥अनादि अनिर्वाच्यं मायाप्रधानं अपि कारणं शरीरं तु परं इह यतः उपाधिभेदात् तु आत्मनि पृथक्स्थितं स्वात्मानं क्रमात् अवधारयेत् ॥३०॥

॥अनादि अनिर्वाच्य मायाप्रधान ही [जो] कारण शरीर सोतो आत्मासे पृथक् जानो जिस कारण उपाधिभेद से तो [जो] देहमें पृथक्स्थित अपने आत्माको क्रमसे निश्चय करके जानना ॥ ३० ॥

उपाधि है तिसको भी श्रवण करो। अनादि १। अरु अनिर्वचनीय २॥ अर्थात् अधिष्ठानसत्ताके आश्रय भासनहार अरु अपनी पृथक् सत्ताकरके रहित जाते आदिसे ही रहित ताते अनादि अरु अधिष्ठानके आश्रय भासनेसे नित्य ताते न सत्य है न असत्य है। अर्थात् जिसका अधिष्ठान सत्यरूप है तिसको असत्य कैसे कहिये अरु जिसकी पृथक् सत्ता नहीं है तिसको सत्य कैसे कहिये ऐसीजो सत्य असत्यसे विलक्षण अनिर्वचनीय॥ प्रधानमाया ३। सोई है ४। कारण ५। शरीर ६॥ अर्थात् 'अहं न जानामि' मैं आत्माको नहीं जानता यह अज्ञानरूप भावना ही है मुख्यस्वरूप जि-

सका सो कारणशरीर ॥ सोतो ७। आत्मासेपृथक् ८। जानो ९॥ अर्थात् अज्ञानरूपजो कारणशरीर अनात्मा तिसको अपनेआप आत्मासे पृथक्जानो सो आत्मानहीं ॥ हे सौम्य जिस १०। उपाधिभेदसे ११। आत्माविषे अज्ञानजन्य कर्तृत्व भोक्तृत्व भासेहै तिससे। तो १२ देहमें १३। पृथक्स्थित १४। अपनेआप स्वयंप्रकाश साक्षिरूप आत्माको १५। क्रमसे १६॥ अर्थात् स्थूल सूक्ष्म कारण इन तीनोंशरीररूपअनात्मासे विचारद्वारा पृथक्करके भलीप्रकार अनुभवअभ्याससे ॥ निश्चयकरके जानना योग्यहै १७॥—॥ ३०॥—॥

हे सौम्य यहजो तीनशरीररूपउपाधि आत्माको कही है तिसको पांचविभागसे पंचकोश भी कहतेहैं अब तिसको भी सावधानतासे श्रवणकरो ॥

॥भावार्थश्लोक ३१ मेंका॥

हे लक्ष्मणजी सर्वसंगसेरहित सदाशुद्ध असंगरूप १। अरु जन्मादिविकारसेरहित ताते अज २। अरु सजातीय विजातीय स्वगतआदिभेदसेरहित एक अद्वैत ३। ऐसा भी ४। जो यह आत्मा ५। सो अन्नमयादिपांचो ६। ही ७। कोशोमें ८। तत्तत्आकारवान् ९। भासताहै १०॥ तथाच रूपं रूपंप्रतिरूपोबहिश्च ॥ जैसेस्फटिकमणि ११।१२। अपनेस्वरूपकरके सदा शुद्धहीहै परंतु तिसके समीपस्थ जो रक्त पीत हरित कृष्ण श्वेतादिरंगवाले पदार्थ तिनको। संगसे १२। तैसा ही हो भासताहै। तैसे ही आत्मा सदा शुद्ध ही है तथापि समीपस्थ जे अन्नमयादिकोशहैं तिनके संयोगसे नाना

रूपहीहोभासताहै परंतु आत्मा इन कोशादिकोंके स्वरूप अ-
रु धर्म से रहित सदा शुद्ध असंग अद्वैत स्वयंप्रकाश स-
च्चिदानंदहीहै। तथाच "शुद्धमपापविद्धम्,, "असंगोह्ययंपुरु-
षः,, "एकमेवाद्वितीयं,, "अत्रायं पुरुषः स्वयं ज्योतिर्भवति,, "स-
त्यंज्ञानमनंतंब्रह्म" । इत्यादि श्रुतिके प्रमाणसे। तातें इन पंच
कोशोंमें १४। भृगुवत् श्रुतियोंके वाक्यप्रमाण। विचारक-
रनेसे १५। आत्मा सर्वत्र १६। शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभावही। जा-
नाजाताहै १७॥—॥ ३१ ॥

हे सौम्य यह जो अन्नमयादि पंचकोशहैं सो स्थूलसे
उत्तरोत्तर सूक्ष्महैं अर्थात् सर्वसे स्थूल अन्नमयकोशहैं
तिससे सूक्ष्म प्राणमय तिससे सूक्ष्म मनोमय तिससे
सूक्ष्म विज्ञानमय तिससे सूक्ष्म आनंदमय। इसप्रका-
र अन्नमयसे उत्तरोत्तर ज्यों ही ज्यों यह कोश सूक्ष्महो-
तेगये त्यों ही त्यों इनमें आत्मबुद्धि होती गयी। अरु बड़े-
२ आचार्य शास्त्रवादी इन कोशों ही कों आत्माजानके
अटकेहुयेहैं अरु आत्मा इन सर्वसे पृथक् सर्वकासा-
क्षी अति सूक्ष्महै। तथाच "अणोरणीयान्" । एतदर्थ।
सूक्ष्म स्थूल सर्व कोशों विषे सूक्ष्मबुद्धिद्वारा भलीप्रका-
र विचारकरनेसे सर्वसे पृथक् सर्वका साक्षि सर्वाधिष्ठा-
न सर्वसेसूक्ष्म सर्वका अपना आप आत्मा ज्यों का त्यों
जानाजाताहै। तथाच "दृश्यते त्वग्र्यया बुद्ध्या सूक्ष्मया
सूक्ष्मदर्शिभिः" । क० उ० की ३ वल्लीमें। तातें हे सौम्य
यह पंचकोशोंसे पृथक् जो महासूक्ष्म चैतन्य आत्म

तत्वहै तिसकों श्रुतियोंके वाक्यानुसार, भृगुवत्, विचार करके जाननायोग्यहै तिसविना अनात्मरूपकोषोंसे आत्मबुद्धि दूरहोतीनहीं अरु अनात्मासे आत्मबुद्धि अभाव भयेविना यथार्थ आत्मप्राप्तिहोतीनहीं अरु यथार्थ आत्मज्ञानविना परमशान्तिमोक्षहोनेकानहीं ताते प्रथम अनात्मरूप पंचकोषोंके विचारपूर्वक सर्वके साक्षि आत्माकों जाननायोग्यहै ॥

॥ शिष्यउवाच ॥

हे भगवन् अन्नमयादि जो पंचकोशहैं सो अनात्मारूपहोनसंते आत्मावत् प्रतीतहोतेहैं ताते इन अनात्माविषे जे आत्मभावनारूपअज्ञान तिसकी निवृत्तिके अर्थ, कि जिसकी निवृत्तिहोनी ही मोक्षमें परमकारणहै, तिन कोषोंका स्वरूप स्वभावादि सर्व विस्तारसे कहिये कि जिसके विचारसे इनसे पृथक् इनका साक्षि जो सत्य आत्माहै तिसका आत्मत्वकरके अनुभवहोय परमशान्तिहोतीहै ॥

॥ गुरुरुवाच ॥

हे सौम्य अब तुम्हारे जाननेके अर्थ इन पंचकोषोंका स्वरूपआदि किंचित् विस्तारसे कहतेहैं तिसको सावधानतासे श्रवणकरो। अन्नमय १ प्राणमय २ मनोमय ३ विज्ञानमय ४ आनन्दमय ५। यह पांचकोषाके पांच नामहैं तहां प्रथम अन्नमय जो यह स्थूल शरीरहै तिसकों श्रवणकरो। हे सौम्य यह पुरुष जो अन्नभोजन करताहै सो अन्न उदरमेंजाय जठराग्निद्वारा परिपक्कहोय तिसका

सूक्ष्म रस होताहै सो रस समानप्राणद्वारा सर्वनाड़ियोंवि-
षेजाय नानाभावकों प्राप्तहोताहै। अर्थात् रक्तकीनाडी-
विषे रक्त कफकीनाडीविषे कफ इसप्रकार जिस२ नाडी
विषे अन्नकारसजाताहै तिस ही तिस भावकों प्राप्तहोता
है। तैसे ही अन्नका रस वीर्यकी नाडीविषे वीर्यहोताहै।
अरु इस ही प्रकार स्त्रीके उदरविषे जो अन्नकारसहोता
है सो पुष्पकी नाडीविषेजाय स्त्रीका पुष्पहोताहै [पुष्पउ-
सकों कहतेहैं जोऋतु धर्मका रक्तहै] अरु जब पुरुषका
वीर्य स्त्री के गर्भस्थानविषे जाताहै तब गर्भहोनेसे पूर्वई-
श्वरसत्तासे उस गर्भस्थानविषे पुरुषका वीर्य अरु स्त्रीका
पुष्प दोनों एकत्र होतेहैं तब गर्भरहताहै तहां जोकदापि
पुरुषका वीर्य अधिकहोय तो पुत्र अरु जो स्त्रीका पुष्प
अधिकहोय तो पुत्री अरु दोनों समानहोय तो नपुंसक
अरु जो कदापि गर्भस्थानमें वीर्य अरु पुष्प एकत्रहोयके
दो वा तीन जितनेभागहोजाय तितने ही बालक गर्भमें
होतेहैं। हे सौम्य इसप्रकार गर्भमें आवनहार जीवोंके क-
र्मानुसार ईश्वरमायाकरके यह देह गर्भविषे सिद्धहोताहै
पुनः माता जो अन्न भोजनकरतीहैं तिसके रसद्वारा इस
देहकी गर्भविषे वृद्धि अरु पुष्टि होतीहै। अरु जब बाल-
क गर्भसे बाहिरआवताहै तब प्रत्यक्ष अन्नद्वारा इसश-
रीरकी वृद्धि अरु पुष्टि होतीहै। अरु परिणाममें यहश-
रीर अन्नरूप पृथिवीविषे लीनहोताहै अथवा सिंहा-
दि मांसआहारीजीवोंका आहाररूप अन्नहोताहै ताते

इस स्थूलशरीरका आश्रय अन्न ही है इस ही हेतुसे इस-
को अन्नमयकोश कहतेहैं ॥ हे सौम्य यहजो अन्नमयको-
शहै सो मुख्य ६ धातुओंकरके युक्तहै। अस्थि मज्जा वी-
र्य मांस रुधिर त्वचा। इनमें तीन धातु अस्थि मज्जा
वीर्य यह पुरुषके वीर्यसे होताहै। अरु रुधिर मांस।
त्वचा यह तीन स्त्री के मुख्य होताहै। इन ६ धातुओंक-
रके युक्त जो यह स्थूल देह जिसको अन्नमयकोश कहते हैं।
अरु मुख्यहै अन्नरूपपृथिवीका भाग जिसमें ऐसा जो पंच
भूतोंके तमोगुणभागसे पृथिवीका पंचीकरण सो इसका
उपादानकारणहै अरु जीवोंके पूर्वलेकर्म इसका निमित्त।
कारणहै ऐसा जो हस्त पादादि अवयवोंसहित स्थूलपिंड
है सोई इसका स्वरूपहै। अरु पंचीकृत पंचमहाभूतोंके पांच
२ पदार्थ इसमें हैं नख अस्थि मांस नाडी त्वचा केश यह
पृथिवीके तमोगुणका कार्य हैं। अरु रुधिर वीर्य प्रस्वेद
लार मूत्र यह जलके तमोगुणका कार्यहैं। अरु आल-
स निद्रा कान्ति क्षुधा तृषा यह अग्निके तमोगुणका
कार्य हैं। अरु चलना दौडना कूदना पसरना संकोच-
ना यह वायुके तमोगुणका कार्यहैं। अरु मस्तकाकाश
कंठाकाश हृदयाकाश नाभिआकाश कटिआकाश
यह आकाशके तमोगुणका कार्य हैं। इसप्रकार पंचीकृ-
त पंचभूतोंके २५ पच्चीस विकारकरयुक्त यह देहहै।
अरु ६ इसके स्वाभाविक विकारहैं, जायते, जन्मना१
अस्ति, है अर्थात् उपजके आस्तित्वभावको प्राप्तहोताहै२

वर्धते, बढना ३। विपरिणमते, विपर्ययहोना ४। अपक्षीयते, क्षीणहोना ५। विनश्यती, विनाशहोना ६॥ यह जो षट् भाव विकारहैं सो इस अन्नमयकोशके धर्म हैं। अरु पापपुण्यरूपी कर्मचेष्टाकरना यह इसकी क्रियाहै अरु अनित्यता जडता यह इसमेंदोषहै। इसप्रकारका अन्नमयकोशकों जानों॥

हे सौम्य तैत्तरेय उपनिषद्की श्रुतिने इन्हीं पंचकोशोंकों पक्षिरूपसे वर्णनकियाहै तहां यह जो मस्तकहै सोई मस्तकहै अरु दक्षिण हाथ दक्षिणपक्षहै अरु उत्तर, वाम, हाथ उत्तरपक्षहै अरु मध्य धड़ आत्माहै अरु अन्न पुच्छहै अर्थात् अन्न इनसर्वका आश्रयहै। इसप्रकार यह अन्नमयकोशहै सो आत्मा नहीं इसमेंआत्मा आपके इसहीके आकार भासताहै परंतु अन्नमयादि कोशरूप उपाधिसे आत्मा पृथक्‌है अन्नमयकासाक्षिहै। हे सौम्य ज्ञेयवस्तुसे ज्ञाता पृथक् होताहै "घटद्रष्टा घटात्भिन्नः" इसन्यायप्रमाणकरके ताते अन्नमयकोशके जाननेवाले अपुन ज्ञानरूपसाक्षि आत्मा पृथक्‌है अपुन अन्नमयकोशनहीं॥१॥

हे सौम्य इस अन्नमयकोशके अावान्तर तारूपसेही प्राणमयकोशहै तिसको भी श्रवणकरो। यह जो अन्नमयकोशहै तिसके अन्तर तिसहीके आकारसे रोम२पर्यंत जो आकाशहै तिस आकाशमें एकसमान पूर्णतासेस्थित जो वायुतत्त्वहै सो अन्नमयके आकारकों ग्रहणकियेजो

आकाश तिसके आकारकों ग्रहणकिये जे वायुतत्व तिसमें से आकाशके भागकों छोड़के अन्नमयके अंतर अरु अन्नमयके ही नख शिख पर्यंत आकारसे स्थित जे वायुतत्व २ जो कि पूर्णतासे इस अन्नमयकोशकों जैसे आकाशमें पतंगकों डोर थांभराखेहै सोई प्राणमयकोशहै। अब इसका भेद सुनो। यह जो पांच हस्तपादादि अवयवरूपगोलक तिसके अंतर जो क्रियाशक्तिरूप कर्मेंद्रियां सो अरु पांच प्राण यह परस्परमिलेकों प्राणमयकोश कहतेहैं क्यों जो प्राण क्रियाशक्ति प्रधानहै तातें कर्मेंद्रियां अरु प्राण इनकी एकताकों प्राणमयकोश कहतेहैं सो अपंचीकृत पंचमहाभूतोंका कार्यहै तहां पंचभूतोंके तमोगुण भागसे पांच कर्मेंद्रियां अरु समष्टि तमोगुणसे पांच प्राण इस प्रकार तमोगुणका कार्य परस्परमिलके प्राणमयकोश भयाहै। अब इसका विस्तार सुनो। पृथिवीके तमोगुणका कार्य गुदेंद्रिय सो अपानवायुके आधारसे पृथिवीका भाग अन्नकामल तिसकों त्यागनेकी क्रियाकरेहै। अरु जलके तमोगुणका कार्य उपस्थइंद्रिय सो प्राणवायुके आधारसे जलकेविकार वीर्य अरु मूत्र कों परित्यागकरनेकी क्रियाकों करेहै। अरु अग्निके तमोगुणका कार्य वाचा सो व्यानवायुके आधारसे वक्तृत्वरूप क्रियाकों करेहै। अरु वायुके तमोगुणका कार्य हाथ इंद्रिय सो समानप्राणवायुके आधारकरके नानाप्रकारकी हस्तक्रियाकों धारणकरेहै। अरु आकाशके तमोगुणका कार्य चरण

इंद्रिय सो उदानवायुके आधारसे अवकाशकों पायके२
शीघ्र मंद गमनागमनरूप क्रियाको करैहै ॥ इसप्रकार
गुदा लिंग वाचा हस्त चरण यह पांच कर्मेंद्रिया अरु२
प्राण अपान व्यान उदान समान यह पांच प्राण । अथवा
प्राणके आधारसे हस्तइंद्रियकी क्रिया । अरु व्यानवायुके
आधारसे वाणीकी वक्तृत्वरूपक्रिया । अरु अपानके आ
धारसे गुदा लिंगकी मलमूत्रके त्यागरूपक्रिया । अरु उ
दानप्राणके आधारसे चरणइंद्रियकी गमनागमनरूप२
क्रिया । अरु समानप्राणके आधारसे उदरमें अन्नकी प
रिपकना अरु अन्नकेरसका रुधिरादिरूपसे सर्वनाडियों
में संचाररूपक्रिया ॥ इसप्रकार पांच प्राण अरु पांच कर्मे
द्रियां तिनका जो परस्पर एकत्वभावसे अन्नमयके अभ्यं-
तरतारूपसे ही स्थितहोना तिसको प्राणमयकोश कहतेहैं
। तहां मुख किंवा नासिकाद्वारसे बाहरजाना अंतरआवना
लेना देना कूदना उछलना पसरना संकोचना आदिक्रिया
इसका स्वभावहै । अरु अन्नकेरसकों पचायके२ प्रति२
सर्वनाडियोंमें पहुंचावना यह इसकी क्रियाहै । अरु क्षु-
धा पिपासा इसकी ऊर्मी, धर्म, है । अरु चंचलता जड
ता यह इसमें दोषहै । ऐसा जोस्थूलअन्नमयकोशके अ
भ्यान्तर तारूपसेही स्थित जो प्राणमयकोशहै सोभी आ-
त्मानहीं इसप्राणमयकोशकी सान्निध्यतासे आत्मा जो
सदा अक्रिय निर्विकार प्राणमयका साक्षि प्राणमयसेपृ
थक् निराकाररहै तिसविषे प्राणमयकोशकी क्रियारूप२

उपाधिके सम्बंधसे क्रियारूपउपाधि भासेहै परंतु आत्मा सर्वउपाधिसे रहित एकरस सर्व क्रियाआदिकोंका प्रकाशक ज्ञाता सर्वका अपनाआपहै ताते प्राणमयकोश भी आत्मा नहीं ॥ २

हे सौम्य इस प्राणमयकोशके अवान्तर ताहूपसे ही स्थित मनोमयकोशहै तिसकों भी श्रवणकरो। इस अन्नमयकोशके अवान्तर स्थूल सूक्ष्म अनेक नाडीआंहै तिसमें अत्यन्तसूक्ष्म जे एक खड़े केशके सहस्रभागकरनेसे जो एक भागहोय तिसके समान महासूक्ष्म जे अनन्त हिता नाम्नी नाड़िआ है सो प्रायः कंठदेशमें अधिकहैं सो नाडिआं अन्नके सूक्ष्मरसकरके पूर्णहै सो नाडिगत जे अन्नका सूक्ष्मरसहै सोनाना नाडिओंके सम्बन्धसे नाना प्रकारके रक्त पीत हरित श्याम श्वेत आदि भावकों प्राप्तहोताहै। अरु उन्हींनाड़िओंके अन्तंर समानरीतिसे समान सूक्ष्म प्राणवायुका अत्यन्त शीघ्रतासे सर्वत्र संचार होताहै तिस संचारसे सूक्ष्मनाड़ीगत जे अन्नका सूक्ष्मरस है तिसके सूक्ष्मपरमाणुओंका पृथक्करणहोय घुनाक्षर न्यायप्रमाण नानाप्रकारकी दीर्घ ह्रस्व आकृति परिसंघना होती मिटती रहेहै। अरु उन सूक्ष्मनाडिओंकी संघट्टताहोनेसे नानाप्रकारके रंगसंयुक्त नानाप्रकारकी रचना गंधर्व नगरवत् होती मिटती एकदेशमें प्रतीतहोतीहै। अरु इसी रचनाकों मनोराज्य किंवा संकल्पआदि कहतेहैं सो कंठके एकदेशमेंहोय सम्पूर्णनाडिओंके

अन्तरपसरेहै। जैसे जलमें कंकरडालनेसे एकदेशमें उत्पन्न भईजो तरंग सो जलमें सर्वओरकों पसरेहै दूरजानेसे पसरना दृष्टनहीं आवे तथापि विचारदृष्टिसे तरंगोंका सर्वत्र पसरना आवेहै तैसे ही इन हितानाम्नी सूक्ष्मनाड़िओंमें समान प्राणकासूक्ष्म संचारहोनेसे अन्नके सूक्ष्म रसके सूक्ष्मपर२ माणुओंका पृथक्करणहोय नानाप्रकारकी स्थूल सूक्ष्म२ आकृति परिमितता उत्पन्नहोय सर्वनाड़िओंद्वारा प्राणमय देसाथ शरीरमें पसरेहैं परंतु इसकाहोना एकदेशमेंप्रतीत होयहै सर्वत्र प्रतीतिहोतीनहीं। इसप्रकार अन्नमयको प्राणमयकेपाके योगसे अतिसूक्ष्म हिताके आवान्तर नाड़ियोंके अन्तर नानाप्रकारके अन्नके नानाप्रकार के सूक्ष्मरसकी पूर्णताहै। तथाच "ता वा अस्यैता हिता नामनाड्यो यथा केशः सहस्रधा भिन्नस्तावताऽणिम्ना तिष्ठन्ति शुक्लस्य नीलस्य पिङ्गलस्य हरितस्य लोहितस्य पूर्णा अथ यत्रैनं घ्नन्तीव जिनन्तीव हस्तीव विच्छाययति गर्तमिव पतति" ॥ ब्र० उ० अ० ६ के ज्योति ब्रा० की १०मी श्रुतिमें तिसका तिसनाड़िओंविषे सूक्ष्म समानप्राणके अतिशीघ्र संचारहोनेसे अतिशीघ्रतासे ही नानाप्रकारकी छोटी बड़ी नाना आकृति परिमितताहोय तिनकों परस्परएकहोनेसे २ नानाप्रकारका सृष्टिरूपता होनी अरु मिटनी अरु एकरस न रहके शीघ्रतासे ही विपर्ययभावहोना तिसकों जाग्रतमें संकल्पसृष्टि किंवा मनोराज्य अरु निद्रामें स्वप्नसृष्टि स्वप्न कहतेहैं। तथाच "अन्नमशितं त्रेधा विधीयते तस्य

यः स्थविष्ठो धातुस्तत्पुरीषं भवति यो मध्यमस्तन्मांसं योऽणिष्ठस्तन्मनः अन्नमयं हि सोम्य मनः"। इत्यादि छांदोग्यके अ० ६ ऽ के ५ मी श्रुतिमें। हे सौम्य इस प्रकार जिन हिता नाम्नी नाडिओंमें सूक्ष्म समानप्राणके संचारसे अन्नके अति सूक्ष्मरसोंका पृथक्करणहोय नानाप्रकारकी आकृति परिमेयताके परस्पर मिलनेसे नानाप्रकारकी सृष्टि हो भासती है। तिन्ही नाडिओंमें जो चैतन्यके आभाससंयुक्त सूक्ष्म आकाश है कि जिसकी अंतःकरणसंज्ञा है तिसकी जे संकल्पात्मक ज्ञानवृत्ति हैं सो अनेकजन्मोंके जाग्रत स्वप्नरूप जगत्‌के संस्कारकरके युक्त है सो वृत्ति जब सूक्ष्म नाडिविषे अन्नके सूक्ष्मरसमें सूक्ष्मप्राणके संचारसे अनेकप्रकारकी आकृति परिमेयताहोय नानाप्रकारकी सृष्टिहो भासती है तिस साथ मिलके तदाकारहोयहै तब पूर्वसृष्टिके अनुभव स्मृति संस्कारके अध्याससे अज्ञानके आश्रय अपने विषे नाना प्रकारकी आकृतिआदिसहित जगतको अनुभवकरे है अरु तहां अपने अधिष्ठान चैतन्यरूपताको न जानके अपनेकों कर्ता भोक्ता सुखी दुःखी मानेहै। तथाच "अथ यत्रैनं घ्नंतीव जिनन्तीव हस्तीव विच्छाययति गर्त्तमिव पतति। इत्यादि श्रुतिः"। अरु इसजन्ममें देखा अरु न देखा अर्थात् पूर्वजन्ममें देखा तिसकों संस्कारवशासे पुनः अनुभव करेहै। तथाच "अत्रैष देवः स्वप्ने महिमानमनुभवति यद्दृष्टं दृष्टमनुपश्यति श्रुतं श्रुतमेवार्थमनुशृणोति देशदिगंतरैश्च प्रत्यनुभूतं पुनः पुनः प्रत्यनुभवति दृष्टं चादृष्टं च श्रुतं चाश्रुतं

चानुभूतंचाननुभूतंच सर्व्वं पश्यति सर्वः पश्यति" इत्यादि प्र० उ० के चतुर्थ ब्रा० में। ताते हितानाम्नी सूक्ष्मनाड़ीविषे प्राणके संचारसे जो नानाप्रकारकी आकृतिपरिमेयतारूप सृष्टि उठेहै तिससाथ एकभई जो साभासअंतःकरणकी संकल्पात्मक ज्ञानवृत्ति तिसको मनोमयकोश कहतेहै॥ हे सौम्य अब इसको और प्रकारभी श्रवणकरो। प्रथम कहा जे प्राणमयकोश तिसके अभ्यन्तर संकल्परूपजे मनोमयकोश सो रजोगुणका कार्यहै मन अरु ज्ञानेंद्रियोकाजो एकत्रहोनाहै सोई मनोमयकोशहै अब इसकाभेदसुनो श्रोत्र त्वक् चक्षु रसना घ्राण यह पांच इंद्रिया अरु मन यह ६ मिलके मनोमयकोशभयाहै तिसमें आकाशके रजोगुणके श्रोत्र, वायुके रजोगुणकी त्वक्, अग्निके रजोगुणके चक्षु, जलके रजोगुणकी रसना, आकाशके रजोगुणकी घ्राण, अरु समष्टि रजोगुणसे मन। इसप्रकार पंचभूतोंके रजोगुणका कार्य ज्ञानेंद्रिया अरु मन मिलकर मनोमयकोशभयाहै। यहतो इसकास्वरूपहै संकल्प विकल्प इसका स्वभावहै अरु मनोराज्य इसकी क्रिया है अरु चंचलता जड़ता विषयोंकीओर गिरना यह इसमेंदोषहै। ताते ऐसाजो यह मनोमयकोशहै सो भी आत्मानहीं इस मनोमयके अनुभवकर्त्ता साक्षि आत्मा अपुन मनोमयसे जुदेहै अपुन मनोमयकोशनहीं॥ अरु मनोमयकोश अपुन नहीं ॥ ३ ॥

हे सौम्य इस मनोमयकोशके अभ्यन्तर विज्ञानमय

कोषहै तिसकों भी श्रवणकरो। यह जो अन्नमयकोषहै तिसके अंतर तारूपसेही सूक्ष्मवायुतत्व प्राणमयकोषहै अरु तिसके अंतर तारूपसेही मनोमयकोषहै सो तुमकों कहाहै तिसमनोमयके अंतर अरु मनोमय प्राणमय अन्नमय कोष इनकों छोडके इनहीके आकार विज्ञानमयकोषहै तिसकों इसप्रकार जानो जो शरीरमें हृदयकमलहै सो कमलपुष्पकी कलीवत्है अरु तिस हृदयकमलसे शरीरस्थ स्थूल सूक्ष्म बहोतसी नाड़ियां मिलीहै तिननाडियोंसे और अनेकनाड़ियां मिलीहै। इस प्रकार शरीरस्थ यावत् नाड़ियांहै तावत् सर्व एकादूसरीसे मिलके किंवा स्वतः हृदयसाथसंबंधरखतीहै सो नाड़ियां बहुतहैं। तथाच "हृदिह्येषआत्मा अत्रैतदेकशतं नाडीनां तासां शतं शतमेकैकस्यां द्वासप्ततिर्द्वासप्ततिः प्रतिशाखानाडीसहस्राणि भवन्ति"। इत्यादि प्र०उ०के तृतीय प्रश्नमें। अरु उस हृदयकमलमध्ये सूक्ष्मआकाशहै कि जिसकों अन्तःकरण किंवा हृदयाकाश किंवा दहराकाश कहतेहैं। तथाच "मनोवै अन्तराकाशः" "हृदाकाशेचिदाभाति" "दहरोऽस्मिन्नंतराकाश" इत्यादिप्रमाणसे। सो आकाश हृदयसाथसंबंधरखनेवाली सर्वनाडीयोंके बाहिर भीतर पूर्णहै अरु हृदयगत सूक्ष्मआकाशमें आकाशसेभी महासूक्ष्म स्वयंज्योति अंगुष्टमात्रपुरुष आत्माहै। तथाच "अंगुष्टमात्रपुरुषोंतरात्मा सदा जनानां हृदये सन्निविष्टः"। इति क०उ०की ६ठी वल्लीकी १७मो श्रुतिमें। तिस चैतन्यआत्माके आभासकरके युक्त जो सू-

रूप हृदयाकाशहै सो यावत् शरीरस्थ नाडीयांहै तावत् सर्वके भीतर बाहिर साभासही व्याप्तहै। तिस साभास अंतःकरणआकाशकी घटपटादिकोंकों विशेष विवेचनकरती निश्चयआत्मक ज्ञानवृत्ति तिसकों विज्ञानमयकोश कहतेहैं सो विज्ञानमयकोश सर्वइंद्रियोंके ज्ञानकों अपनेविषेलेके अरु शरीरसुद्धां शरीरस्थ प्राण इंद्रिय नाडी आदिकोंके आकारउपाधिकों त्यागके आकाशशरीर अपनेविषेधार इस शरीरकेआकारसे घटगत घटाकाशवत् अनुभवीके अनुभवमें आवेहै। अरु सोई विज्ञानमयकोशरूपी वृत्ति कोहम् हैं इसजीवरूपीभावनाके अभावकरनेवाली जो भविष्यत्की भूतरूपा जिसका किंचितरूपहोनेसे निर्विकल्पवर्त्तमानमें अभावहै, ऐसी अहंब्रह्मास्मि,, भावनारूप ईश्वरीज्ञानात्मक वृत्ति तिसकों धारणकरेहै। ऐसीजो अहंब्रह्मभावनाकों धारणकरनेवाली विज्ञानमयकोशकी विशेष ज्ञानात्मक विज्ञानवृत्ति तिसकों विज्ञानमयकोशसहित अनुभवकरता साक्षिआत्मा अपुन, घटदृष्टा घटाद्भिन्नः इसन्यायप्रमाण सवृत्तिविज्ञानमयकोशसे जुदेहैं अपुन विज्ञानमयकोशनहीं अरु विज्ञानमयकोश आत्मानहीं ॥-॥ हे सौम्य अब औरप्रकार भी इस विज्ञानमयकोशकों श्रवणकरो। नेत्र नाशिका श्रोत्र रसना त्वचा यह जो पांच ज्ञानेंद्रियांहै तिसकी विशेषज्ञानवृत्ति अरु अंतःकरणकी निश्चयआत्मकवृत्ति इनका जो एकत्रहोनाहै तिसकानाम विज्ञानमयकोशहै

सो मायाके सत्वगुणका कार्यहै तहां आकाशके सत्व गुणके श्रोत्र। वायुके सत्वगुणकी त्वचा। अग्निके सत्वगु णके चक्षु। जलके सत्वगुणकी रसना। पृथिवीके सत्व गुणकी नासिका। अरु समष्टि सत्वगुणसे बुद्धि। यह स र्व सत्वगुणकाकार्य मिलके विज्ञानमयकोश भयाहै। सो सत्वगुणकाभाग शुद्धहोनेसे ज्ञानस्वरूपआत्माके विशेष आभासकों अपनेविषे लेके आपज्ञानवान्होताहै। जैसे शुद्ध दर्पण सूर्यके विशेष आभासकों लेके आप प्रकाशवा न होयहै। यह इसविज्ञानमयकोशका स्वरूपहै। ऐसा जो सत्वगुणका कार्य साभास विज्ञानमयकोश सो शब्द स्पर्श रूप रस गंध इन्ही पंचविषयोंका विवेचनपूर्वक निश्चय करेहै सोई इसकी क्रियाहै। अरु क्षण २ में पलटना अ र्थात् घटसाथ घटकाज्ञान अरु पटसाथ पटकाज्ञान होना यह इसका स्वभावहै। अरु गुणमयता इसमें दोषहै। ऐ सा जो विज्ञानमयकोशहै सो भी आत्मानहीं। इसविज्ञा नमयमें स्थित अरु विज्ञानमयसे पृथक् विज्ञानमयकों। जाननेवाले विज्ञानके ज्ञातमें न आवें सो साक्षिआत्मा अ पुन है। यह ज्ञेयरूप विज्ञानमयकोश आत्मानहीं। तथाच यो विज्ञाने तिष्ठन्विज्ञानादन्तरो यं विज्ञानं न वेद यस्य विज्ञा नं शरीरं यो विज्ञानमन्तरो यमयत्येष त आत्मान्तर्याम्य मृतः। बृ० उ०के ५ में ६ अ०के उद्दालकब्रा०की २२ मीश्रुति प्रमाण॥४॥

हे सौम्य इस विज्ञानमयकोशके अनन्तर आनन्दम

यकोश है तिसको भी श्रवणकरो। विज्ञानात्मा बुद्धिकरके २ भोगेगये जे जागृत् स्वप्न अवस्थामें विषय भोग तिसविषयभोगकी स्मृति जिसआनंदकी अभिलाषासे रहेहै सोई आनंदमयकोश है अरु सोई कारणशरीरहै। जब मनोमयकोशकोलेके विज्ञानमयकोश जो कि जागृत् स्वप्नकी विशेषताके हेतुहैं सो कारणसुषुप्तिमें लीनहोतेहैं तब जागृत् स्वप्नकी सर्व विशेषताके अभावसे जो साभास आनन्द है सोई आनन्दमयकोश है सो जिसविज्ञानमयकोशके अन्तरहै तिसविज्ञानमयको छोड़के तिसहीकेआकाररहेहै सो आनंदमयकोश अपने प्रिय मोद प्रमोद आनन्द इनचारों पादोंकी विशेषतासे विशेषरूपकरके जागृत् स्वप्न अवस्थामें अनुभवहोयहै। अरु तिस आनन्दमयकोशरूप २ कारण सुषुप्तिअवस्थामें जहां कि मनोमय विज्ञानमय तारूप एकहोतेहैं तब तिस सुषुप्ति विशिष्टचैतन्य प्राज्ञात्मा २ साथ एकभया बुद्धिविशिष्ट चैतन्यपुरुष तिसविषे कर्तृत्वादिकोंका अभावहोताहै प्राज्ञात्मा कारणसुषुप्तिके अभिमानी किंवा तत् विशिष्टचैतन्यको कहतेहैं। तथाच "अयं पुरुषः प्राज्ञेनात्मना परिष्वक्तो न बाह्यं किंचन वेद नान्तरम्"। बृ० उ० के अ० ६ के ज्योतिब्रा० की २१मी श्रुतिमें॥ तिस विशेषके अभावसे जो आनन्दहै तिसआनन्दको ग्रहणकरनेवाली जो अन्तःकरणकी शुद्ध सत्वगुणात्मक सूक्ष्म साभासवृत्ति सोई आनन्दमयकोशहै तिस आनन्दमयकोशमें सुषुप्तिरूप कारण अज्ञानरहेहै ताते आनन्द

मयकोश आत्मानहीं क्यों जो सुषुप्तिअवस्थाका आनंदहै सो विषयकेअभावजन्यहै अरु अविद्याका भाग अंतःकरण तिसकी जो शुद्धसत्वगुणात्मकवृत्ति तिसकों आश्रयकरे है अरु कारण अज्ञानसुषुप्तिसे भास्यभासक संबंध रखतेहैं। अर्थात् आनंदमयकोश सुषुप्तिमेंभासैहै। एतदर्थ आनन्दमयकोश आत्मानहीं इस आनंदमयकोशका प्रकाशक साक्षि आत्मा भिन्नहै कि जिसकरके "स्वपितीत्याचक्षते", सर्व विषयकाअभाव अरु अज्ञान सुषुप्ति आनन्दका भाव अनुभवहोयहै सोई सर्वका साक्षि आत्माहै यह आनन्दमयकोश आत्मानहीं ॥ ५ ॥

हे सौम्य इसप्रकार अन्नमयकोशआदिलेके आनन्दमयपर्यंत पांच कोशहैं सो परस्पर पूर्व २ से उत्तरोत्तर सूक्ष्म हैं। अर्थात् सर्वसे स्थूल अन्नमयकोश १ तिससे सूक्ष्म प्राणमयकोश २ तिससे सूक्ष्म मनोमयकोश ३ तिससे सूक्ष्म विज्ञानमयकोश ४ तिससे सूक्ष्म आनन्दमयकोश ५। इस प्रकार प्रथमकी अपेक्षा दूसरा सूक्ष्महै अरु ज्यों हीं ज्यों सूक्ष्महोतेगये त्यों हीं त्यों इनविषे आत्मत्व प्रतीति होतीगई। सो बडे २ जे मतवादी शास्त्रकर्ता आचार्य भये अरु हैं सो प्रायः इन कोशोंहीविषे किसीकोंतकिसीकों आत्मा मानतेहैं। चार्वाकी विरोचनकी सम्प्रदायवाले असुर अन्नमयकोशकों आत्मामानतेहैं। अरु प्राणकेउपासक शाकल्यआदिकभी कि जो शाकल्य सर्वके साक्षिचैतन्यआत्माकों न जाननेकेहेतु याज्ञवल्क्यकेप्रश्नका उत्तर न देनेसे

याज्ञवल्क्यके पापरूपीखड्गके प्रहारसे मस्तकपातहोयम-
रणको प्राप्तभया, प्राणमयकोशकों आत्मामानतेहैं अरु
सहकामा जाबालिके मतवादी मनोमयकोशकों आत्मा
मानतेहैं। अरु बौध क्षणिकविज्ञानमतवादी विज्ञानम-
यकोशकों आत्मामानतेहैं। अरु नैयायकआदि मतवा
दी आचार्य आत्माकों मोक्षकालमें जड़ मानतेहैं ताते
वो आनन्दमयकोशकों आत्मामानतेहैं। इसप्रकार इन
कोशोंही कों आत्मामानके बड़े२ शास्त्रवादी आचार्य अ
टकेपड़ेहैं। अरु जे कोई सूक्ष्मबुद्धिपुरुष महावाक्यद्वारा
यथार्थ साक्षिआत्माकों सर्वसेपृथक् अपनाआप अनुभव
करनेवाले, भृगुवत्, जोके भृगु अपनेपिता वरुणके उप
देशसे पंचकोशोंके बारंबारविचारसे पंचकोशसे पृथक
पंचकोशातीत सर्वके साक्षिआत्माकों अपनाआप अनु-
भवकरके कैवल्यशान्तिकों प्राप्तभया। आत्मज्ञानद्वारा।
मोक्षकोप्राप्तहोतेहैं सो धीरपुरुषकोई विरले होतेहैं तथा
च "कश्चिद्धीरः प्रत्यगात्मानमैक्षदावृत्तचक्षुरमृतत्वमिच्छन्"
। क०उ०वी४ पीवल्लीकी आदिमें। अरु विनाज्ञानके मो-
क्षनहीं। तथाच "ज्ञानादेवतु कैवल्यं" इतिश्रुतिः। ताते अ
न्नमयादिसे आनंदमयकोशपर्यंत सर्वका प्रकाशक सा-
क्षि अधिष्ठान चैतन्यआत्माहै कि जिसकी निर्विशेष अ-
नुभवकी स्थितिमें अन्नमयादि सर्व विशेषताके अभावसे
आत्मामें रहे जे साक्षित्व प्रकाशकत्व अधिष्ठानत्व आदि
विशेषणतिसकाभी विशेषताके साथ अभावहोताहै क्यों जो।

विशेषताकेहोनेसे विशेषणका होनाहै । साक्ष्य की अपेक्षासे साक्षित्व तमकी अपेक्षासे प्रकाशकत्व अध्यस्तकल्पितकी अपेक्षासे अधिष्ठानत्व आदि विशेषणहोते हैं अरु जब साक्ष्य तम अध्यस्त आदि विशेषताका अभावभया तब तिनकरके आत्माविषे आये जे साक्षित्व प्रकाशकत्व अधिष्ठानत्व आदिके विशेषण तिनका भी अभावहोताहै तब विशेष विशेषण के अभावसे निर्विशेष्य अवशेषरहा जो ज्ञप्तिमात्र अखण्डपद सो परमानन्दस्वरूप सर्वका अपनाआपहै । तिसपरमानन्दकी साक्षात् अनुभवस्थितिमें चक्रवर्त्तिराज्यके आनन्दसे लेके ब्रह्मलोकपर्यन्तके आनन्द जो कि पूर्व २ से उत्तरोत्तर सौ-सौ गुण अधिक हैं, सो सर्व आप्तकाम निर्विशेष आत्मानुभवीपुरुषकी स्थितिमें तृणप्रायहैं । ताते सर्व काम कामना कर्मको अभावकरके निर्विशेषआत्मानन्दअनुभवी जे ज्ञानवान् पुरुषहैं तिनकाशरीर प्रारब्धभोगके तब समाप्तहोताहै तब अन्नमयादिसे आनन्दमयकोशपर्यंतको त्यागके उक्त भणसेरहित जहांहै तहां ही निर्विशेष परमशान्त जो ब्रह्मानंदहै सोई होताहै सो वाणी मन बुद्ध्यादिपर्यंत किसीका भी विषयनहीं । हे सौम्य ऐसा जो परमानंदस्वरूप परमशुद्ध स्फटिकमणिवत् चैतन्यआत्माहै सो उपाधिरूप पंचकोशोंमें आयके तत्तत् आकारसा भासैहै परंतु आत्मा अपनेआपस्वरूपकरके सर्व उपाधि अरु उपाधि के धर्मसे रहित सदाशुद्धबुद्ध मुक्त स्वभावहै तिसको

सर्वकोशोंके विचारपूर्वक सर्वसे पृथक् अपनाआप अनुभ-
वकरो यही कर्तव्यहै ॥

॥ शिष्य उवाच ॥

हे गुरो आपने पंचकोशोंद्वारा इससंघातरूपशरीरकों
कहा अरु आत्माकों सर्वसंघातसे पृथक् सर्वका साक्षि
चैतन्यकहा सो अस्तु परंतु श्रुतिने ऐसाकहाहै जो "चक्षुर्वै
ब्रह्मेति, 'श्रोत्रंवैब्रह्मेति,' मनोवैब्रह्मेति,' मनोब्रह्मेतिविजानात्"
हृदयंवैब्रह्मेति,, 'प्राणस्येदंवशेसर्वं' प्राणस्यविज्ञायात्मभूतं
विज्ञानंब्रह्मेति,, । चक्षुहीब्रह्महै, श्रोत्रहीब्रह्महै, मनहीब्रह्महै,
प्राणब्रह्महै, विज्ञान, बुद्धि, ब्रह्महै । अरु आप इनसर्वकों
अनात्माकहके आत्माकों इनसर्वसे पृथक् सर्वकासाक्षि
कहतेहो तब श्रुतिकाकहना व्यर्थहोताहै अरु श्रुति सर्वथा
प्रमाणहै ताते इस संशयकों भी आप निवारणकरिये ॥

॥ गुरुरुवाच ॥

हे सौम्य तुमने जो चक्षुआदिकोंकों ब्रह्महोनेके विषमें
श्रुतिकहा सो सर्व ठीकहै परंतु वो सर्वश्रुति उपासनावि-
षयकहैं अरु इन चक्षुरादिकोंकी जो उपासनाहै सो अहंग्रह
उपासनाहै जो कोई पुरुष श्रुतिके वाक्यानुसार यथाविधि
चक्षुब्रह्मकीउपासनाकरताहै कि "चक्षुर्ब्रह्म" अर्थात् जो कि
नेत्रोंद्वारा दृष्टहै सो मैं हूं । इसप्रकार चक्षुरूपीअधिसा-
धमिलेन्द्रियकी परिच्छिन्नतासे उपासनाकरताहै तिसपु-
रुषके चक्षु यावदायुष्य अभावनहींहोते अरु सो उपा-
सकदेहत्यागके अनन्तर चक्षुके अधिष्ठाता देवताकेसा-

प एक होताहै। तातै जिसकों चक्षुकी कामनाहोय कि हमा
रे चक्षु अभावनहोंय सो चक्षुब्रह्मकी उपासनाकरे ॥

हे सौम्य तुमने जो चक्षुरादिकोंको ब्रह्महोनेविषै श्रुतियां
कहीहैं सो सर्व सोपाधि परिच्छिन्न आत्मोपासनापरत्व
भी हैं। अरु जो निरुपाधि अपरिच्छिन्न साक्षिआत्मा
है सो सर्वसे पृथक् सर्वका आत्मा चक्षुरादि सर्वमेंस्थित
अरु चक्षुरादि किसीकाभी विषयनहीं तिस आत्माके सा-
क्षात् अपनाआपअनुभवविना मोक्षनहीं तातै साक्षिआ-
त्मा इनसर्वसे पृथक् अपनाआपहै। तथाच "यश्चक्षुषि
तिष्ठन्। यं चक्षुर्न वेद।एतदात्मानं श्रोत्रस्य श्रोत्रम् मनसो मनो
यद्वाचो ह वाचं स उ प्राणस्य प्राणः चक्षुषश्चक्षु रतिमुच्य
धीराः प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति"। "नान्यःपंथाविमुक्तये"
इत्यादिश्रुतिः। सोई श्रोत्रका श्रोत्रहै। अर्थात् श्रोत्रइंद्रिय
के भाव अभावका प्रकाशकहै कि जो पूर्वकालमें हमारे श्रो
त्र शब्दको भलीप्रकार सुनतेरहे अब वर्तमानकालमें कुछ
भी श्रवणनहीं करते। इस हीप्रकारसे मन वाक् चक्षु प्राणा
दि सर्वसे रहित अरु सर्वसाथमिलके सर्वका प्रकाशकहै अ-
रु सोई सर्वका अपनाआप आत्माहै इस अपनेआपआत्मा
से इतर इनसर्वका प्रकाशक कोईनहीं वो सर्वको जानताहै
उसका जाननेवाला कोई नहीं। तथाच "नित्यानान्यरं केव-
विज्ञातिमात्र्" ॥

हे सौम्य जिस आत्माको वाणी नहीं प्रकाशै अर्थात्
कहेसकती अरु जिसके प्रकाशकरकै अर्थनिरूपणवाक्यके

वाणी प्रकाशतीहै अर्थात् शब्दोच्चारकरतीहै। तैसेही चक्षु श्रोत्र मन प्राणादि कोई भी नहीं प्रकाशसकते अर्थात् नहीं जानते अरु जिसके प्रकाशकरके अर्थात् सत्ता करके मनआदिसर्व अपने २ कार्यकोंकरते प्रकाशितहैं। "तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि" सोई प्रकाशक चैतन्यआत्मा ब्रह्महै। इससे इतर ब्रह्मकोईनहीं। तथाच "अयमात्माब्रह्म", "नातःपरमस्तीति"। ताते हे सौम्य इस पंचकोशात्मक संघातमें आत्माकोईनहीं यह सर्व काष्ठभारवत् जडहै। अरु आत्माजो है सो इन सर्वका प्रकाशक साक्षि सर्वसे पृथक्है। अरु सर्वसाथमिलके सर्वरूप भी वोही होरहाहै तिसकों सर्वसंघातद्वारा सर्वसे जुदा अपनाआपरूप अनुभवकरो॥

॥शिष्यउवाच॥

हे प्रभो आपने इस पंचकोशात्मक सर्वसंघातसेपृथक् सर्वका प्रकाशक सर्वकों सत्तादेनेवाला जिसकी सत्ताप्रायमनआदिसर्व अपने२ व्यापारकों करतेहैं अरु जिसकों मनआदिकोई भी नहीं जानसकते सोई सर्वका साक्षि प्रकाशक अपनाआपआत्माहै तिसको अनुभवकरो, सो अस्तु परंतु जिस चैतन्यआत्माकों आप बुद्ध्यादि सर्वसंघातसे पृथक् अपनाआप कहतेहो सो आत्मा संघातसे भिन्न हमकों दृष्ट नहीं आवता अरु जोवस्तु दृष्टमें न आवे तिसका निश्चयआत्मक अनुभव कैसेहोय सो आप कहिये॥

॥गुरुरुवाच॥

हे सौम्य तुमने कहा कि सर्वसंघातसे पृथक् जो सर्व-

का प्रकाशक साक्षिआत्मा कहतेहो सो हमारीदृष्टिमें नहीं २
आवता तब तिसका अनुभवकैसेहोय जो यह आत्माहै। सो
हे सौम्य आत्मा जो है सो ज्ञानस्वरूप परमचैतन्य सर्वका
अनुभवी महासूक्ष्म अपनाआपहै तिसको प्रत्यक्ष पदार्थ
वत् न देखोगे वो इंद्रियादि बुद्धिपर्यंत सर्वके भावअभा-
वका प्रकाशक ज्ञाताहै तिसको इंद्रियादि बुद्धिपर्यंत को-
ई भी जाननेको समर्थनहीं। जैसे दीपक सर्वपदार्थकोप्र-
काशैहै पदार्थ दीपकके प्रकाशनेको समर्थनहीं तैसे स-
र्वके अनुभवी ज्ञाताआत्माको इंद्रियादिकरके घटवत् २
नदेखोगे। तथाच "न दृष्टेर्द्रष्टारं पश्ये र्न श्रुतेः श्रोतारं शृ-
णुयात् न मतेर्मंतारं मन्वीथा न विज्ञातेर्विज्ञातारं विजानी
यादेषत आत्मा सर्व्वान्तरः"। बृ॰उ॰के अ॰५ के ब्रा॰४ मे श्रुति
ताते हे सौम्यतुम्हाराजो अपनाआप आत्मस्वरूपहै तिस
को सर्वसंघातसे पृथक् सर्वका अनुभवी अपनेआपको
अनुभवकरो जिसआत्माको चक्षुकरके देखनेकी इच्छा
करतेहो सोई तुम्हारा अपनाआप चक्षुरादि सर्वइंद्रियों-
का द्रष्टाहै। तथाच "चक्षुषोद्रष्टा श्रोत्रस्यद्रष्टा वाचोद्रष्टा
मनसोद्रष्टा बुद्धेर्द्रष्टा तमसोद्रष्टा सर्वस्यद्रष्टेति श्रुतिः"। ताते
दृष्टिके द्रष्टाको घटवत् न देखोगे श्रोत्रके श्रोताको शब्द
वत् न सुनोगे मनकेमंताको मनन न करोगे बुद्धिके विज्ञा-
ताको न जानोगे। हे सौम्य जिस ज्ञाताआत्माकरके इस २
अन्नमयसे आनन्दमयकोशपर्यंत अरु ब्रह्मणसे ईश्वरपर्यंत
सर्वकी ज्ञातहोतीहै तिसकी ज्ञात किसकरकेहोतीहै अर्थात्

उसका ज्ञाता कोई नहीं जो किसीका भी ज्ञेय न होके सर्वका ज्ञाता अपना आप आत्मा है तिसको सर्व संघातसे पृथक सर्वका प्रकाशक अनुभवी अपने आपको अनुभव करो ॥ जिस संघातको तुम अपना जानते हो सो संघात अनात्मरूप सर्व काष्ठभारवत् जड़ है क्योंजो ज्ञेयरूप है । तथाच "यत् ज्ञेयं तज्जडं" ज्ञेय है सो जड़ होता है अरु तुम ज्ञेयरूप न होके सर्वके ज्ञाता सर्वसे पृथक् चैतन्य स्वरूप हो ताते "घटद्रष्टा घटाद्भिन्नः" इस न्याय प्रमाण सर्व संघातादिकोंके ज्ञाता अनुभवी अपने आपको सर्वसे पृथक् अनुभव करो यह संघात आत्मा नहीं ॥

हे सौम्य जो जिज्ञासु पुरुष इस प्रकार आचार्य से उपदेश पाय विचार पूर्वक अन्नमयादि मूलप्रकृति पर्यंत पंचकोशात्मक सर्व संघातसे पृथक् अपने आपको अनुभव कर अभ्यास स्थिति पावता है सो पुरुष अन्त में अन्नमयादि आनन्दमय पर्यंत पंचकोशोंको उल्लंघके अपना आप निर्विशेष ब्रह्म ही होता है । तथाच "ब्रह्मविद्ब्रह्मैव भवति" भृगुवाल्यादिवत् ॥-॥ ३१ ॥-॥ प्र० ॥ हे प्रभो आपने पंचकोशात्मक संघातरूप अनात्मासे सर्वको अधिष्ठान साक्षि आत्माको पृथक् सर्वका अपना आप प्रतिपादन किया सो अस्तु परंतु यह जो जाग्रदादि अवस्था है सो किसको है सो भी कृपा करके कहिये ॥ उ० ॥ हे सौम्य यह जो जाग्रदादि अवस्था है सो बुद्धिकी है साक्षि आत्माकी नहीं सो अब इसको भी तुम्हारे प्रति कहते हैं तिसको भी श्रवण करो ॥-॥ ॐ तत्सत् ॥-॥ ::

॥ बुद्धे स्त्रिधा वृत्ति रपीह दृश्यते स्वप्नादि भेदेन ॥
॥ गुणत्रयात्मनः । अन्योन्यतोऽस्मिन् व्यभिचा ॥
॥ रतो मृषा नित्ये परे ब्रह्मणि केवले शिवे ॥ ३२ ॥

॥ इह गुणत्रयात्मनः बुद्धेः अपि वृत्तिः स्वप्नादिभेदेन । त्रिधा दृश्यते अन्योन्यतः व्यभिचारतः अस्मिन् केवले शिवे नित्ये परे ब्रह्मणि मृषा [प्रतीयते] ॥ ३२ ॥

॥ यह त्रिगुणात्मिका बुद्धिकी जो वृत्ति स्वप्नादिअवस्था-भेदकरके त्रिधा दीखतीहै [सो अवस्थारूपावृत्ति] परस्पर व्यभिचारीहोनेसे इस अद्वैत शिव नित्य सर्वसेपरे । ब्रह्मआत्माविषे मिथ्या [प्रतीतहोतीहै] ॥ ३२ ॥

हे लक्ष्मणजी यह१। त्रिगुणात्मिका२। बुद्धिकी३। जो४ वृत्ति५। स्वप्नादिअवस्थाभेदकरके६। तीनप्रकारकी७। दि-खतीहै८। सो तीनोअवस्थारूपवृत्ति। परस्पर९। व्यभिचा-रीहैं१०। अर्थात् एकविषे दूसरीका अभावहै। तिसकारण-से इस११। अद्वितीय१२ चैतन्य१३। एकरस१४। सर्वसंघा-तसेपरे१५। जे ब्रह्मआत्मा तिसविषे१६। मिथ्या प्रतीतहोती-है१७॥ अर्थात् आत्माविषे यह तीनो अवस्था असत्य हैं। यह अवस्था बुद्धिकीहैं अब इनका भेद श्रवणकरो ॥

हे सौम्य सत्वगुणसे नेत्रस्थानमें जाग्रदवस्था। रजोगु-णसे कंठस्थानमें स्वप्नावस्था। तमोगुणसे हृदयस्थानमें

सुषुप्ति अवस्थाहोतीहै सो यह तीनों अवस्था परस्पर।
भिन्न २ व्यभिचारीहैं अर्थात् एकविषे दूसरीका अभावहै
सो यहसर्व बुद्धिके भेदहैं आत्माविषे जो इसका आरोप-
णकरतेहैं सो अज्ञानके आश्रय करतेहैं ताते उनकाआ-
रोपकरना असत्यहै। आत्मा जोहै सो केवल शुद्ध अद्वैत।
सच्चिदानन्द सर्वसे परे सर्वका साक्षीहै अरु यहजाग्रदा-
दि अवस्थाहैं तिनका परस्पर व्यभिचारहै जाग्रत विषे।
स्वप्न अरु सुषुप्ति दोनों नहीं। स्वप्नविषे जाग्रत अरु सुषुप्ति
दोनों नहीं। अरु सुषुप्तिविषे जाग्रत अरु स्वप्न दोनोंन-
हीं। इसप्रकार यह अवस्था परस्पर व्यभिचारीहैं ताते
आत्माविषे असत्यहैं। अरु तीनोंगुणोंके सम्बन्धसे ए-
थक् २ बुद्धिविषेहोतीहैं। तथाच जाग्रत स्वप्नः सुषुप्तिंच
गुणतो बुद्धि वृत्तयः। तासां विलक्षणो जीवः साक्षित्वेन।
विनिश्चितः। इति भागवत एकादशस्कंधे १३ अ० के २७
में श्लोकमें। ताते हे सौम्य जाग्रदादि सर्वअवस्था बुद्धि
कीहैं आत्माकी नहीं। आत्मा बुद्धि अरु तिसकी अव-
स्था गुणकर्मादि सर्वसेपरे सदा शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव।
है तिसआत्माकी सत्ता पायके बुद्धि जाग्रत स्वप्नविषे ना-
ना प्रकारके स्थूल सूक्ष्म ब्रह्माण्डकों खडा करतीहै पुनः
सुषुप्तिमें सर्वका लय करतीहै ताते जाग्रत् स्वप्नविषे।
नानाप्रकारकी स्थूल सूक्ष्म रचना करनी पुनः सुषुप्तिमें।
सर्वका अभावकरना पुनः सुषुप्तिसे स्वप्नमें वा जाग्रतमें।
आवना तिसविषे नानाप्रकार भ्रम है यादि कल्पनाकर।

तिसके व्यवहारमें प्रवृत्त होना यह सर्वक्रिया बुद्धिकी हैं सो आत्माकी सत्ताके आश्रय होते हैं अरु आत्मा तिसविषे स्वयंप्रकाश निराकार निष्क्रिय सर्वका साक्षी सर्वसे पृथक् है ॥

॥ शिष्यउवाच ॥

हे भगवन् कोई एक बुद्धिवादि आचार्य कहते हैं कि यह बुद्धि जाग्रत् स्वप्न अवस्थाको पायके स्थूल सूक्ष्म सर्व ब्रह्मांडको खड़ा करतीहै अरु जब सुषुप्तिविषे जातीहै तब सर्वको अभाव करजातीहै फिर जब जाग्रत् स्वप्नविषे आवतीहै तब पुनः नानाप्रकार स्थूल सूक्ष्म ब्रह्मांडको खडा करतीहै। तातें जो बुद्धि एतने कार्य करतीहै सोई अपने कार्यको आपही प्रकाशकर ज्ञात करतीहै एतदर्थ इसको पृथक् जानना नहीं चाहिये तातें बुद्धिसे पृथक् उसका प्रकाशक आत्मा कोई नहीं ॥

॥ गुरुरुवाच ॥

हे सौम्य तुमने बुद्धिकोंही स्वयंप्रकाश कहा अरु इससे पृथक् इसका प्रकाशक आत्मा कोई नहीं कहा सो ऐसा नहीं। बुद्धिसे बुद्धिका प्रकाशक आत्मा पृथक् है जिस चैतन्यविषे बुद्धिकी सर्व अवस्थादिकोंका अनुभव होताहै सो अनुभवी आत्मा महासूक्ष्म स्वयंज्योती बुद्धिविषे ही स्थित है परन्तु सो महासूक्ष्म स्वयंज्योती आत्मा जाग्रत् अवस्थामें प्रकट भान होता नहीं क्यों जो इस जाग्रत् अवस्थामें सूर्यादि भूत भौतिक स्थूल प्रकाशोंके समुदायमें महासूक्ष्म स्वयंज्योती विद्यमान् होत संते भी प्रकट भान नहीं

होता ताते हे सौम्य इस महासूक्ष्म स्वयंज्योति आत्माकों स्वप्नविषे सर्वसे पृथक् अपनेआपकों अनुभवकरो। जब कि स्वप्नमें आप यह बुद्धि नानाप्रकारकी सृष्टिका स्वरूप भूतहोतीहै तब वहां इसकों अपनीज्ञान कुछ भी नहीं रह ती जो हम क्याहैं ऐसी जो बुद्धिकी जडात्मक अवस्था तिस अवस्थाकों प्रकाशकर अनुभवकर्ता जोहै सोई अनुभवी स्वयंप्रकाश महासूक्ष्म आत्मा बुद्धिसे पृथक्है ताते बुद्धि आत्मानहीं। हे सौम्य "घटद्रष्टा घटाद्भिन्नः" इसन्यायकरके अर्थात् घटका जाननेवाला घटसे पृथक् होताहै। तैसे ही बुद्धिरूपीघटका अनुभवी आत्मा बुद्धिसे पृथक् ही है। जैसे प्रकाशबिना पदार्थसिद्धनहींहोते। तैसे ही बुद्धि अरु तिस का सर्व व्यापार पृथक् चैतन्यआत्माबिना सिद्धनहीं होता तुम बुद्धिके व्यापारकों पृथक् चैतन्य ज्ञानबिना कैसे सिद्ध करतेहो किंतु पृथक् ज्ञानबिना बुद्धिका व्यापार सिद्धनहींहोता

॥ शिष्यउवाच ॥

हे गुरो जब बुद्धि सत्त्वगुणका कार्य होनेसे प्रथम आप प्रकाशरूपहोय पुनः स्थूल सूक्ष्म अनेक पदार्थाकार होती है क्यों जो बुद्धि सर्वगुणसम्पन्नहोनेसे अपने सर्वव्यापारकों कैसाकने सकेंदने विषे समर्थहै यह बुद्धि जाग्रदादि किसी अवस्थामें भी अपनेसे पृथक् ज्ञानीप्रकाशककी अपेक्षा नहीं करती ताते उसकों पृथक् ज्ञाननहींचहिये अरु आप कहतेहो कि बुद्धिका प्रकाशक ज्ञाता चैतन्य बुद्धिसे पृथक्है तिसकों कृपाकर पुनः कहिये ॥

॥ गुरुरुवाच ॥

हे सौम्य तुमने कहा कि बुद्धि अपने सर्व व्यापारमें समर्थ है वो किसी अवस्थामें भी अपनेसे पृथक् प्रकाशकज्ञान की अपेक्षा नहीं करती ताते उसकों पृथक् प्रकाशकज्ञाता नहीं चहिये । सो ऐसा नहीं ॥ जैसे पुरुष सूर्यके प्रकाशको आश्रय अपने सर्वव्यवहारकों फैलावने समेटनेमें समर्थहै उससमय किसी प्रकाशकी सहायताकी भी आकांक्षानहीं कर्ता अरु विद्यमानजो स्वयंप्रकाश सूर्यहै, कि जिसके प्रकाशमें पुरुष अपने सर्वव्यापारकों कर्ताहै, तिसकों भी अज्ञानजन्य अपने अहंकर्तारूप अभिमानके आवरणते से नहीं जानता जो मेरा सर्वव्यापार सूर्यके प्रकाशके आश्रयहोताहै अरु तिसकी आकांक्षा भीनहीं क्यों कि जो प्रकाश न होयतो प्रकाशकी आकांक्षाहोय जो वस्तु प्राप्तहोतीहै तिसकी आकांक्षा होती नहीं ; ताते विद्यमान जो सूर्यका प्रकाश तिसकी पुरुषकों आकांक्षानहीं अरु आपकों कर्ता अभिनिवेशके आवरणसे सूर्यके प्रकाशका ज्ञान भी नहीं परंतु सो नहीतैसे सूर्यही नहीं ऐसातो होता नहीं ॥ तैसेही स्वयंप्रकाश निराकार महासूक्ष्म आत्माके प्रकाशके आश्रयकों पायके बुद्धि अपनी सर्व अवस्थाके व्यापारकों करतीहै । अरु बुद्धिकी सर्व अवस्थाविषे आत्माका प्रकाश एकरस समानहै क्यों कि महासूक्ष्म निराकार स्वयंज्योतिआत्मा सूर्यवत् उदय अस्त होता नहीं वो सर्वदा एकरस उदय अस्तसेरहित हृदयाकाशमेंही स्थितहै । ताते बुद्धिकों

सर्व अवस्थाविषे स्वयंज्योति आत्माका प्रकाश प्राप्त है ताते
तिसकी आकांक्षा नहीं अरु तिसही प्रकाशके आश्रय बु-
द्धिकी सर्वअवस्थासहित स्थूल सूक्ष्म ब्रह्मांडके व्यवहार,
उत्पत्ति प्रलयादि सिद्ध होते हैं। अरु स्वयंज्योति आत्मा अ-
पने आपविषे सर्वकाल एकरस ज्योंका त्यों है तिसकों बु-
द्धि अपने कर्त्ता भोक्ता अभिनिवेशसे आवृत्त भयी जान
ती नहीं जो मेरा प्रकाशक स्वयंज्योति साक्षि आत्मा मुझसे पृथ
क है। परन्तु तिस न जाननेसे बुद्धिका प्रकाशक ज्ञाता आत्मा
बुद्धिसे पृथक् कोई नहीं ऐसा होता नहीं। ताते हे सौम्य,
सर्वका साक्षि स्वयंप्रकाश आत्मा बुद्धिसे बुद्धिके धर्म कर्म
अवस्था गुण दोषादि सर्वसे पृथक् ही अनुभव करके,
मानना चहिये वो आत्मा सर्वप्रकाशोंका भी प्रकाशक है,
इसकों सूर्यादिलेके जितने कुछ भूत भौतिक प्रकाश हैं सो
नहीं प्रकाश सकते अरु उसके प्रकाशसे यह सर्व प्रकाश-
ते हैं अर्थात् सिद्ध होते हैं। तथाच "न तद्भासयते सूर्यो न श-
शांको न पावकः" इत्यादि भगवद्गीताके अ०१५ के श्लोक ६
में। ताते सर्व प्रकाशोंका प्रकाश बुद्धि आदि सर्वसे पृथक्,
आत्माही है। तथाच "यो बुद्धेः परतस्तु सः" गी०अ०३ श्लो०४२॥

॥शिष्य उवाच॥

हे गुरो आपने स्वयंप्रकाश ज्ञाता आत्माकों बुद्धिसे पृ-
थक् कहा सो अस्तु परन्तु हमकों बुद्धिसे पृथक् आत्मा कि-
सी अवस्थाविषे भान नहीं होता अरु आपने कहा जो स्वयं-
ज्योति आत्माकों बुद्धिसे पृथक् स्वप्नमें देखो सो हमकों

बुद्धिसे पृथक् स्वयंज्योति आत्मा प्रतीतहोता नहीं अरु यह बुद्धि जाग्रत् जगतके सूक्ष्म संस्कारकोंलेकेस्वप्नमें सृष्टिको स्वड़ीकरतीहै । तैसे ही जाग्रत्के सूर्यादिकोंके प्रकाशके सूक्ष्मसंस्कारलेके स्वप्नविषे सर्व व्यापारकों सिद्धकरतीहै उसका पृथक् प्रकाशक कोई नहीं । अरु आपका कहना यह है जो बुद्धिसों बुद्धिके व्यापारसों प्रकाशक आत्मा पृथक्ही है । सो हमकों भानहोतानहीं तातें हमारे संशयकी निवृत्तिके अर्थ कृपाकर पुनः कहिये कि जिसकरके बुद्धिसे पृथक् अपने आपकों सर्व उपाधिसे रहित अनुभवकरके शान्तिमान् सुखी होवं ॥

॥गुरुरुवाच॥

हे सौम्य तुमनेकहा जो जाग्रत् जगतके संस्कारकोंलेके बुद्धि स्वप्नविषे सर्व ब्रह्मांडकों खडाकरतीहै तैसेही सूर्यादिकोंके प्रकाशके संस्कारके आश्रय प्रकाशभी करतीहै उससे पृथक् स्वयंप्रकाश आत्मा कोईनहीं । सो ऐसानहीं है यादि प्रथम आप जाग्रत्के प्रकाशके संस्कारके आश्रय जाग्रतविषेही व्यापार सिद्धकरदेखाओ तब पीछे जाग्रत्के प्रकाशके संस्कारके आश्रय स्वप्नके व्यापारकी सिद्धता हम मानेगें । हे सौम्य देखो इस कोठेके अंधकारविषे एक घट भराहै तिसकों तुम दीपकादि प्रत्यक्ष प्रकाशविना केवल सूर्यादिकोंके प्रकाशके संस्कारके आश्रय जो कि तेरी बुद्धिविषेहै देखतेहो या नहीं सो कहो । हे प्रभोजो इस कोठेके अंधकारविषे घटहै सो प्रत्यक्ष प्रकाशविना

दीखतानहीं। हे सौम्य देखो जब जाग्रदवस्थाके प्रकाशके संस्कार जाग्रत्में ही प्रकाश नहीं सकते तब स्वप्नअवस्था- में, जो कि जाग्रतसे पृथक है तिसविषे, कैसे प्रकाशकरेंगे अर्थात् नहीं प्रकाशते। ताते बुद्धि अरु तिसके सर्वव्यापा रसे स्वयंज्योति ज्ञाता आत्मा पृथक् माननाचाहिये। हे सौ- म्य श्रुतिके वाक्य अरु अपनेआप अनुभव प्रमाणसे विचा- रदेखो जबयह बुद्धि स्वप्नमे जाग्रतके देहादिसे सूर्यचंद्रादि पर्यंत स्थूल सूक्ष्म अनेक ब्रह्मांडोके आकारोंको जाग्रतसंस कारके निमित्तसे धारतीहै अरु स्वप्नमेंही एक स्वप्नसृष्टिकों अभावकरके दूसरीस्वप्नसृष्टिकों रचतीहै कहीं सूर्यादि प्र- काशोंका भाव रचतीहै कहीं अभाव रचतीहै तिस अपनी रचनामें बुद्धि तारूपही होतीहै तिस बुद्धि अरु बुद्धिकी अव- स्थाकों प्रकाशकर अनुभवकरतीहै सोई अनुभवी सर्वप्रका- शोंका प्रकाशक स्वयंज्योती साक्षि आत्मा सर्वका अपना- आप सर्वसे पृथक् अपने विषे आप ज्योंका त्यों है। तातेबु- द्धि अरु बुद्धिके व्यापार गुणदोषादि सर्वसे पृथक् सर्वका ज्ञाता आत्मा अपनाआपहै। यह बुद्धि स्वयंप्रकाश आत्मानहीं आत्मातो बुद्धि अरु इंद्रियादि सर्वसे परे है। तथाच इंद्रिया णिपराण्याहुरिंद्रियेभ्य परंमनः मनसस्तु परा बुद्धि र्यो बुद्धेः परतस्तु सः। इति गीता अ० ३ के ४२ श्लोकमें। तथा बुद्धेरात्मा महान्परः। क० उ० के अ० १ वल्ली ३ की १० श्रुतिमें। ताते सर्व काल सर्वअवस्थाविषे बुद्धिआदि सर्वसे पृथक् सर्वकाप्रका- शक आत्मा अपनाआप सर्वसेभिन्न होहै। बुद्धि आत्मा नहीं॥

॥ शिष्य उवाच॥

हे प्रभो आपने प्रमाण युक्ति अनुभव करके बुद्धिसे पृथक् स्वयंप्रकाश ज्ञाता आत्माको कहा सो अस्तु तथापि हमकोंतो बुद्धि ही स्वयंप्रकाश प्रतीतिहोतीहै क्यों जो जब बुद्धि सुषुप्तिविषे जातीहै तब जाग्रत स्वप्नके सर्व प्रपंचकों अभावकरजातीहै तिस अभावरूप प्रपंचकों सुषुप्तिसे उठके पुनः भावरूप प्रकटकर देखावतीहै । जैसे दीपक आयकें अभावरूपपदार्थकों भावरूपसिद्धकरदेखावताहै तैसे । ताते बुद्धि ही स्वयंप्रकाश आत्माहै इससे इतर इसका प्रकाशक आत्माकोईनहीं । अरु आपने बुद्धिसे पृथक् स्वयंप्रकाश आत्मा कहाहै ताते उसआत्माको मेरेबोधार्थ पुनः आप कृपाकरके कहिये ॥

॥ गुरुरुवाच॥

हे सौम्य हे वादी तुमनेकहा जो बुद्धि सुषुप्तिसे उठके आप दीपकवत् हुई अभावरूपजाग्रत्स्वप्नकेप्रपंचकों भावरूप सिद्धकर देखावतीहै ताते बुद्धि ही स्वयंप्रकाश आत्मा है। सो ऐसानहीं । हे सौम्य यहां हम तुमसे पूछतेहैं कि जिस बुद्धिने सुषुप्तिसे उठके आपदीपकवत्हुई अभावरूप प्रपंचकों भावरूप सिद्धकरदेखाया वो बुद्धि क्यारूपहै । अथवा यावत् बुद्धि सुषुप्तिसे उत्थान नहीं भई तावत् तिस अवस्थाविषे बुद्धि क्या रूपहै सो जैसा तुमने अनुभवकियाहोय तैसाकहो । शिष्य । हे गुरो सुषुप्तिविषे बुद्धि नाशकूं प्राप्त होके अभावरूप हुई जब पुनः दीपकवत् है जब अभावरूप

दूरहोताहै तब दीपकावत् हुई जाग्रत् स्वप्नके प्रपंचकों पुनः
भावरूप सिद्धकरतीहै ऐसा अनुभवहै । गुरु। हे सौम्य य-
हां अब विचारकरो जिस तुमने बुद्धिकों सुषुप्तिमें सावरण
रुकेहुए दीपकावत् अरु आवरण दूरहोनेसे प्रकटदीप
कावत् जाग्रत् स्वप्नके प्रपंचकों सिद्धकरती अनुभवकिया
सो तुम "घटद्रष्टाघटाद्भिन्नः" घटका जाननेवाला घटसेजु-
दा होताहै । अर्थात् जो जिसकों जानताहै सो जाननेयो-
ग्य वस्तुसे पृथक्होताहै। इस सिद्धान्त न्यायप्रमाण बुद्धिसे
बुद्धिके आवरणसे प्रकाशसे भाव अभावसे प्रपंचादि-
सर्वसे पृथक् सर्वके प्रकाशक ज्ञाता सिद्धभये। तातेबुद्धि
आदि सर्वके प्रकाशक अनुभवी आत्मा तुमहीहो तुम्हारे
विना कुछ भी सिद्ध नहींहोता । जैसे दीपक अरु पदार्थ २
२ जो कि दीपककरके प्रकाशतेहैं सो सर्व, नेत्रकरके सिद्ध
होतेहैं विना नेत्रके दीपकादि कुछ भी सिद्धनहींहोता। २
तैसेही बुद्धिसे बुद्धिके गुण कर्म भाव अभाव स्थूल सूक्ष्म
कार्य कारण प्रकाश अप्रकाश इत्यादि सर्वसे पृथक् स-
र्वके अनुभवकरता नेत्रवत्, स्वयंज्योति आत्मा तुमहीहो
तिस अपने आपकों सर्वसे पृथक् अनुभवकरो यहबुद्धि
स्वयंप्रकाश आत्मानहीं । बुद्धि प्रपंचकों प्रकाशतीहै बु-
द्धिकों आत्मा प्रकाशताहै आत्माका प्रकाशक कोईनहीं
जब बुद्धिकों साक्षिआत्मा प्रकाशताहै तब बुद्धि अरु बुद्धि
काव्यापार सिद्धहोताहै। हे सौम्य अनेक मतवादी आचार्य
स्वयंप्रकाश ज्ञाता आत्माकों, जोकि उनका अपना आपहै,

नमानके अपनामत सिद्धकियाचाहतेहैं सोई उनकामत सिद्धकर्ता सहित आसिद्धहोताहै एतदर्थ सर्वके सिद्धकर्ता ज्ञाता को छोडकें न तो आजतक किसीके मत सिद्धभयेन होतेहैं क्योंजो ज्ञातेविना कुछ भी सिद्ध नहीं होता। तातें स्वयंप्रकाशआत्मा सर्वका अनुभवी अविकारी अक्रिय सदा सर्वदा सर्वप्रकार सर्वत्र सर्वका अपनाआपहै। उसका ज्ञाता अनुभवी कोईनहीं वो ही सर्वका प्रकाशक आत्माहै। तथाच "येनेदं सर्वं विजानाति तं केनविजानीयात् स एष नेति नेत्यात्माऽगृह्यो न हि गृह्यतेऽशीर्यो न हि शीर्यतेऽसङ्गो न हि सज्यतेऽसितो न व्यथते न रिष्यति विज्ञातारमरे केन विजानीयादित्युक्तानुशासनासि" इति। वृ० उ० के अ० ४ के पंचम मैत्रेयी ब्रा० विषे। तातें त्रिगुणात्मिका जो बुद्धि तिसही की वृत्ति गुणसंबधसे जाग्रदादि तीनों अवस्थाको प्राप्त भईहै सो बुद्धिकी अवस्था शुद्ध अद्वैत साक्षि स्वयं ज्योति आत्मा विषे असत्यहैं आत्मा सदा शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव सर्वका साक्षि एकरस अपना आपहै। तातें जाग्रदादि अवस्था बुद्धिकी हैं आत्माकी नहीं॥ शिष्य॥ हे प्रभो जैसे आप आज्ञा करते हो तैसे हीहै बुद्धि आदि सर्व भूत भौतिक प्रकाशआदिकोंका प्रकाशक ज्ञाता स्वयंप्रकाश सर्वका अपना आप आत्मा सर्वसे पृथक् आपकी कृपासे अनुभवकिया॥–॥ ३२॥–॥ प्र० हे स्वामीजी यह जन्ममरणादि आत्माविषे प्रतीत होतेहैं सो यह आत्माहीके धर्महैं अथवा किसी अन्यके हैं इसको भी कृपाकर कहिये॥

॥ देहेन्द्रियप्राणमनश्चिदात्मनां संघादजस्रं ॥
॥ परिवर्त्तते धियः । वृत्तिस्तमोमूलतयाऽज्ञ- ॥
॥ लक्षणा यावद्भवे तावदसौ भवोद्भवः ॥ ३३ ॥

॥ अजस्रात् देहेन्द्रियप्राणमनश्चिदात्मनां संघात धियः
वृत्तिः परिवर्त्तते तमोमूलतया अज्ञलक्षणा असौ
[वृत्तिः] यावत् भवेत् तावत् भवोद्भवः [भवेत्] ॥ ३३ ॥

॥ अनादिभूतजो देहेन्द्रियप्राणमनचिदाभासोंका संघा
त [तिससंगसे] बुद्धिकी वृत्ति भ्रमतीहै [सो] तमोगुणमूल
ताकरके अज्ञानरूपा यह [वृत्ति] यावत् होय तावत्
संसारहोय ॥ ३३ ॥ राम राम राम राम राम राम ॥

हे लक्ष्मणजी यावत् इस जीवात्माको। अनादिभूत
१। देहेन्द्रियप्राण अन्तःकरणचिदाभासआदि स्थूल सू-
क्ष्मको २। संघात के संग से ३। अनात्माविषे आत्मभाव
निश्चयकर। बुद्धिकी ४। वृत्ति ५। भ्रमतीहै ६। सो तमो-
गुणमूलताकरके ७। तमोगुणके कार्य देहादि अनात्मा-
विषे आत्मभावना निश्चयात्मक। अज्ञानरूपा ८। ९
यह ९। वृत्ति। यावत् १०। रहतीहै ११। अर्थात् नाशनहीं
होती ॥ तावत् १२। संसारहोताहै १३। अर्थात् जन्ममर
ण नहीं छूटते अवश्यहोते ही हैं ॥ हे सौम्य जन्ममर-
णादि संसार आत्माके धर्म नहीं यह १७ सत्रह तत्वा-

त्मक लिंगशरीरके धर्महैं। सो संघातविषे आयाजो साक्षि आत्माका आभास, चिदाभास, जीवात्मा, सो अज्ञानकरके अनात्माके जे जन्ममरणादि धर्म सो अपनेविषे मानेहै वास्तव जीवात्माका धर्म नहीं। देह इंद्रिय प्राण मन आदिकोंके संयोगकानाम जन्महै अरु इनके वियोगकानाम मरणहै। हे सौम्य जब इसपुरुषका मरणकाल निकट आवताहै तब इंद्रियोंकेदेवता अपने२ समष्टि अधिष्ठाता देवताको प्राप्तहोतेहैं। तथाच "देवाश्च सर्वे प्रतिदेवतासु"। मु० उ० के तृतीय मु० के दूसरे खंडकी ७ मीश्रुतिमें। अरु वागादि इंद्रियां विषयके सम्बन्ध संस्कार लेके मन जो अपनास्वामीहै तिसविषे लीनहोतीहैं। तथाच "अस्य सौम्य पुरुषस्य प्रयतो २ वाङ्मनसि सम्पद्यते"। अरु मन विषयवासनायुक्त इंद्रियोंकेसहित प्राणविषे लीनहोताहै। तथाच "मनः प्राणे"। अरु प्राण अपनेविषे मन इंद्रियां को लेके अग्निविषे लीनहोताहै। तथाच "प्राणः तेजसि"। इसप्रकार स्थूल सूक्ष्म सर्वसंघात अपने आश्रयविषे लीनहोतेहै तब केवलवासनामय सर्वकी नाम्ना अज्ञानयुक्त प्राणप्रधान लिंग रहेहै तिस लिंग विषे महासूक्ष्म सर्व अध्यासादिकोंके संस्कार रहेहै। जैसे वटका किंवा मधुएका महासूक्ष्म बीज पृथिवीविषे अदृश्यरूपसे रहे है सो अपनासमयपाय पुनः विस्तारको प्राप्तहोताहै। तैसे ही अनात्मके असत्य अध्यासके सूक्ष्मसंस्कार अनुकूलतासे साभास लिंगमें रहेहै उन सूक्ष्मसंस्कारोंका पाक आश्रय जब उद्भूतहोनेका काल आवताहै तब चैतन्य अधिष्ठा-

न सत्ताके आश्रय अज्ञानयुक्त प्राणप्रधान लिंगरूप भूमिमें
सों पुर्यष्टका सूक्ष्मशरीर, रूपी अंकुर उतपन्नहोयहै। अर्थात्
लिंग पुर्यष्टिका किंवा सूक्ष्मशरीरके भावकों प्राप्तहोताहै। सो
साभास लिंगशरीर, जीवात्मा, चैतन्यकी सत्तापाय अपने सं
चित संस्कारके आश्रय अज्ञानमूलताकरके नानाप्रकारके
शरीर लोक लोकांतरविषे धारणकरके अपने कर्मानुसार
सुख दुःखरूपी फलकों भोगताहै। तातें हे सौम्य जन्म मरण
दि सुख दुःख सर्व साभास सूक्ष्मशरीरकेहैं साक्षिआत्माके०
नहीं। तथाच "किलेदंम्रियते न जीवोम्रियते"। छां० उ० केअ०
६ की श्रुति १० मीमें। अथवा "सूक्ष्ममनोबुद्धिदशेंद्रियैर्युतं प्राणै
रपंचीकृतभूतसंभवं भोक्तुःसुखादेः" इत्यादि रामगीता श्लो०
क २९ में। हे सौम्य मन बुद्धि दशइंद्रिय पांच प्राण, सत्र सं
ख्या तत्वात्मक लिंगशरीरहै तिसविषे जो साक्षिआत्माका
आभास चिदाभास। अर्थात् त्वंपदका वाच्य लिंगविशिष्ट
चैतन्य जीवात्मा सो उपाधिरूप लिंगशरीरके धर्म अध्या
ससंबंधसे अपनेविषे मानेहै। अरु अज्ञानीपुरुषों कों २
आत्मा स्वर्ग नरकमें आवता जाता प्रतीतहोताहै परंतु आ
त्मा आवने जानेसे रहित निश्चलहै। जैसे आकाश सर्वत्र
परिपूर्ण निश्चल अक्रियहै सो घटरूप उपाधिकेसाथ मि
लके देश देशांतरकों जाता आवता प्रतीतहोयहै सो अ
सत्य प्रतीतहै वास्तव आकाश अपने आपविषे आवागम
नसे रहित ज्यों का त्यो निश्चल एकरसहै। तैसे ही चैतन्य
घन आत्मा आकाशसे भी महासूक्ष्म आकाशवत् सर्व

उपाधिके धर्मसे रहित सदा एकरस अपने आपविषे ज्यों का त्योंहै ताते आत्माविषे जन्म मरणादिकोंकी प्रतीति अज्ञानके आश्रयहै ताते असत्यहै आत्मा सर्वदा जन्ममरणादि जे उपाधिके धर्महैं तिनसे रहितहै। तथाच "नजायते म्रियते वा विपश्चिन्नायंकुतश्चिन्नबभूवकश्चित् अजो नित्यः शाश्वतोयंपुराणो नहन्यते हन्यमाने शरीरे"। क॰ उ॰ की वल्ली २ की श्रुति १८ मीमे। ताते हे सौम्य जन्म मरणादि सर्व संघातरूप साभाससूक्ष्मशरीरकेहै आत्माके नहीं आत्मातो सर्वका साक्षी अजन्मा अक्रिय स्वयंप्रकाश एकरस चैतन्यघनहै सोई तुम्हारा अरु सर्वका अपनाआपहै तिसकों निश्चय अनुभवकरो। अरु देहेंद्रियप्राणमनआदिअसत्य अनात्माके धर्मकों अपनेविषे त्यागकरो यही परमपुरुषार्थहै अरु सोई कर्तव्यहै ॥ ३३ ॥ अब जिसप्रकार ज्ञानवान् असत्यवस्तुके त्यागपूर्वक सत्यवस्तुका ग्रहणकरतेहैं तिसकों भी श्रवणकरो ॥

॥भावार्थश्लोक ३४ में का॥

हे लक्ष्मणजी जन्ममरणादि सर्वविकारसे रहित जो अमृतरूप सर्वका अपनाआप आत्माहै तिसकों आचार्यकेउपदेशद्वारा। सम्यक्प्रकारज्ञानके फेर आस्वादित अर्थात् साक्षात् अनुभवकियाहै चैतन्यविज्ञानघनरूपी अमृत जिसने १। अरु न २। इति ३॥ अर्थात् नेतिनेति श्रुतिके निषेधमुखवाक्यकरके ४॥ आत्मा नस्थूलहै न सूक्ष्महै न ह्रस्वहै न दीर्घहै न रक्तहै न पीतहै न देहहै न इंद्रियहै

॥ नेति प्रमाणेन निराकृताऽखिलो हृदा समा॥
॥ स्वादितचिद्घनामृतः। त्यजेदशेषं जगदात्त॥
॥ तद्रसं पीत्वा यथाऽम्भः प्रजहाति तत्फलम्॥३४॥

॥ समास्वादितचिद्घनामृतः नेति प्रमाणेन निराकृताखिलः हृदा अशेषं जगत् त्यजेत् यथा आत्ततद्रसं अम्भः पीत्वा तत्फलं प्रजहाति ॥ ३४ ॥

॥ सम्यक्प्रकार आस्वादित कियाहै चिद्घनरूपी अमृत १ जिसने [अरु] नेति [नेतिनेति श्रुतियोंके] प्रमाणकरके निराकरण कियाहै सम्पूर्ण [नामरूपात्मकजगत् जिसने ऐसाजो मुमुक्षु सो अपने] अन्तःकरणसे [भी] अशेष जगत्को त्यागदे । जैसे स्वीकारकियाहै स्वाद जिसका ऐसे रसजलको पानकरके उसफलको त्यागदेताहै ॥ ३४॥

न मनहै न प्राणहै न आकाशहै न वायुहै न अग्निहै १ न जलहै न पृथिवीहै न अन्तरहै न बाहरहै इत्यादि। तथा च "एतदक्षरं गार्गि ब्राह्मणा अभिवदन्त्यस्थूलमनण्वह्रस्वमदीर्घमलोहितमस्नेहमच्छायमतमोऽवाय्वनाकाशमसंगमरसमगन्धमचक्षुष्कमश्रोत्रमवागमनोऽतेजस्कमप्राणममुखममात्रमनन्तरमबाह्यं नतदश्नाति किञ्चन न तदश्नाति कश्चन"। इति बृ० उ० के अ० ५ के ८ मे गार्गि ब्रा० विषे। निराकरणकियाहै सम्पूर्ण ५। नामरूपात्मक

जगत् जिसने ऐसाजे मुमुक्षु सो। अपने अन्तःकरणसे
भी अशेष जगत्कों त्यागदे।७।८।९॥ अर्थात् अन्तःक-
रणविषे अनादिकालके जे नामरूपात्मक जगत्के सूक्ष्म
संस्कार, जो कि आत्माविषे जन्ममरणप्रतीतिके हेतु हैं, ति
सकों भी विचारअभ्यासद्वारात्यागदेवे॥ जैसे १०। विवेकी
पुरुषने स्वीकारकियाहै। अर्थात् आस्वादनकियाहै स्वाद
जिसको ऐसे ११। फलरसजलकों १२। पानकरके १३। उसफ-
लकों १४। त्यागदेताहै १५॥ तैसे ही संसाररूपीवृक्षका दे-
हरूपी फलहै तिसविषे आत्मानन्द अमृत रसहै, कि जिस-
कों अपनाआप अनुभवरूपपानकरनेसे अमरहोतेहैं, ८
तिसरसकों मुमुक्षु पानकरके पुनः अनात्मरूप जे देहइंद्रि-
यप्राणमनादिकोंका संघात तिसकों नीरस असार जान-
के अन्तःकरणकी वृत्तिसे भलीप्रकार त्यागकरे। जैसे आ-
म्रफलकें रसकों पानकरकें शेष उसके गुठली छिलका-
कों त्यागदेतेहैं तैसे॥

॥ शिष्यउवाच॥

हे प्रभो आपने आज्ञाकिया कि आत्मानंदअमृतरसको
पानकरके देहइंद्रियप्राणमनादिकोंकों अनात्मअसाररूप
जानकर त्यागकरे सो हे भगवन् देहइंद्रियादिकोंके संगसे
अनेकप्रकारके विषयसुखप्राप्तहोतेहैं अरु इन्हींद्वारा
यज्ञादि उत्तमकर्म करनेसे स्वर्गादिकोंके उत्तम दिव्यभोग
प्राप्तहोतेहैं जिसकरके बड़े आनंद प्राप्तहोतेहैं। अरु आप
इनका त्यागना कहतेहो सो मुमुक्षु इनकों क्या जान-

कर त्यागकरे सो आप कृपाकर कहिये॥

॥गुरुरुवाच॥

हे सौम्य यावत् पर्यंत अपनेआप परमानंदस्वरूप आत्माका अनुभवज्ञाननहीं अरु विषयसुखका विचारनहीं कि यह सुखरूपहै वा दुःखरूपहै, तावत् पर्यंत विषयभोगमें आनन्दकी प्रतीति होतीहै वास्तव विषयमें आनन्दनहीं जिसविषयकोंभोगनेसे एककों आनन्द होताहै उसी विषयभोगसे दूसरेकों दुःखहोताहै सो जो विषयमें आनंद होता तो तिससे दुःख किसीकों भी न होनाचहिये सो होताहै ताते विषयमें आनन्दनहीं। देखो जिसविषयमेंआनन्दभानहोताहै उसी विषयभोगके अंतमें उसही विषयसे अनिच्छाहोतीहै सो न होनीचहिये क्योंजो आनंदसे अनिच्छा किसीकोंभी होतीनहीं सो अनिच्छा विषयभोगके अन्तमें होतीहै ताते विषयभोगमें सुखनहीं इच्छाकी निवृत्तिमें सुखहै। हे सौम्य अंतःकरण उपहित साक्षीआत्मा आनंदरूपहै उसहीके आनन्दसे सर्व आनंदितहोतेहैं। जब अंतःकरणकी वृत्ति उत्थानहोतीहै तब वृत्ति उपहित चैतन्यका जो आनन्दहै सो वृत्तिमें प्रतीतहोताहै, दर्पणसे मुखवत्, अन्तःकरणकीवृत्ति इंद्रियोंविषे २ आवतीहै तब इंद्रियउपहितचैतन्यकाआनन्द इंद्रियोंमें प्रतीतहोताहै। अरु जब इंद्रियोंद्वारा वृत्ति विषयोंविषे आवतीहै तब विषयउपहित चैतन्यानन्द विषयोंमें प्रतीतहोताहै। अरु जब अन्तःकरणकी वृत्ति विषयोंसे फिरतीहै

तब विषयोमें आनन्द भानहोतानहीं और जब इंद्रियोंसे वृत्ति अन्तर्मुख फिरतीहै तब इंद्रियोंमें भी आनन्दभान-होतानहीं और जब वृत्ति अन्तःकरणमें अन्तर्मुखअ-त्यंतपरिणामहोतीहै तब सर्वउपाधिसेरहित निर्विशेष सुषुप्तिवत् परंतु जडतासे रहित एक अद्वैत आनन्दघन आत्मा अपनाआपही अवशेषरहताहै सोई परमानन्द नित्यआनन्दहै उसहीके आनन्दसे सर्व आनन्दितहोते-हैं। तथाच "एष एव परमआनन्दः","एतस्यैवानन्दस्यान्या नि भूतानि मात्रामुपजीवन्ति"। बृ० उ० अ० ६ के ३ ब्रा० की ३२ वी श्रुतिमें। ऐसा जो परमानन्दरूपआत्माहै तिसके अ-ज्ञानसे विषयादिकोंमें आनन्द प्रतीतहोताहै। जब यहपु-रुष आत्मवेत्ता आचार्यकी कृपासे उनके उपदेशद्वारा अपनेआप परमानन्दस्वरूप आत्माको यथार्थ अनुभव करताहै तब स्वर्गादिकोंके सर्व विषयभोग विरस अना-नन्दरूप प्रतीतहोतेहैं ताते हे सौम्य ज्ञानदृष्टिसे अवलो-कनकरो जो आत्माव्यतिरिक्त किसीपदार्थमें आनन्दनहीं ताते देह इंद्रिय विषय आदि सर्व अनात्मा असार दुःख रूपहैं ऐसासाक्षात् अनुभवकरके ज्ञानवान् इनकात्या गहीकरतेहैं तैसेही तुम भी विचारपूर्वक इनकात्याग-करो। अर्थयह जो इन देहादि अनात्माविषे अज्ञान-जन्य जो अहंकार कि यह मैं हूं तिसकात्यागकरो क्योंकि जो इन अनात्मा असत्य देहादिकोंमें आत्मअभिमान करनेसे वारंवार दुःखरूप अनात्म देहादिकोंकी ही ८

प्राप्तिहोतीहै तिसकरके नानाप्रकारके जन्ममरणादिक्लेश भोगनेपड़तेहैं और स्वर्गादिपर्यंत भी तिसकीनिवृत्ति होतीनहीं ताते देहादिसर्वनामरूपात्मक जगत् कों अनात्म असाररूप जानकर तिसका त्यागकरो और आत्मानन्द अमृतको अनुभवद्वारा "सोहमस्मि" भावसे पानकरकेअमरहो आगे जो इच्छा ॥

॥ शिष्यउवाच ॥

हे भगवन् देहादि अनात्माविषे आत्मअभिमानकरनेसे अज्ञानीपुरुषको जो२ क्लेशभोगनेपड़तेहैं तिनकों अज्ञानियोंके बोधार्थ आप कहिये कि जिसको जानके अनात्मदुःखदायी अहंकारकों त्यागके सुखीहोवे ॥

॥ गुरुरुवाच ॥

हे सौम्य अब तुमकों उत्तमकर्म यज्ञअग्निहोत्रादि जे वेदादिकोंविषे कर्तव्यकहेहैं तिनकों यथाविधि निरन्तर करनेवाले जे पुरुष तिनपुरुषोंकों देहादिक अनात्माविषे असत्य अहंकारके सम्बन्धसे जन्ममरणके जो२ क्लेश२ भोगव्य आवतेहैं तिनकों संक्षेपमात्रकहतेहैं। और जो पुरुष कर्म उपासना ज्ञान तीनोंमार्गोंसे भ्रष्ट केवल अनात्मदेहाभिमानी विषयलंपट अधर्मीहैं तिनकों जन्म मरण नरकादिकोंके जो२ क्लेशहोतेहैं सो तो कहनेविषे भी आवतेनहीं। हे सौम्य वर्णाश्रमके अधिकारसे वेदादिकोंकरके प्रतिपाद्य कर्तव्यरूप जे यज्ञ अग्निहोत्रादिक कर्म तिसको यथाविधिकर्ता जे पुरुष सो देहत्यागके

अरु स्वर्ग किंवा ब्रह्मलोककों प्राप्तहोके वहां अपने शुभक र्मोंके फलकों भोगके पुनः इस मनुष्यलोककों प्राप्तहोतेहैं। तथाच "इष्टापूर्तं मन्यमाना वरिष्ठं नान्यच्छ्रेयो वेदयन्ते प्रमूढाः। नाकस्य पृष्ठे सुकृते ऽनुभूत्वेमं लोकं हीनतरं वा विशन्ति" मुं० उ० के २ मुं० की १० श्रुतिमें। अरु जब कर्मीपुरुष अपने पुण्यकर्मके फलकों स्वर्ग किंवा सत्यलोकमें भोगलेताहै अरु कुछ पुण्यकर्म अवशेषरहताहै तब वहांसे नरकके पुतले वत् पिघल सूक्ष्म जलरूपहोय प्रथम सूर्याग्नि विषे आवताहै। पुनः वहांसे सोम रूपहोय वर्षारूप अग्नि विषे आवताहै। वहां स्थूल जलरूपहोय पृथिवीरूपा अग्नि विषे आवताहै। पुनः वहां अन्नरूपप्रकटहोय पुरुषरूपी अग्निविषे आवताहै। पुनः वहांसे वीर्यरूपहोय स्त्रीरूपी अग्निविषे आय शिरहस्तपादादि इंद्रिय अवयवयुक्त पुरुषरूप प्रकटहोताहै अरु पूर्व जन्मके सूक्ष्म संस्कारके योगसे पुनः उसी यज्ञ अग्नि २ होत्रादिकर्मकरेहै। अरु परिणाम देहत्यागान्तर अग्निमें २ दाहहोय धूमद्वारा सूर्यकी किरणोंकेमार्ग पुनः स्वर्ग कों वा सत्य लोककों प्राप्तहोयहै। तथाच "तस्मादग्निः समिधो यस्य सूर्यः सोमात् पर्जन्य ओषधयः पृथिव्याम्। पुमान् रेतः सिञ्चति योषितायां बह्वीः प्रजाः पुरुषात् सम्प्रसूताः"। ५॥ "सूर्यस्य रश्मिभिर्यजमानं वहन्ति"। मु० उ० विषे॥ हे सौम्य इसप्रकार उत्तमकर्मके करनेवाले उत्तमपुरुष सो गर्भवासादि जन्म मरणकों पावते अरु लोक परलोकमें आवते जाते रहतेहैं। इस ही कारणसे कहाहै कि जो मोक्षकामी मु-

गर्भसे निकालतेहैं तिसकालमें अंगकटनेसे इस जीवको
जो २ क्लेश होताहै तिसका अनुभव अपने अंग कट २ के
प्राणजानेके दुःखपरहै ताते उससमयका जो दुःखहै सो
यही जानताहै। इत्यादि क्लेश गर्भवास अरु प्रसवकाल
में होतेहैं। यह तो जन्मकालके क्लेश किंचित्मात्रकहाहै
अब मरणका क्लेश भी श्रवणकरो

हे सौम्य हे प्रियदर्शन जब इन पुरुषोंका मरणस-
मय निकट आवताहै तब इंद्रियोंकी वृत्ति विषयसेहट-
के अरु तिसकी सूक्ष्मवासनालेके मनकेसाथ एकहोतीहै।
अरु मन विषय इंद्रियादिकोंके सूक्ष्मसंस्कार लेके प्राण-
में जाताहै। अरु प्राण सर्वनाडियोंसे खींचके अपनेस्था
नमें एकत्रहोताहै। तब सर्व नाडी अरु इंद्रियोंका सर्व २
व्यापार बंदहोताहै। अरु प्राण ऊर्ध्व श्वासलेय शीघ्र २
चलताहै तिससमय इनपुरुषोंको अत्यन्त खेद होताहै
तिसकरके मूर्छावस्थाहोतीहै अरु प्राणप्रधान लिंग २
इस स्थूलशरीरसे प्रयाण करताहै तब अपने कर्मानुसार
जिस लोक किंवा शरीरकों प्राप्तहोनाहोताहै तिसलोक-
की प्रापक नाडीका मुख खुलताहै अरु उस लिंगदेहमें-
भी कर्मानुसार पुण्य पापरूप प्रकाशहोताहै तब तिसप्र-
काशके आश्रय यह परलोककों जाताहै। तथाच "तस्य
हैतस्य हृदयस्याग्रं प्रद्योतते तेन प्रद्योतेनैष आत्मा नि-
ष्क्रामति। चक्षुष्टो वा मूर्ध्नो वाऽन्येभ्यो वा शरीरदेशेभ्यः"॥
इत्यादि बृ०उ०के अ०६ के चतुर्थ ब्रा० की २ श्रुतिमें॥

इसप्रकार मरणकालका भी क्लेश अत्यंतही होताहै तिसकों मुमुक्षुही जानताहै । सो एतनाक्लेशतो वेदोक्त यज्ञादिहोमा दि विहितकर्मके कर्तापुरुषकों कर्मफलभोगार्थ देहधारण करनेसेहोतेहैं । तथाच "एतौ वै खलु दुर्निष्प्रयतरं यो यो ह्यन्नमत्ति यो रेतः सिञ्चति तद्भूय एव भवति तद्य इह रम णीय चरणा अभ्याशो ह यत्ते रमणीयां योनिमापद्येरन् ब्राह्मणयोनिं वा क्षत्रिययोनिं वा वैश्ययोनिं वा"। छां० उ० ५ के ५ में प्रवाहणके पंचाग्नि विद्याविषे । अरु लोकद्वयपि मुमुक्षुपुरुष देवयान पितृयान इन उभयमार्गसे भ्रष्ट अ धर्मी विषयीहोय तो देहत्यागके पश्चात् तिसकों श्वान शूकर कीटादि नीचजन्मोंका अरु नरकादिकोंका महा कष्टहै जो कुंभीपाकादिनरकमें गिरना अरु मल मूत्रा दिकोंका रसपानकरना इत्यादि अकथनीय क्लेश होताहै। तथाच "अथ य इह कपूयचरणा अभ्याशो ह यत्ते कपूयां योनिमापद्येरन् श्वयोनिं वा शूकरयोनिं वा चण्डालयोनिं वा" अथैतयोः पथोर्न कतरेण च न तानीमानि क्षुद्राण्यस कृदावर्तीनि भूतानि भवन्ति जायस्व म्रियस्व इति"। छां० उ० ५ में प्र० के पञ्चाग्निविद्याविषे ॥ अब जराऽवस्थाके क्लेशकों भी संक्षेपमात्र श्रवणकरो ॥

हे सौम्य जब जरा अवस्थाआवतीहै तब प्रथम शरी र अरु इंद्रियादि सर्व अवयव शिथिल होतेहैं कान बधि र होतेहैं नेत्रसे सूझतानहीं दांत गिरपडतेहैं शरीरकंपता है नाक टपकताहै लार बहतीहै स्पष्ट बोलाजातानहीं तृष्णा

अरु क्रोधकी अधिकाधिक वृद्धिहोतीहै तिसकरके अन्नरसे जलतेहैं उठाजातानहीं उठनेसेप्रथमगिरतेहैं कुटुम्बीअनाद-रकरतेहैं निकटकोईआवतानहीं वार्त्ताकोईसुनतानहीं इ-त्यादिप्रकार जराअवस्थाके अनेकदुःखोंकेभार आनप-डतेहैं। अब व्याधिकेदुःखभीश्रवणकरो ॥

हे सौम्य जब देहमें रोग उत्पन्नहोताहै तब प्रथम शा-रीर दुर्बलहोताहै तब ज्वरादिकोंका खेद विशेषहोताहै ति-नके निवारणार्थ अनेकप्रकारके कटु दुःस्वाद औषधि२ खातेहैं तिनसे भी रोग निवृत्त न होके खांसी अधिकहोती है खांसते२ प्राण ऊर्द्धको आवतेहैं शीघ्र ठेकाने बैठते न-हीं खांसी रहतीनहीं शरीरमें बलनहीं जहां पड़ेहैं तहां ही मलमूत्रकरतेहैं निकटकोई आवतानहीं अथवा समीप कोई कुटुम्बीहै नहीं बोलाजातानहीं जोकदापि किंचित्२ बोलते भी हैं तो कोई सुनतानहीं कंठ सूखताहै अन्नज-ल कोईदेतानहीं। उस रोगग्रस्तपुरुषको जो२ कष्टहो-ताहै सो वोही जानताहै ॥

हे सौम्य इसप्रकार जन्म मृत्यु जरा व्याधिके अनेक अनिवार्यदुःख देहधारीको देहके संगसे अवश्य भोग-ने पड़तेहैं किसीको थोड़ा किसीको बहुत। अरु ज्ञानी अ-ज्ञानी सर्वको ही होतेहैं तहां ज्ञानवान् अपनेआप आ-त्माको यथार्थजानके शरीरकी किसी अवस्थाके धर्मके साथ सिपायमाननहींहोता ताते सुखीहै अरु अज्ञानी पुरुष शरीरकी अवस्थाके धर्म सुखदुःखादि अपनेविषे

मानताहै ताते दुःखीहै परंतु देहके सम्बन्धसे जन्ममरण जराव्याधि दोनोंमें समानही दीखतेहैं। तहा ज्ञानवान्को जिसदेहमें सम्यक् ज्ञानहोताहै तिसदेहके अभावभये पश्चात् अन्यदेहकी प्राप्तिनहीं। अरु कर्म उपासनावालेको पुनः देहप्राप्तिहै। ताते हे सौम्य जो यज्ञअग्निहोत्रादि कर्मके यथार्थकर्ता यजमान देहत्यागके अनंतर कर्मफल भोगार्थ स्वर्ग सत्यलोकमें जानेवाले तिनपुरुषोंको भी कहे प्रकार जन्ममरण जरा व्याधिके क्लेश प्राप्तहोतेहैं तो अन्य जो अज्ञानी अधर्मी विषयीपुरुषहैं तिनको इनसे विशेष नरकादिकोंके जो २ क्लेश भोक्तव्यआवतेहैं सो २ वाणीसे कहेजाते नहीं जिसको होतेहैं सोई जानताहै।

हे सौम्य यह देहादि सर्वप्रपंच दुःखरूपहीहै इनमें सुखकी इच्छारखनी यही मूर्खताहै। एतदर्थ जे विवेकी पुण्यशील आत्मकामी मुमुक्षुहैं सो देहादि समस्त संसारको दुःखरूप मिथ्याजानकर अंतःकरणसे इनकी सूक्ष्मवासनाके त्यागपूर्वक आत्मानंदअमृतको पानकर २ सर्वदुःखोंसे रहित सर्वात्माहोतेहैं। ताते हे सौम्य असार रूप संसारकी वासनात्यागके सारभूत अमृतरूप आत्मानंदरसको पानकर जन्ममरणादिकोंसे रहित परमसुखी हो ॥ ३४ ॥ प्र० ॥ हे स्वामीजी आत्मा सदा शुद्ध बुद्ध मुक्तस्वभाव षट्भावविकाररहित स्वयंज्योति परमानंदस्वरूपहै तिसविषे जन्ममरणादि विकार कैसेप्रतीतहोतेहैं सो कृपाकरकहिये ॥ उ० ॥ हे सौम्य अब इसको भी श्रवणकरो ॥

॥ कदाचिदात्मा न मृतो न जायते न क्षीयते ॥
॥तोऽपि विवर्धते न वा ॥ निरस्तसर्वातिशयः॥
॥सुखात्मकः स्वयंप्रभः सर्वगतो यं मद्वयः॥३५॥

॥आत्मा कदाचित् न मृतः न जायते न क्षीयते विवर्धते अपि न अथवा न [अस्ति न विपरिणमते] अयम् [आत्मा] निरस्तसर्वातिशयः सुखात्मकः स्वयम्प्रभः सर्वगतः अद्वयः ॥ ३५ ॥

॥आत्मा कदाचित् नहीं मरा न [कदाचित्] उत्पन्नहोताहे नहीं [कदाचित्] क्षीणहोताहै [अरु] बढ़ता भी नहीं नैसेही नहीं [अस्ति नहीं विपरिणमते ताते] यह [आत्माकी] दूरभईहै सर्वविशेषता जिससे [ऐसानिरुपाधि सर्वोत्कृष्ट] सुखस्वरूप अद्वैत स्वयंप्रकाश सर्वव्यापीहै

हे लक्ष्मणजी यहजो चैतन्य आत्माहै १। सो कदाचित् २। मरा४। नहीं३। इसहीकारणसे कदाचित्। नहीं५। जन्मता६॥ अर्थात् जो मरताहै सोई जन्मताहै जो जन्मताहै सोई मरताहै। तथाच "जातस्यहि ध्रुवोमृत्युर्ध्रुवंजन्म मृतस्यच"। गी० अ०२ के २७ के श्लोकमें। ताते आत्मा जन्ममरणसे रहितहै। अरु नहीं७। कदाचित् क्षीणहोता८। इसहीहेतुसे बढ़ता९। भी१०। कदाचित् नहीं ११। तैसे१२ नहीं१३। कदाचित् अस्तिभावकोप्राप्तहोता न विपरिणाम-

होताहै ताते यह १४। सर्वान्तरस्साक्षीआत्मा कि सूक्ष्म है
सर्वविशेषताजिससे १५। ऐसानिरुपाधिसर्वोत्तम आनं
दरूप १६। अद्वैत १७। स्वयंप्रकाश १८। सर्वव्यापी है १९॥

हे सौम्य यह अक्रियादिआत्मा है क्योंकि जायते अ
स्ति वर्धते विपरिणमते अपक्षीयते विनश्यति षट् भा
व विकारहैं तिनसेरहितहैं ताते आत्मा मरताकदापिनहीं
क्योंजो अविनाशी अमरहै। तथाच "अविनाशि तु तद्विद्धि"
भ०गी० अ०२ के श्लोक १७ में से। अरु आत्मा जन्मता भी
कदापिनहीं क्योंजो अजहै। तथाच "नित्यात्मव्यक्तोऽयमजः"
अजोनित्यः शाश्वतोयं पुराणः"। मु० तथा क० उ० की श्रुति
अरु आत्मा उपजकर अस्तिभावको भी कदाचित् नहीं
प्राप्तहोता। अर्थात् जैसे घट उपजकर अस्तिभावको प्राप्त
होताहै जो यह घटहै। तैसे आत्मा उपजकर अस्तिभाव
कों कदापि नहीं प्राप्तहोता क्योंजो निराकारहै। तथाच—
"निराकृतिस्त्वयम्"। रामगीता के ७ श्लोकमें॥ अरु आत्मा व
वृद्धिभावको भी कदापि नहीं प्राप्तहोता क्योंजो सर्वत्रपूर्णहै
तथाच "पूर्णमदः" इत्यादि। तथा "पूर्णश्चिदानन्दमयः"।
रामगीताके ७ श्लोकमें। अरु आत्मा औरसे और भी न
हीं होता। जैसे शरीर बालपने से तरुणहोताहै तैसे। क्यों
जो एकरसहै। तथाच "परमात्मस्वरूपएकरसः"। श्रुतिः॥ अरु
आत्मा क्षीणताको भी कदापि नहीं प्राप्तहोता। जैसे देह
स्थूलहोके कृशहोताहै तैसे। क्योंजो अतिसूक्ष्मनिरव-
यवहै। तथाच "आकाशवत सर्वगतः स नित्यः"। इतिश्रुतिः

ताते हे सौम्य आत्मा षड्भावविकार रहित आनन्दरूप ६ सदाशुद्ध सर्वान्तर स्वयंप्रकाश अज अविनाशी असंग अखंड अनन्त अद्वैत सर्वव्यापीहै। तथाच "न जायते म्रियते वा विपश्चिन्नायं कुतश्चिन्न बभूव कश्चित। अजो नित्यः शाश्वतोऽयम्पुराणो नहन्यते हन्यमाने शरीरे"॥ क०उ०की २ वल्लीकी १८ मीश्रुति। ताते हे सौम्य आत्मा षड्भाव विकाररहित सदा शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभावहै तिस कों जो पुरुष गुरु अरु श्रुतिके वाक्यश्रवणसे विचारद्वारा साक्षात् अपनाआप अनुभवकरताहै सो ई षड्भावविकार रहित ब्रह्म होताहै। तथाच "स यो ह वै तत्परमं ब्रह्म वेद ब्रह्मैव भवति"। मुं०उ०के तृ० मुंडकके द्वि० खंडकी ९ श्रुति॥ प्र०॥ हे प्रभो ऐसे निर्विकार शुद्धरूप आत्माविषे यह दुःखरूप जन्ममरणादिलक्षणरूप संसार काहेसे प्रतीतहोताहै सो आप कृपाकर कहिये॥ उ०॥ हे सौम्य अब इसकों भी श्रवणकरो॥ १५॥

॥ भावार्थ श्लोक १६ मेका ॥

हे लक्ष्मणजी इसप्रकारके १। षड्भावविकार रहित शुद्ध विज्ञानघन २। परमानन्दस्वरूप ३। साक्षीआत्मा१ कोंविषे यह महादुःखमैय ४। जन्ममरणादिरूपलक्षणवान् संसार ५। कैसे ६। प्रतीतहोताहै ७। ऐसा पूछकरतो। अज्ञानसे ८॥ अर्थात् अज्ञानकरके जब देहादिकोंविषे आत्मअध्यासहोताहै तब। तिस अध्यासके बलसे ९। आत्माविषे दुःखरूप संसारकी प्रतीति होतीहै।

॥एवंविधे ज्ञानमये सुखात्मके कथं भवो दुःख-॥
॥मयः प्रतीयते। अज्ञानतोऽध्यासवशात् प्रका-॥
॥शते ज्ञाने विलीयेत विरोधतः क्षणात् ॥ ३६ ॥

॥एवंविधे ज्ञानमये सुखात्मके दुःखमयः भवः कथं प्रतीयते अज्ञानतः अध्यासवशात् [यत्] प्रकाशते [तत्] ज्ञाने विरोधतः क्षणात् विलीयेत ॥ ३६ ॥

॥इसप्रकारके ज्ञानमय सुखस्वरूप-आत्माकेविषे [यह] दुःखमय संसार कैसे प्रतीतहोताहै [ऐसापूछोतो] अज्ञानसे अध्यासकेवश प्रकाशितहोरहाहै [सो] ज्ञानहोनेसे ९ [ज्ञानअज्ञानमें] विरोधकेकारण क्षणमें अभावहोताहै॥

अर्थात् जब अनात्मरूप देहादिकोंविषे आत्मबुद्धिहोतीहै तब जगत्को सत्यरूपजान तिसमेंप्रवृत्तहो जन्ममरणादिकोंको अपनेविषेदेख दुःखपावताहै। ताते निर्विकार ९ शुद्ध आत्माविषे जो असत्य दुःखरूप संसारकी सत्यप्रतीतिहोतीहै सो अज्ञानसे जो अनात्मादेहादिविषे आत्मअध्यास तिसके वश होतीहै। सो असत्य प्रतीति, जब इस पुरुषको "आचार्यवान्पुरुषोवेद" इसप्रमाणसे गुरुके मुखारविंदसे तत्त्वमस्यादि महावाक्यके श्रवणद्वारा यथार्थ आत्मज्ञान होताहै॥ सो तिसज्ञानके होनेसे ११। ज्ञानअज्ञानके परस्पर विरोधकारणसे १२। क्षणमात्रमें-

१३। अभावहोतीहै १४॥ अर्थात् ज्ञान अरु अज्ञानकापरस्पर तेज तिमिरवत् विरोधहै। जो अज्ञानसे उपजताहै सो ज्ञानकरके अभावहोताहै ताते अज्ञानकरके भया जो देहादि अनात्म दुःखरूप संसारविषे असत्य आत्मअध्यास तिसकरके अपनेआप सत्य शुद्ध आनन्दस्वरूप आत्माविषे जन्ममरणादि दुःखोंकी प्रतीतिहोतीहै। सो प्रतीति जब अज्ञानका विरोधी आत्मज्ञान गुरुके उपदेशसे महावाक्योंके विचारद्वारा उपजताहै तब नष्टहोजातीहै यही संसारकी उत्पत्ति अरु विनाशहै। ताते जन्ममरणादि संसारकाकारण अज्ञानजन्य असत्य अध्यासही है। तिस अध्यासका मूलकारण अज्ञान हीहै। तथाच "अज्ञानमेवास्यहिमूलकारणम्"। तिस अज्ञानका नाश आत्मज्ञानसेही होताहै एतदर्थ सिद्धान्त यहहै जो विना आत्मज्ञानके जन्ममरणादि दुःखरूप संसारकी अशेष निवृत्ति होती नहीं। तथाच "ऋतेज्ञानान्नमुक्तिः॥ ३६॥ ॥प्र०॥ हे स्वामीजी अध्यास किसको कहतेहैं सो आप कृपाकर कहिये॥उ०॥ हे सौम्य अब इसको भी श्रवणकरो॥

॥ भावार्थश्लोक ३७ मेंका ॥

हे लक्ष्मणजी आत्मदर्शी ज्ञानवान् पुरुष १ इसको २ अध्यास ३ ऐसा ४ कहतेहैं ५। कि जो ६ भ्रमकरके ७ औरविषे ८ औरकी ९ प्रतीतिहोतीहै १०॥ अर्थात् पदार्थ होय और अरु भ्रमकरके तिसविषे भासे और तिसको आत्मदर्शी विचारवान् अध्यास ऐसे कहतेहैं। जैसे ११

॥यदन्यदन्यत्र विभाव्यते भ्रमात् अध्यासमि-॥
॥त्याहुरमुं विपश्चितः। असर्पभूते हि विभा-॥
॥वनं यथा रज्ज्वादिके तद्वदपीश्वरे जगत् ॥३७॥

॥विपश्चितः अमुं अध्यासं इति आहुः यत् अन्यत् अन्यत्र विभाव्यते भ्रमात् यथा असर्पभूते रज्ज्वादिके अहि विभावनं तद्वत् ईश्वरे अपि जगत् [विभावनम्]

॥ज्ञानवान्पुरुष इसकों अध्यास ऐसा कहतेहैं कि जो भ्रमसे औरमें और प्रतीतहोताहै जैसे नहींहैसर्पजिसमें ऐसे रज्जुआदिविषे सर्पकाभानहोताहै तैसेही ईश्वरमें भी जगत् [भानहोताहै] ॥३७॥

नहींहै कालत्रयमें भी सर्प जिसविषे ऐसे १२। रज्जु दंड दरार माला जलधारा इत्यादिकोंविषे १३। सर्पकी प्रतीतिहोतीहै १४। तैसेही १५। निर्विकारपरमात्माविषे १६। भी १७। जगत्की १८। प्रतीतिहोतीहै॥ अर्थात् जैसे रज्जुमें सर्प सो-रज्जुविषेसर्प सीपीविषेरूपा मरुस्थलविषे जल इत्यादिहैं नहीं परंतु भ्रमसे भासतेहैं तिसकों विद्वान् अध्यासकहतेहैं। हे सौम्य इस अध्यासके होनेविषे पूर्वपक्षी कहतेहैं कि अध्यासकी जितनी सामग्रीहैं तिसविना अध्यासबनैनहीं। सोनहीं क्योंकि श्रुतिप्रमाणसे जगत्के पूर्व सत्यवस्तु तथा प्रमाण प्रमेय प्रमाता इत्यादि कुछभी सामग्री

है नहीं ताते सत्य जगत्‌के ज्ञानके संस्कार भी बनतेनहीं ॥ अरु पूर्वमें सम्पूर्णजगत्‌के अभावसे तम अरु प्रकाश भी है नहीं ताते सृष्टिके पूर्व अध्यासकी सर्वसामग्रीका अभाव है एतदर्थ शुद्ध अद्वैत निर्विकार आत्माविषे, रज्जु सर्पवत्, जगत् अध्यासबनेनहीं। इसप्रकार पूर्वपक्षी कहतेहैं तथापि इन सर्वतर्कका समाधानकियाहै तहाँ तहाँ भ्रांतिविषे मुख्यसामग्री अंधकारकों मानाहै क्योंकि अंधकारके अभावकी सामग्री प्रकाशहै तिसकरके कारण अंधकारसहित सर्पभ्रान्तिकी निवृत्तिहोतीहै। तैसे ही परमात्मा जो सदा शुद्ध एकरस परिपूर्णहै तिसविषे कदापि जगत् भयानहीं, रज्जुमें सर्पवत्, परंतु तदाश्रित अनादि जो अज्ञानहै तिस अज्ञानके आवरणसे प्रमाताकों जन्म मरणके भयसो अनादिकालका जगत् भ्रमहोरहाहै सो अज्ञानरूप अंधकार ज्ञानरूपी प्रकाशकरके, जो कि अज्ञानका विरोधीहै, नाशहोताहै तब तिसके साथ ही संसाररूपी सर्पका भी नाशहोताहै तब केवल सत्यस्वरूप निर्विकार सदाशान्त एकरस अपनाआप ज्योंका त्यों भासताहै। जैसे दीपकके प्रकाशहोते ही अंधकार अरु तदाश्रित सर्प अरु तज्जन्य भय सर्वकी निवृत्ति होतीहै। अरु सृष्टि किसीकालमें न होय ऐसाहोतानहीं जिसको प्रलयकहतेहौ सो भी परमात्माविषे सूक्ष्मसृष्टिहै ताते उत्पत्ति प्रलय सर्वजगत् प्रवाहरूप अनिर्वचनीय नित्यहै क्योंजो जिस अधिष्ठानविषे अध्यस्तहै सो नित्यहै ताते जगत् भी

नित्यहै एतदर्थ जगतका आदि अंत नहीं। तथाच "यथा पूर्व-मकल्पयत्" । मंत्रवर्णात् । अरु ईश्वर, जीव, माया, अविद्या, ईश्वर जीवकाभेद, अरु माया अविद्याकाभेद, यह षट् अज्ञानके आश्रय अनादिहैं ताते आत्माविषे जगत् अध्यास भी अनादिहै इसका ज्ञानविना अभावहोतानहीं॥ ताते हे सौम्य जैसे रज्जुमें सर्पअध्यासकी मुख्य सामग्री अंधकारहै। तैसेही आत्माविषे जगत् अध्यासकी मुख्यसामग्री-अज्ञानहै। तिस अज्ञानका विरोधी आत्मज्ञानहै तिसकरके अज्ञानअंधकार अरु तदाश्रित अध्यस्त जगतरूपी सर्प जन्ममरणादिरूप विषके भय सहित नाशहोताहै तब परमप्रकाशरूप स्वयंज्योति अपनाआप आत्मा भासताहै। ताते हे सौम्य ज्ञानरूपी प्रकाशकी प्राप्तिका पुरुषार्थकरो। जिसकरके संसाररूपी असत्यसर्पके जन्ममरणादिरूप विषके भयसे निवृत्तहो। इस ज्ञानरूपी दीपककी महिमा हम तुमको कहांलो कहैंगे इसकी महिमा वोही पुरुष जानताहै कि जिसको यह प्राप्तभयाहै, और अज्ञानी पुरुष इसको नहीं जानसकता॥

॥शिष्यउवाच॥

हे भगवन् इस ज्ञानरूपी महादीपकको सर्वसामग्रीसहित सविस्तर कृपाकरके आप कहिये॥

॥गुरुरुवाच॥

हे प्रियदर्शन तुमको इस ज्ञानरूपीमहादीपकके जाननेकी इच्छाभईहै सो तुमभीधन्यहो क्योंकि इसकी प्रा-

ग्निकी इच्छा पूर्वलेपुण्योंकरकेहोतीहे सो प्रतीतहोता है कि तुम्हारे पूर्वले संस्कार जो मोक्षकरनेवालेहें सो जागआये है एतदर्थ भी तुम धन्यहो। हे सौम्य अब इस ज्ञानरूपी महादीपककों सर्वसामग्रीसहित श्रवणकरो। वेदोक्त जे यज्ञादि कर्महैंसो दीवटके नीचेका आधारहे अरु श्रद्धारूपी मध्यका दंडहे अरु विवेकादि साधनचतुष्टयरूपी दीवटके ऊपरका आधारहे अरु श्रवणरूपी दीवलाहे अरु मननरूपी बत्तीहे अरु निदिध्यासनरूपीअग्निहे अरु साक्षात्कारारूपी ज्योतिहे अरु अनुभवरूपी प्रकाशहे॥

॥शिष्यउवाच॥

हे गुरो जैसे दीपक जो प्रकटहोताहे सो अग्निकरके होताहे तैसे इस ज्ञानरूपी महादीपकके प्रकटकरनेका अग्नि किसप्रकार प्राप्तहोताहे सो भी आप कृपाकरके कहिये जिससे हमकों भी यह अलौकिकदीपक प्राप्तहोय

॥गुरुरुवाच॥

हे सौम्य आचार्यरूपी पथरीहे क्यों जो बोधरूपी अग्निकी प्राप्ति उन्हींसेहोतीहे अरु जिज्ञासुकाप्रश्नरूपी लोहहे तिसके सम्बन्धसे आचार्यरूपीपथरीके मुखद्वारसे बोधरूपीअग्नि प्रकटहोताहै। अरु शुद्ध अन्तःकरणरूपी तंतूहै एकान्तरूपी पंखाहै, पापभयसे अग्निका वर्धक, अरु विक्षेपरूपी समष्टिपवनहै वैराग्य तिसकी ओटहै देहरूपी गेहहै अज्ञानरूपी तमहै,

नानाकामनारूपी पतंगहै प्रारब्धरूपी दीवेके नीचेका ८
तमहै अहंतारूपी कज्जलहै सज्जनोंकी युक्तिरूपी तिनु
काहै मननरूपी बत्तीकों उठावनेकों अध्यात्मविद्यारूपी
तेलकी पूर्त्तिहै मंदअधिकारीके दृढबोधार्थ अरु जीव
नमुक्तअवस्थारूपी रात्रिहै जिसविषे ज्ञानरूपीमहादी
पक प्रकाशताहै ॥

हे सौम्य इसप्रकार ज्ञानरूपी दीपककों जिसपु-
रुषने अपने अन्तःकरणविषे प्रकटकर धारणकिया-
है तिसका अज्ञानरूपी अंधकार सो स्वाश्रित अप-
नेआप निर्विकार शुद्ध आत्मारूपी रज्जुविषे, भासन-
हार जन्ममरणादि अनेकदुःखरूपी विषकरयुक्त संसा
ररूपी सर्पसहित निर्मूलहोताहै । ताते हे सौम्य शुद्ध
निर्विकार बोधरूपी अपनेआपआत्माविषे जो दुःखरू-
पी विषकरकेयुक्त संसाररूपीमिथ्यासर्प प्रतीतहोताहै
तिसका मूलकारण अज्ञानरूपी अंधकारहीहै। तथाच
"अज्ञानमेवास्यहि मूलकारणम्"। रामगीताके ९ श्लोकमें
एतदर्थ जब इस संसाररूपी मिथ्याभ्रान्तिकों दूरकरोगे ८
तब परमप्रशान्त निर्विकार अपनेआप स्वयंज्योतिसाक्षि
आत्माकों देखोगे ताते सर्वप्रकार मिथ्या अध्यासका ८
त्यागकरो ॥ २७ ॥ प्र०॥ हे स्वामीजी ऐसे शुद्ध निर्वि-
कार अद्वैतआत्माविषे असत्अध्यास कैसे भया सो
भी आप कृपाकर प्रतिपादनकरिये ॥ उ०॥ हे सौम्य
अब इसकों भी सावधानतासे श्रवणकरो ॥

॥ विकल्पमायारहिते चिदात्मके ऽहंकार एष ॥
॥ प्रथमः प्रकल्पितः । अध्यास एवाऽत्मनि सर्व- ॥
॥ कारणे निरामये ब्रह्मणि केवले परे ॥ ३९ ॥

॥ केवले परे विकल्पमायारहिते चिदात्मके निरामये ब्रह्मणि सर्वकारणे आत्मनि एषः अहंकारः प्रथमः प्रकल्पितः अध्यास एव ॥ ३९ ॥

॥ केवलअद्वैत उत्कृष्ट विकल्पमायासेरहित चिद्रूप दुःखरहित व्यापक सर्वकारण आत्माकेविषे यह अहंकार प्रथम कल्पितहै [सो] अहंअध्यास ही [सर्व अध्यासका मूलकारणहै] ॥ ३९ ॥

हे लक्ष्मणजी सजातीय विजातीय स्वगत भेदसे रहित शुद्ध केवल अद्वैत १। सर्वोत्कृष्ट २। मायाविकल्पसे रहित ३। चिद्घन ४। दुःखरहित ५। व्यापक ६। सर्वके कारण ७। आत्माके विषे ८। यह ९। अहंकार १० प्रथम ११। कल्पितहै १२॥ तथाच "अहंनामाऽभवत्" । बृ० उ० के १ अ० के ४ ब्रा० १ विषे ॥ सो अहंअध्यास १३। ही १४। सर्व अध्यासोंका मूलकारणहै ॥

हे सौम्य यह जो हम ब्राह्मणहैं हम क्षत्रिहैं हम वैश्यहैं हं शूद्रहैं हं दुर्बलहैं हं पुष्टहैं हं पंडितहैं हं मूर्खहैं हं बालकहैं हं तरुणहैं हं वृद्धहैं इत्यादि भ्रमसे पिपीलि

कापर्यन्त अहंअध्यासहै सोई अविद्याअज्ञानहै तिसअ-
ज्ञानकी दो शक्तिहैं एक आवरण, दूसरी विक्षेप, । तहां
मैं आत्माकों नहीं जानता यहजो भावनावृत्तिहै सो अज्ञा
नहै । अरु सर्वसंगसे रहित असंग आत्माकहतेहैं सो
भासतानहीं जो वो असंगआत्माहोता तो भासता सो १
तो भासतानहीं ताते है भी नहीं ऐसीजे अपनेआपके १
विषे अभावभावनावृत्ति सो आवरणहै । अरु अपने-
आप आत्माकों यथार्थ नजानके देहादिकके आश्रय १
वर्णाश्रमादिकोंका असत्यअहंअध्यास तिसके आश्रय
अपनेकों कर्त्ताभोक्तामानके पुण्य पापादिकोंकी कल्प-
नासे कर्मादिकोंमें प्रवृत्तहोना तिसकानाम विक्षेपहै । १
तिस विक्षेपरूप अहंअध्यासलक्षणअज्ञानका जो दोनों
देहोंसाथ सम्बंधाध्यासभयाहै तिसकरके इसकों भ्रमी
मूर्ख, अज्ञानी, इत्यादि कहतेहैं । अरु दोनोंदेहोंकेअध्या
सकानाम ही विपर्ययबुद्धिहै सोई द्वैतभ्रमका कारणहै।
परंतु सो वास्तवमें मिथ्याहै क्योंजो, अहं, यहस्फुरणरूप
है सो अपनेस्फुरणहोनेके प्रथम असत्यहै ताते अंतमें १
भी असत्यहै अरु जो आदिअंतमें असत्यहै सो वर्त्तमान
मेंभी असत्यहै । तथाच "आदावन्ते च यन्नास्ति वर्त्तमानेऽ
पि तत्तथा । ऐसा जे असत्य मूलाहंकार तिसकी असत्य
तासे सर्वअध्यास असत्यहैं अरु अध्यासकी असत्यता
से अधिष्ठानमें अध्यस्त जे सम्पूर्ण प्रपंच सो भी असत्-
यहै । ताते आदिकारण मूलाहंकारसहित सर्वजगत्

अरु अहंस्फुरणके प्रथमका जो सर्वाधिष्ठान आत्माहै सो सत्यहै। तथाच आत्मासत्यं जगन्मिथ्या इति वेदान्तडिमडिमम्। इति तातें हे सौम्य इस अनात्मरूप असत्य अहंअध्यासरूप अज्ञानका त्यागकरो अरु निर्विकार निराकार विज्ञानघन सच्चिदानन्द आत्मा में हौं इस सत्यअध्यास का निदिध्यासनकरके सुखी हो। आत्मा सर्वस्फुरणरहित केवल शुद्ध सर्वकासाक्षी निरामय अक्रिय ज्ञानस्वरूप सर्वसेपरे अपनाआपहै॥ ३८॥ प्र०॥ हे प्रभो जो आत्मा सदा शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव अक्रिय सर्वविकार रहित केवल विज्ञानघन सर्वका अपनाआपहै तो यह दुःख सुख इच्छा अनिच्छा राग द्वेष आदि किसके धर्महैं सो भी आप कृपाकरके कहिये॥

॥भावार्थश्लोक ३९ मेंका॥

हे लक्ष्मणजी सदाशुद्ध सर्वोत्कृष्ट आत्माविषे १। सर्वदा २। संसृतिकीहेतु ऐसीजे ३। इच्छा अनिच्छा राग द्वेष सुख दुःख कर्त्ता भोक्ता आदि धर्मवान् ४ बुद्धियां ५। आत्माकेविषे प्रतीतिमात्र होतीहै वास्तवमें हैं नहीं। इसकारणसे ६। बुद्धिके अभावहोनेसे ७। निर्विशेष सुषुप्तिअवस्थाविषे ८। तब हमको ९। केवल विज्ञानघन आनन्द स्वरूपकरके १०। ही ११। सर्वसंघातसेपरे अपनाआप आत्माहै सो १२। प्रकाशित अनुभवहोताहै। तथाच १ "सुषुप्तिकाले सकले विलीने" "एकमेव तत्परंवस्तु विभाति" "तद्ब्रह्माहमिति ज्ञात्वा सर्वबंधैःप्रमुच्यते"। इत्यादि श्रुतिः

॥ इच्छादि रागादि सुखादि धर्मिका सदा धियः ॥
॥ संसृतिहेतवः परे । यस्मात् सुषुप्तौ तदभावतः ॥
॥ परः सुखस्वरूपेण विभाव्यते हि नः ॥ ३९ ॥

॥ परे सदा संसृतिहेतवः इच्छादिरागादिसुखादि
धर्मिका धियः यस्मात् तदभावतः सुषुप्तौ नः सुख-
स्वरूपेण हि परः विभाव्यते ॥ ३९ ॥

॥ सर्वोत्कृष्ट आत्माविषे सर्वदा संसृतिकीहेतुऐसीजो इ-
च्छारागसुखदुःखादिधर्मवाली बुद्धियां [आत्माकेविषे
प्रतीतहोतीहैं] इसकारणसे बुद्धिकाअभावहोनेसे सुषु-
प्तिअवस्थामें हमकों सुखस्वरूपकरके ही परमात्मा
जोहैसो प्रकाशितहोताहै ॥ ३९ ॥

तातें हे सौम्य इच्छा अनिच्छा राग द्वेष सुख दुःख पाप
पुण्य स्वर्ग नरक कर्त्ता भोक्ता आदि यावत् द्वैतरूप बु-
द्धिके धर्म जो असत्यअध्यासद्वारा संसारमें वारंवार ज-
न्ममरणके हेतु हैं तिनसर्वकों परित्यागकरके सुषुप्ति-
वत् निर्विशेष आनन्दघन अपनेआपआत्माकों अनु-
भवकरके सुखीहो हमकोंतो अपनाआपआत्मा सदा
निर्विकार अखंड अद्वैत आनन्दरूपही भासताहै । ३९ ।
॥ प्र० ॥ हे स्वामीजी इस आत्माकों जो जीव साक्षी अप-
राधी कहते हैं सो क्योंकहतेहैं । उ० इसकों भी श्रवणकरो ॥

॥अनाद्यविद्योद्भवबुद्धिबिम्बितो जीवः। प्रकाशोऽय॑-॥
॥मितीर्यते चितः। आत्मा धियः साक्षितया पृथक्
॥स्थितो बुद्ध्यापरिच्छिन्नपरः स एव हि ॥ ४० ॥

॥अनाद्यविद्योद्भवबुद्धिबिम्बितः चितः प्रकाशः अयं जीवः इति ईर्यते स एव हि बुद्ध्याऽपरिच्छिन्नपरः आत्मा धियः साक्षितया पृथक् स्थितः ॥ ४० ॥

॥अनादिअविद्यासे उपजी जो बुद्धि तिसकेविषे आत्माका प्रतिबिम्बहोनेसे चैतन्यका प्रकाशजोहैसो यह जीव ऐसे कहतेहैं सो ई निश्चय बुद्धिसे अपरिच्छिन्नपरे आत्माजोहैसो बुद्धिका साक्षी होय पृथक् स्थितहै ॥

हे लक्ष्मणजी अब जीवकास्वरूप श्रवणकरो ॥- अनादिजे त्रिगुणात्मका अविद्या तिसके सत्वगुणभाग से उपजी जो निश्चयआत्मिका बुद्धि तिसकेविषे साक्षी२ आत्माके प्रतिबिम्बहोनेसे १ चैतन्यका२ जो आभास प्रतिबिम्ब प्रकाशहै सो ३ यह ४ जीव५ ऐसे ६ कहतेहैं अर्थात् अनादि अविद्याके सत्वगुणभागसे उपजी जो बुद्धि सो, स्फटिकमणिवत्, शुद्धरूपहै तिसविषे आया जो अपनेउपहित साक्षी आत्माका आभासरूप प्रतिबिम्ब प्रकाश, जैसे दर्पणविषे सूर्यका प्रकाश, तिसको जीव कहतेहैं चिदाभासकहतेहैं सो सर्व बुद्धिरूप उपाधि

के सम्बंधसे कहतेहैं वास्तवमें यह प्रतिबिम्बरूपी जीव साक्षीआत्मासे भिन्न नहीं ॥

॥ शिष्यउवाच ॥

हे भगवन् प्रतिबिम्बजोहोताहै साकार परिच्छिन्न-काहोताहै. जैसे आपने सूर्यका आदर्शविषे कहा, सो अस्तु परंतु साक्षी आत्मा तो निराकार महासूक्ष्म अपरिच्छिन्न पूर्णहै तिसका प्रतिबिम्बहोना बनतानहीं याते इससंशयकोंभी कृपाकर निवारणकरिये ॥

॥ गुरुरुवाच ॥

हे सौम्य निराकार अरु पूर्णका भी प्रतिबिम्बहोना२ बनताहै। जैसे आकाश निराकार अरु पूर्णहै तिसका१ प्रतिबिम्ब जलादिकोंविषे होताहै देखो जानुमात्र गंभीर जलविषे आकाशकी नीलिमा भासेहै तिसं नीलिमा अरु जल इनदोनोंके मध्यमें नीलिमा अरु जलको छोडको जो अति विस्तृत शून्य गंभीरता भासेहै सोई जलकेविषे निराकार पूर्ण आकाशका प्रतिबिम्बहै। तैसे ही अविद्याके२ सत्वगुणभागकी जे बुद्धिहैं तिसविषे निराकार पूर्ण आत्माका प्रतिबिम्बहोताहै सोई साभ्यरूप जीवहै ॥

॥ शिष्यउवाच ॥

हे गुरो आपने जलविषे आकाशके प्रतिबिम्बके दृष्टान्त प्रमाण बुद्धिविषे आत्माके प्रतिबिम्बको कहा सो नहीं क्योंकि जलतो साकार स्थूलहै तिसविषे निराकार आकाशका प्रतिबिम्बहोताहै अरु बुद्धितो निराकार२

सूक्ष्महै जलवत् आकारवान स्थूल नहीं ताते निराकार बुद्धिविषे निराकार आत्माका प्रतिबिम्बहोना संभव नहीं ताते इस संशयकों भी आप निवारणकरिये ॥

॥ गुरुरुवाच ॥

हे सौम्य अब इसकों भी श्रवणकरो बुद्धिकाआकार स्थूलनहीं सूक्ष्मरूपहै ताते बुद्धि निराकार नहीं। जैसेवायुका सूक्ष्मरूपहै जो वायुका सूक्ष्मरूप नहोय तो देह किंवा वृक्षकेस्पर्शसे कैसेजानाजाता जो वायुहै सो तो देह किंवा वृक्षकों स्पर्शहोनेसे वायुजानाजाताहै ताते वायुसूक्ष्मरूप है। तैसे हीं बुद्धि जब पदार्थोंकों निश्चयकार ग्रहण किंवा त्यागकरतीहै तब जानीजातीहै जो यह बुद्धि श्रेष्ठ किंवा नेष्टहै ताते बुद्धि सूक्ष्मरूपहै। अरु जैसे वायु सूक्ष्मरूप होके पुष्पादिकोंकी निराकारगंधके प्रतिबिम्बकों ग्रहण करेहै। तैसे हीबुद्धि सूक्ष्मरूपहोय निराकार आत्माके २ प्रतिबिम्बकों ग्रहणकरतीहै। जो बुद्धि सूक्ष्मरूप न होती तो निश्चयात्मका वृत्तिभीनहोती अरु योगेश्वरोंद्वारा साक्षात् चिदाभास भी जानानजाता अरु आत्मा जो बुद्धिकी वृत्तिकों जानताहै ताते भी जानाजाताहै जो बुद्धिकासूक्ष्म रूपहै। एतदर्थ बुद्धि वायुवत् सूक्ष्मरूपहोय निराकार २ चैतन्यआत्माके प्रतिबिम्बकों ग्रहणकरती है तिसप्रतिबिम्बकों चिदाभास, जीव, कहतेहैं सो जीव बुद्धिकेसाथ मिलके बुद्धिके धर्म अपनेविषे मान आपकों कर्त्ता भोक्ता मानेहै परंतु वास्तवमें यह जीव कर्त्ता भोक्ता नहीं क्योंजो

जीव प्रतिबिम्बरूपहै एतदर्थ जब बिम्बरूप साक्षीआत्मा-
में क्रियाहोय तब तिसकेप्रतिबिम्बरूपजीवविषे भी होय
सो तो बिम्बरूप साक्षिआत्मा अक्रियहै ताते उसकाप्र
तिबिम्ब भी अक्रियहै केवल बुद्धिरूप उपाधिके संबंधसे
जीव अरु कर्त्ताभोक्ता संज्ञाभईहै वास्तवमें एक शुद्ध
साक्षी आत्माहीहै । सो॰ । ९ । जीवशब्द ,त्वं पद, का
लक्ष्यआत्माहै । तथाच "जीवोब्रह्म नापरः" । अर्थात् जो
अजीवपदार्थ देहेंद्रिय प्राणमन आदिक जड़ अनात्मा-
है तिनकों जो सजीवकरे सो कहिये जीव । अथवा जो
सर्वदा आप जीवतारहै सो कहिये जीव ताते आत्माका
ही नाम जीवहै आत्मासे इतर जीवनहीं । ताते निश्चयकर
के १० बुद्धिसे अपरिच्छिन्न परे ११ जो आत्माहै सो-
१२ बुद्धिका साक्षीहोय । १३ । १४ । बुद्धिसे पृथक् १५ । स्थि-
तहै १६ ॥ तथाच "योबुद्धेःपरतस्तुसः" । गी॰ अ॰ ३ के ४२
मेश्लोकमें । तथाच "जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यादि गुणतोबुद्धिवृ-
त्तयः तासां विलक्षणो जीवः साक्षित्वेन विनिश्चितः" । इ-
ति भागवतके एकादशस्कंधके १३ में अ॰ के २७ में श्लोक
में । ताते हे सौम्य जीवशब्दकावाच्य बुद्धिविशिष्ट चैत-
न्य अरु जीवशब्दका लक्ष्यबुद्धि उपहित चैतन्य तहां
जब मध्यसे बुद्धिरूपी उपाधि दूरकिया तब वाच्य अरु
लक्ष्यको अभेद एकताहोतीहै एतदर्थ उपाधिके सम्बं-
धसे जीव अरु साक्षी दो कहेजातेहैं अरु उपाधिके अ-
भावसे वास्तवमें जीव अरु साक्षीकी समानचैतन्यावि-

॥ चिद्बिम्ब साक्ष्यात्मधियां प्रसंगात् त्वेकत्र- ॥
॥ वासादनलाक्तलोहवत् । अन्योन्य मध्यास ॥
॥ वशात् प्रतीयते जडाजडत्वं च चिदात्मचेतसोः ॥४१॥

॥ चिदात्मचेतसोः अन्योन्यं अध्यासवशात् जडाजडत्वं प्रतीयते [कुतः] चिद्बिम्बसाक्ष्यात्मधियां प्रसंगात् तु एकत्रवासात् [किंवत्] अनला क्तलोहवत् च ॥ ४१ ॥

॥ आत्मा अरु चित्त इनका परस्पर अध्यास होनेसे जडाजडत्वभाव प्रतीत होताहै [क्योंकि] आत्मा चिदाभास अरु बुद्धि इनके परस्पर संबंधसे पुनः एकत्र रहनेसे [कैसे] अग्नि लोहवत् च ॥ ४२ ॥

वे अभेदताहै सोई चैतन्य आत्मा शुद्धब्रह्मही है। तथा- च अयमात्माब्रह्म । मा० उ० की प्रथम श्रुतिमें ॥ ४० ॥ ॥प्र०॥ हे स्वामीजी चैतन्य आत्माके धर्म बुद्ध्यादि जड अ- नात्माविषे अरु अनात्माके कर्तृत्वादि धर्म अक्रिय आत्माविषे प्रतीत होतेहैं तिसका हेतु भी आप कहिये ॥

॥ भावार्थ श्लोक ४१ का ॥

हे लक्ष्मणजी चैतन्य आत्मा अरु चित्त इनका १ परस्पर २ । अध्यास होनेसे ३ । जडाजडत्वभाव ४ । प्रती- होताहै ५ ॥ अर्थात् जडमें चैतन्यता अरु चैतन्यमें जड- ताकी जो प्रतीतिहै सो केवल अज्ञानजन्य अहंअध्

सकेवश भईहै। क्यों कि साक्षीआत्मा चिदाभास अरु १ बुद्धि इनके ६। परस्परसम्बंधसे ७। अरु ८। एकत्ररहने-से ९॥ अर्थात् आत्मा चिदाभास अरु अंतःकरण इनके परस्पर एकत्रहोनेसे जड़के धर्म चैतन्यमें अरु चैतन्यके-धर्म जड़ में प्रतीतहोतेहैं। जैसे जब अग्नि अरु लोहका १ एकत्रहोना होताहै तब अग्निविषेलोहके अरु लोहविषेअ-ग्निके धर्म प्रतीतहोतेहैं तैसे १०।११॥

हे सौम्य वास्तवमें दाहकता प्रकाशकता जे अग्निके धर्महैं सो लोहमेंहैंनहीं तथापि अग्निके संयोगसे लोह दा-ह अरु प्रकाशकरनेकों समर्थहोताहै। अरु चौकोर त्रिको-णादि आकार जे लोहपिंडके धर्म सो अग्निविषेहैंनहीं त-थापि लोहके सम्बंधसे अग्निके त्रिकोण चौकोर आदि आकार प्रतीतहोतेहैं सो असत्यहैं। तैसेही शुद्ध निराका-र निर्विकार आत्माविषे जो वास्तवमें हैं नहीं ऐसे जे बु-द्धिके इच्छा अनिच्छा राग द्वेष पाप पुण्य आदि धर्म सो बु-द्धिके सम्बंधसे चिदाभासआत्माविषे प्रतीतहोतेहैं तिनकों अज्ञानके आश्रय मिथ्याअहंअध्यासके वश यहजानता-है जो मैं तुच्छ जीव पापी अपराधी अयम्न कर्मोंकाक-र्ता सुख दुःखका भोक्ता हौं। इत्यादि जे अंतःकरणके ध-र्म सो अपने बिम्बरूप सत्यस्वरूपके अज्ञानसे चिदाभास-आत्मा अपनेविषेमानेहै सो सर्व वास्तवमें असत्यहै। यह आत्मा तो सदा शुद्ध निर्विकार निराकार निःक्रिय सर्वके धर्मसेरहित स्वयंप्रकाश सर्वका साक्षीहै जिसके जे लत

चित् आनन्दादि लक्षणरूपी धर्म सो बुद्धि आदि जडोंवि-
षे भासतेहैं तब जानताहै जो यह सर्व चैतन्यहै अपने २ ८
कार्यकों करतेहैं अरु आनन्दरूपधर्म भी इनविषे प्रतीत
होताहै तातें यहीआत्माहै ॥

हे सौम्य देखो सच्चिदानन्दलक्षणरूप चैतन्यआत्माके
धर्म सो जड़ अनात्मा अंतःकरणविषे भासतेहैं अरु अंतः
करणादि अनात्माजडोंके दुःखसुखादि धर्म सो शुद्धचैत-
न्यआत्माविषे भासतेहैं सो इसहीकों अन्योऽन्याध्यास ८
अरु चिज्जडग्रंथि भी कहतेहैं । हे सौम्य यह जो आत्माहै
सो इनअंतःकरणादिअनात्माके संगसे असत्य अहंअ-
ध्यासद्वारा जीवभावकोंप्राप्तहोय जन्म मरण सुखदुःखा८
दिकोंका भोक्ता भयाहै । तथाच "आत्मेंद्रियमनोयुक्तं भो-
क्तेत्याहुर्मनीषिणः"। क० उ० की तृतीय वल्लीकी चतुर्थ श्रु-
तिमें । अरु जब इसकों आचार्यकेउपदेशसे सम्यक् आ-
त्मज्ञानद्वारा असत्य अहंअध्यासके अभावसे चिज्जड़ग्रंथी
खुलजाय तब तिसहीकाल जहांहै तहांही सर्वबंधनसे८
रहित मोक्षरूपहीहै । तथाच "यदासर्वेप्रभिद्यंतेहृदयस्ये
ह ग्रंथयः अथ मर्त्योमृतोभवत्येतावदनुशासनम्" । क० उ०
की ६ ठी वल्लीकी १६ मी श्रुतिमें ॥ ४१ ॥

॥ भावार्थश्लोक ४२ मेंका ॥

हे लक्ष्मणजी श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठगुरुके १। समीपसे २॥
अर्थात् उपदेशसे । अरु वेदके जे तत्त्वमस्यादिमहावाक्य-
हैं तिनके विचारसे ३। औ ४। उत्पन्नभया आत्मानुभवजिस-

॥प्रकाशरूपो हमजो हमद्वयःसकृद्विभातो हं-॥
॥मतीवनिर्मलः। विशुद्धविज्ञानघनो निरामय-॥
॥यः सम्पूर्ण आनंदमयो हमक्रियः॥ ४३॥

॥अहम् प्रकाशरूपः अहम् अजः अद्वयः सकृद्विभा
तः अहम् अतीवनिर्मलः विशुद्धविज्ञानघनः निरा-
मयः सम्पूर्ण आनन्दमयः अहम् अक्रियः॥४३॥

॥ मैं प्रकाशरूपहों मैं अजहों [मैं] अद्वैतहों [मैं]
एकहों [अरु] मैं अतिहीनिर्मलहों विशुद्धविज्ञानघनहों
[अरु] दुःखरहितहों [अरु] सर्वव्यापीहों [अरु] आ-
नन्दघनहों [अरु] मैं अक्रियहों ॥ ४३ ॥

की २२ मीश्रुतिमें ॥ ४२ ॥ हे लक्ष्मणजी हे सौम्य अब
आत्मानुभवीपुरुषोंका अनुभवअध्यासश्रवणकरो॥

॥भावार्थश्लोक४३मेंका॥

हे लक्ष्मणजी आत्मानुभवीपुरुष अपनेसम्यक्
बोधकरके अपनेआपकों जानताहै जो मैं १ स्वयंप्रका
शरूपहों २॥ अर्थात् यावत् सूर्यचंद्रादिकोंके भांतभांति
के प्रकाशहैं सो सर्व मुझकों नहींप्रकाशते किंतु मेरेप्र-
काशसे यहसर्व प्रकाशितहैं ताते सर्वप्रकाशोंकाप्रका-
श मैं ही हों। तथाच "अत्रायं पुरुषः स्वयंज्योतिर्भवति"।
"आदित्यवर्णंतमसः परस्तात्" इत्यादि श्रुतिः। और कैसा

हूं मैं ३। अजहूं ४॥ अर्थात् जन्मसे रहितहौं। तथाच "अजोनित्यः शाश्वतोयंपुराणो"। अरु अद्वैत हौं ५॥ अर्थात् जिस एकसंख्याकी प्रतियोगी दोसंख्याहैं ऐसी एक विषमसंख्यारहित। एकहौं ६॥ तथाच एकमेवाद्वितीयम्। अरु मैं ७। अतिही निर्मलहौं ८॥ अर्थात् माया अविद्या तिनका कार्य प्रपंच तिनसर्वसेरहित निर्मलहौं। तथाच "शुद्धमपापविद्धम्"। अरु विज्ञानघनहौं ९॥ अर्थात् बुद्धिके विशेष ज्ञानसेरहित निर्विशेष चैतन्यघनहौं। जैसे सैंधवलवण केवल रसघनहोताहै तद्वत्। तथाच "यथा सैंधवघनोनंतरोबाह्यः कृत्स्नोरसघन एवैवंवा अरे अयमात्मानंतरो बाह्यः कृत्स्नःप्रज्ञानघनः"। बृ० उ० के अ० ६ के ब्रा० ५ में की १३ मी श्रुति। अरु दुःखरहितहौं १०। अर्थात् अध्यात्म अधिभूत अधिदैव आदि दुःखोंसे रहित निर्दुःखहौं। तथाच "नलिप्यतेलोकदुःखेनबाह्यः"। क० उ० के ५ वल्लीमें। अरु सर्वव्यापीहौं ११। तथाच "एकस्तथासर्वभूतान्तरात्मा रूपंरूपंप्रतिरूपोबभूव"। अरु आनन्दघनहौं १२। तथाच "अस्य एषएव परमानन्दः"। अरु मैं १३। अक्रियहौं १४। अर्थात् कायिक वाचिक मानसिक क्रियासेरहित अक्रियहौं। तथाच नलिप्यतेकर्मणापापकेनेति। इत्यादि हे सौम्य इसप्रकार आत्मवेत्ताओंका अनुभवाध्यासहोताहै अब और भी अनुभवाध्यास श्रवणकरो॥ ४३॥

॥ भावार्थश्लोक ४४ मेंका॥

हे लक्ष्मणजी और भी आत्मवेत्ता जीवन्मुक्तोंका

॥ सदैव मुक्तो ह्यचिन्त्यशक्तिमानतीन्द्रियज्ञानो-॥
॥ऽविक्रियात्मकः। अनन्तपारो ह्यहर्निशं बुधै॥
॥र्विभावितो हृदि वेदवादिभिः ॥ ५४ ॥

॥अहम् सदा एव मुक्तः अचिंत्यशक्तिमान् अती-
न्द्रियज्ञानः अविक्रियात्मकः अहम् अनन्तपारः वेद-
वादिभिः बुधैः अहर्निशं हृदि अहं विभावितः॥

॥मैं सदा ही मुक्तरूप हौं [अरु] अचिंत्यशक्तिमान हौं
[अरु] इंद्रियातीतज्ञानस्वरूप हौं [अरु] एकरस हौं
[अरु] मैं अनन्तअपार हौं वेदवेत्ता बुद्धिमान करके
रात्रिदिवस हृदयमें जानने योग्य हौं ॥ ५४ ॥ मैं

अनुभवाध्यास श्रवण करे यों जानतहैं जो मैं १। स-
दैव २। ही ३। मुक्तरूप हौं ४। अरु अचिन्त्यशक्तिमान हौं
५। अरु इंद्रियातीतज्ञानस्वरूप हौं ६॥ अर्थात् बुद्धिआ-
दिकिसीभी इंद्रियोंका विषय नहोत संते इंद्रियोंद्वारा सर्व-
का अनुभवी ज्ञानस्वरूप हौं। तथाच "यद्वाचानभ्युदितं ये-
न वागभ्युद्यते" इत्यादि के० उ० के द्वितीयखंडकी श्रुतिः।
अरु एकरस हौं ७॥ अर्थात् नानारूप होत संते भी अपने
स्वरूपसे चलायमान नहीं होता। तथाच "घनप्रत्यक् एकरसः"
। अरु मैं ८। अनन्तअपार हौं ९। अर्थात् देश काल वस्तु-
करके अथवा देव पितृ मनुष्य करके जिसका अंत न पा-

याजाय सोकहिये अनन्त अपार सो ऐसा आत्मस्वरूप मैं ही हौं । अरु वेदवेत्ता १०। बुद्धिमानकरके ११॥ अर्थात् वेद जो उपनिषद्भाग ब्रह्मविद्या तिसके सूक्ष्मविचारके जानने वाले सूक्ष्मबुद्धिपुरुषकरके । दिनरात्र १२। हृदयमें १३। अंगुष्ठमात्र ज्योतिरूपसे जाननेयोग्य जो आत्मतत्वहै सो मैं ही हौं।[14] तथाच "अंगुष्ठमात्रः पुरुषो ज्योतिरिवाधूमकः" । का० उ० के ४ वल्लीकी १३ मी श्रुतिमें । तथा "स आत्मा स विज्ञेयः" । छां० उ० विषे ॥

हे सौम्य यह जो तुम से आत्मवेत्ता जीवन्मुक्तोंका अनुभव दो श्लोक करके कहाहै तैसे ही जीवन्मुक्तोंका अनुभव वेदभगवान्ने भी कहाहै । तथाच "पुरातनोहं पुरुषोहमीशो हिरण्मयोहं शिवरूपमस्मि अपाणिपादो हमचिन्त्यशक्तिः पश्याम्यचक्षुः सशृणोम्यकर्णः अहम् विजानामि विविक्तरूपो नचास्ति वेत्ता ममचित्सदाहं वेदैरनेकैरहमेववेद्यो वेदान्तकृत् वेदविदेवचाहम्" । इत्यादि कैवल्यउपनिषद्विषे ॥

हे सौम्य ऐसा जो वेदप्रतिपाद्य जीवन्मुक्तोंका साक्षात् आत्मानुभवहै सोई अपनास्वरूपानुभव श्रीरामजीने लक्ष्मणजीसेकहाहै अरु सोई श्रीशिवजीने पार्वतीजीसे कहाहै अरु सोई हमने तुमसेकहाहै । ताते और भी जे आप्तकाम आत्मकामी मुमुक्षु इसप्रकार अपनेआप आत्माकों वेदाचार्यद्वाराजानके अनुभव अभ्यासकरतेहैं तिनकी अविद्या अपनेकार्य सर्वअनर्थोंसमेत अत्यन्त

हंअध्यासकेमणशीघ्रही नाशहोतीहै । अरु इस सत्यआ-
त्मानुभव अध्यासकाकरनेवाला सर्वबंधनोंसे रहितहोताहै
सो यही अध्यासहै जो परमेश्वर परमात्मा सर्वजगत्का१
अधिष्ठान बडेसेबड़ा अरु सूक्ष्मसे सूक्ष्म नित्य निरन्तरजी-
व ईश्वर ईश्वर जीव सर्वका साक्षी सर्वत्रसमान एकरस१
अवस्थातीनोंका प्रकाशक स्वयंज्योति निर्विकार निराका
र कूटस्थ आत्माहै सोई मेरा अपनाआप प्रत्यगात्मा मैं
हीहों । तथाच "यत्परंब्रह्म सर्वात्मा विश्वस्यायतनंमहत्
सूक्ष्मात् सूक्ष्मतरं नित्यं तत्त्वमेवत्वमेवतत् जाग्रत्स्वप्नसु-
षुप्त्यादि प्रपंचंयत्प्रकाशते तद्ब्रह्माहमिति ज्ञात्वा सर्व बन्धैः
प्रमुच्यते"। इति कैवल्य उपनिषद् विषे । ताते हे सौम्यजो
मुमुक्षु इसप्रकार आचार्यसे वेदकेमहावाक्योंद्वारा वि-
चारके अपनेआपआत्माकों अनुभवकर अध्यासक-
रताहै सो सर्वबंधनोंसे रहित ब्रह्मही होता है । तथाच१
"स यो ह वै तत्परमंब्रह्मवेद ब्रह्मैव भवति" ॥ ४४ ॥

॥ भावार्थश्लोक ४५ मेंका ॥

हे लक्ष्मणजी हे पुरुषश्रेष्ठ । पूर्व दो श्लोककरकेक-
हेप्रकार१। निरन्तर अध्यासकरके अपनेआपको जाना
है जिसने तिस आत्मज्ञानीकरके २। अपनेआप सत्य
साक्षीआत्माकों ३। भावनाकरनेवालेकी ४॥ अर्थात
विचार अध्यासकरनेवालेकी । जोशुद्ध सर्वात्मभावना
है सो ५। शीघ्रही ६। कर्मोंकरकेसहित ७। अज्ञान अरु
तिसकाकार्य आवरण विक्षेप तिनकों ८। नाशकरेहैं१।

॥ एवं सदाऽऽत्मानमखंडितात्मना विचारमाणस्य ॥
॥ विशुद्धभावना । हन्यादविद्यामचिरेण कारकैः ॥
॥ रसायनं यद्वदुपासितं रुजः ॥ ४५ ॥

॥ एवं अखंडात्मना सदाआत्मानं विचारमाणस्य विशुद्धभावना अचिरेण कारकैः [सह] अविद्यां हन्यात् [किंवत्] यद्वत् उपासितं रसायनं रुजः [तद्वत्] ४५

॥ पूर्वकहेप्रकार निरंतरआत्मज्ञानीकरके सत्यआत्माको भावनाकरनेवालेकी जोशुद्धभावनाहैसो शीघ्रही कर्त्ता-करके [सहित] अज्ञानको नाशकरेहै [कैसे] जैसे कुशलवैद्यकरकेसेवनकरी रसऔषधि [सो] रोगको [तैसे]

कैसे जैसे १०। कुशलवैद्यकरके सेवनकरी ११। रसायनऔषधी १२। सो रोगको १३। तैसे ॥ अर्थात् विषमरोगको श्रेष्ठवैद्यद्वारा सेवनकिया रसायन धातुआदिऔषध सोईनाशकरेहै अन्य काष्ठादिऔषधसे विषमरोग जातानहीं ताते तिस विषमरोगको नाशकरनेको कुशलवैद्यपूर्वक रसायन औषधहीहै। हे सौम्य इसही प्रकार अज्ञान अरु तज्जन्य जन्ममरणादि विषमरोगहैं कि जो श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठआचार्यरूपीवैद्यद्वारा आत्मज्ञानऔषधविना अन्यउपायसे जन्मजन्मान्तरमें भीअभावहोनेकानहीं ऐसाजो यह अनर्थका मूलअविद्या

॥ विविक्त आसीन उपरतेंद्रियो विनिर्जितात्मा ॥
॥ विमलांतराशयः। विभावयेदेकमनन्यसा- ॥
॥ धनो विज्ञानदृक् केवल आत्मसंस्थितः ॥४६॥

॥ विविक्त आसीनः उपरतेंद्रियः विनिर्जितात्मा विमला-
न्तराशयः अनन्यसाधनः आत्मसंस्थितः विज्ञानदृक्
एकं केवलः विभावयेत् ॥४६॥

॥ एकांत स्थित इंद्रियोंसेउपरामहुआ मनकाजीतनेवाला शुद्धअंतःकरण अन्यकर्मादिसाधनरहित ज्ञानदृष्टिवाला आत्मामेंस्थितहोकर केवल एक [अपनेआप आत्माको] साक्षात्अनुभवकरे ॥ ४६ ॥

विद्याके नाशकरनेकोंतो एक अखंड सर्वात्मअध्यासही समर्थहै। तथाच विद्येयतन्नाशविधोपटीयसी। राम-गीताके श्लोक ९ में। तातेहे सौम्य जो तुमकों अविद्यारूपी विषमरोगके निर्मूलनाशकरनेकी इच्छाहैतो सम्पूर्णकर्मउपासनाकों त्यागके अर्थात् संन्यासलेके सर्वात्मअध्यासपरायणहो आगे जो तुमारीइच्छा ॥४५॥ हे प्रभो अब आत्मअध्यासका क्रम कहिये ॥

॥ भावार्थश्लोक ४६ में का ॥

हे लक्ष्मणजी हे मुमुक्षो जिसविवेकीको आत्मप्राप्तिकी इच्छाहोय सो जिज्ञासुपुरुष इसप्रकारको प्रथम

एकान्तस्थानविषे १॥ अर्थात् विक्षेपकारीजनसमूहोंसे
रहित किसी तीर्थादिक पवित्र सत्वगुणी स्थानविषे।
स्थितहोय २। अरु इंद्रियोंसे उपरामहोय ३। अर्थात्
पांचज्ञानेंद्रियोंके शब्द स्पर्श रूप रसगंध यहजो पांच
विषयहैं तिनसों इंद्रियवृत्तिकों हटाय अन्तर्मुखकरे।
अरु मनकाजीतनेवालाहोय ४॥ अर्थात् इंद्रियोंको वि-
षयसे हटावनेसे मनमेंरहीजो विषयसंबंधी सूक्ष्मवासना
तिसको भी विषयमेंदोषदृष्टिकर निवृत्तकरे। तथाच "शा-
न्तोदान्त उपरत तितिक्षु समाहितो भूत्वा"। बृ० उ० अ० ४ के
४ ब्रा०में। अरु स्वर्गादिकोंकी कामनासे रहित शुद्धअंतः
करणहोय ५। अरु अन्य कर्मादिकोंसे रहितहोय ६। अ-
र्थात् कर्मसे आत्माजो अक्रियहै तिसकीप्राप्तिहोती नहीं।
तथाच "नास्त्यकृतःकृतेन" "नकर्मणा"। इत्यादि मुं० अरु
कै० उ० की श्रुतिः। अरु ज्ञान कर्मका समुच्चय बनता नहीं
क्योंकि ब्रह्मविद्या अरु कर्मका परस्पर विरोधहै। तथाच
"विद्याविरोधान्नसमुच्चयो भवेत्"। रामगीताके श्लोक १६ औ
एतदर्थं "प्रव्रजितोलोकमिच्छंतःप्रव्रजंति"। इत्यादिप्रमाण
से नित्यनैमित्तकादि कर्मकोत्यागके संन्यासलेवे। अरु
आत्माअनात्माका विचारकरता ज्ञाननिष्ठावालाहोय ७॥
तथाच "विमूढानानुपश्यन्ति पश्यन्तिज्ञानचक्षुषः"। गी० अ-
ध्याय १५ के १० श्लोकमें। अरु आत्मामेंस्थितहोयकर ८।
अर्थात् मनकी जो पांचवृत्तिहैं तिससेरहित जो शारदक्ष

तुझे आकाशवत् शुद्ध आकाशरूप सर्ववृत्तिके अभावसे
केवल अन्तःकरण तिसमें स्थितहोके तिसमेंसे अवका-
शरूपजो आकाशत्व तिसको अभावकरके तत्स्थानमें।
"आकाशवत् सर्वगतः स सूक्ष्मः"। इत्यादि श्रुतिवाक्यप्रमा-
णसे साक्ष्य साक्षित्व भावसे रहित आकाशवत् महासू-
क्ष्म अद्वैत। एक ९ केवल १०। आनन्दघनमात्र आपनेआ-
पको। अनुभवकरे। तथाच "आत्मन्येवात्मानंपश्यति"।
बृ० उ० के ६ ठे अध्यायविषे॥ ४६॥ हे सौम्य इसप्रका-
र साक्षात् आत्मानुभवकरनेवाला पुरुष ब्रह्मही होताहै।
तथाच "ब्रह्मविद्ब्रह्मैवभवति"॥ हे सौम्य अब सम्पूर्ण
जगत्की सर्वात्मरूपभावनासे उपासना श्रवणकरो॥

॥ भावार्थश्लोक ४७ मेंका ॥

हे लक्ष्मणजी जो १। यह २। परमात्माकरके प्रकाशि-
त ३। नामरूपात्मकजगत् तिसको ४। सर्वकाकारण अ-
धिष्ठानजे ५। आत्मा तिसविषे ६। लीनकरे ७॥ अर्थात्
यावत् नामरूपात्मक इंद्रियअन्तःकरणादिकोंकाविषयरू-
पजे सम्पूर्ण जगत् जो केवल अज्ञानजन्य भ्रमरूप अह-
अध्यासकी आश्रय चैतन्यात्मअधिष्ठानविषे पृथक्रूप
से भासमानभयाहै, मरीचिकाजलवत्, तिसको अधि-
ष्ठानकारूपजाने क्योंकि अधिष्ठानसे इतर अध्यस्तकी
पृथक्सत्तानहीं। जैसे रज्जुसे इतरसर्पकीसत्तानहीं, आका-
शसेइतरनीलिमाकीसत्तानहीं मरीचिकासे इतर मृगजल-
कीसत्तानहीं। तैसेही सर्वाधिष्ठानचैतन्यआत्मासे इतर

॥ विश्वं यदेतत्परमात्मदर्शनं विलापयेदात्मनि ॥
॥ सर्वकारणे । पूर्णश्चिदानन्दमयो वतिष्ठते ॥
॥ न वेद बाह्यं न च किंचिदान्तरम् ॥ ४७ ॥

॥ यत् एतत् परमात्मदर्शनं विश्वं [तत्] सर्वकारणे आत्मनि विलापयेत् [तदा] पूर्णः चिदानन्दमयः अवतिष्ठते बाह्यं न वेद किंचित् आन्तरं च न [वेद] ४७

॥ जो यह परमात्माकरकेप्रकाशित जगत्तिसकों सम्पूर्णकारणजो आत्मातिविषे लीनकरे [तब] पूर्ण चैतन्यआनन्दमय अवशेषरहैहै [तिससे] बाहिर नहीं जानता [अरु] किंचित् आभ्यन्तर भी नहीं [जानता]

नामरूपात्मकजगत्की भी पृथक्सत्ताका अभावहै। ताते सम्पूर्णनामरूपात्मकजगत्को सर्वाधिष्ठानपरमात्मरूपहीजाने। तब सर्वउपाधिसेरहित पूर्ण ९। एक अद्वैत चैतन्यआनन्दघनही १०। अवशेषरहताहै ११॥ अर्थात् जब अध्यस्त जगत्को सर्वाधिष्ठानआत्माविषे तारूपसेही जानताहै तबकेवल एक अद्वैत आनन्दघनआत्माही अवशेषरहताहै ॥ जैसे जागृत् स्वप्नकार स्थूल सूक्ष्म जगत् सुषुप्तिविषे लीनहोताहै तब केवल एक आनन्दघनचैतन्यआत्माही लक्ष्यहोताहै पुनः उसीसे उत्थानहो भासने लगताहै। ताते जो अपनेहोनेके

प्रथम न होय अरु अंतमें भी न रहे अरु मध्यविषे भासे २ तिसको असत्य जानिये अरु जो आदि अरु अंतमें सत्यरूप होय मध्यमें अन्यवत् भासे तोभी वो सत्यरूपही है जैसे घटके पूर्व मृत्तिकाहै अरु अंत भी मृत्तिकाहै मध्य में कम्बुग्रीवादिरूप अरु घटनाम से जो मृत्तिकासे अन्यवत् भासेहै सो भी सत्य मृत्तिकाहीहै । अरु मृत्तिका के विषे कम्बुग्रीवादिरूप अरु घटनाम से जो भासमान सो अपने आदि अरु अंतमें न होनेसे कल्पित असत्यहै। इसप्रकार जब विचारकरके देखताहै तब घटके नामरूपकी पृथक् सत्ताके अभावसे एक मृत्तिकाही सत्य अवशेष रहेहै । तैसेही नामरूपात्मक जगत्के आदि अन्त २ को विचारकरनेसे जगत्की सत्ताके अभावसे एक परिपूर्ण अद्वैत सर्वाधिष्ठान आत्मसत्ताही अवशेष रहेहै सोई कार्यकारणात्मक जगत्रूपही भासताहै ताते यावत् कार्यकारणात्मक जगत् भासेहै सो सर्वाधिष्ठान आत्मसत्ताही परिपूर्ण भासेहै तिसविषे पृथक्रूपसे भासमान जो जगत् तिसकी पृथक्सत्ताके अभावसे पूर्ण एक सर्वाधिष्ठान आत्माही शेषरहेहै । तथाच "पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते पूर्णस्यपूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते" । बृ० उ० के अ० ७ के १ बा० मे । एतदर्थ तिससे बाहर १२॥ अर्थात् पृथक् कुछ भी । न १३। जानना १४। अरु १५। किंचिन्मात्र १६। आत्मा १७॥ अर्थात् छिपाभयाभी न १८। जानना ॥ अर्थात् सर्वाधिष्ठानआत्मासे किंचिन्मात्र

॥ पूर्वं समाधेरखिलं विचिन्तयेदोंकारमात्रं सच- ॥
॥ राचरं जगत् । तदेव वाच्यं प्रणवो हि वाच- ॥
॥ को विभाव्यतेऽज्ञानवशान्न बोधतः ॥ ४८ ॥

॥ समाधेः पूर्वं अखिलं सचराचरं ओंकारमात्रं विचिन्तयेत् हि प्रणवः वाचकः तत् एव वाच्यं अज्ञानवशात् विभाव्यते बोधतः न ॥ ४८ ॥

॥ समाधिसे प्रथम सम्पूर्ण सचराचरजो जगत् [तिसकों] ओंकारमात्रही चिन्तवनकरै निश्चयकरके प्रणव नामहै [अरु] जगत् ही नामीहै [सो नाम-नामीभी] अज्ञानवशसे कहतेहैं ज्ञानसे नहीं ॥ ४८ ॥

अ भी अन्यनहीं तथाच "अनन्तरमबाह्यं" "सर्वंखल्विदं-ब्रह्म" । इत्यादि श्रु० तथा छां० उ० विषे ॥ ४९ ॥

॥ भावार्थश्लोक ४८ मेंका ॥

हे लक्ष्मणजी अब सर्वउपासनासे श्रेष्ठ जो प्रणव १ उपासनाहै तिसकेद्वारा जिसप्रकार सर्वात्मभावसे एकात्मअनुभवविचारकहतेहैं तिसकों सावधानतासे श्रवण करो । हे प्रियदर्शन जो विवेकी आत्मजिज्ञासु पुरुषहै सो निर्विकल्पसमाधिकोंप्राप्तहोनेके १। प्रथम २। सम्पूर्ण ३ स्थावरजंगमरूप ४। जगत्कों ५। अर्थात् ब्रह्मासे तृणपर्यंत एक। ओंकारमात्रही ६। चिन्तवनकरै ७। तथाच

ओंकारएवेदसर्वम् । छां०उ०के पूर्पादकविषे । अथवा । ओमित्येकाक्षरमिदꣳसर्वं । मां०उ०विषे । क्योंजो नि-श्चयकरके प्रणवजोओंकारसो१९। नामहै१०। अरु ज-गत्ही११।१२। नामीहैं१३॥ तथाच "तस्योपव्याख्यानंभूतं भवद्भविष्यदितिसर्वमोंकारएव"। मां०उ०विषे ॥ अर्थात् ओंकार नामहै अरु जगत् नामीहै ताते निर्विकल्पस-माधिके पूर्व जगत्कों ओंकाररूपही चिंतनकरे सो नाम नामी भी मुमुक्षुकों समझावनेकेअर्थ आचार्योंने कल्प-नाकियाहै वास्तवमें नाम नामीका भेद भी। अज्ञानव-शासे१८। कहतेहैं१५॥ अर्थात् जिज्ञासुके अज्ञाननाशा-र्थकहतेहैं। ज्ञानसे१६। नहीं१७॥ अर्थात् जब जिज्ञासु कों आत्मसाक्षात्कार अपरोक्षज्ञानहोताहै तब नाम ना-मी यहसंज्ञा भी रहती नहीं केवल एक अद्वैत परमशां-त शिव आत्मतत्व ही भासताहै । तथाच "शिवं शान्तम द्वैतं चतुर्थं मन्यन्ते स आत्मा स विज्ञेयः। मां०उ०में॥ ८६॥

॥ भावार्थश्लोक८६मेंका ॥

हे लक्ष्मणजी यहजो वर्णात्मकओंकारहै तिसके२ तीन अक्षरहैं, अकार, उकार, मकार, अरु इसका-वाच्यजो जगत्है तिसके तीनपादहैं, स्थूल विराट, सूक्ष्म हिरण्यगर्भ, कारण अव्याकृत, जिनके अभिमानी तीन-देवताहैं क्रमसे, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र । अरु इस ओंकार का लक्ष्यजो आत्माहै तिसकी तीन मात्राहैं, जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, इन तीनोंके अभिमानी आत्माकों क्रमसे

॥अकारसंज्ञः पुरुषो हि विश्वको ह्युकारकस्तै-॥
॥जस ईर्यते क्रमात्। प्राज्ञो मकारः परिपठ्यते॥
॥ऽखिलैः समाधिपूर्वं न तु तत्त्वतो भवेत्॥४९॥

॥हि विश्वकः पुरुषः अकारसंज्ञः हि तैजसः क्रमात् उकारः ईर्यते। अखिलैः प्राज्ञः मकारः परिपठ्यते। [एतत्] समाधिपूर्वं तत्त्वतः तु न भवेत्॥ ४९॥

॥निश्चयकरके विश्व पुरुष अकारसंज्ञकहै अरु तैजस क्रमसे उकार [ऐसा] कहतेहैं [अरु] सम्पूर्ण [ज्ञानवानोंकरके] प्राज्ञ। मकार कहाजाताहै [ऐसर्व] समाधिसेपूर्वहै वास्तवसे तो नहीं होताहै ॥ ४९॥

विश्व, तैजस, प्राज्ञ, कहतेहैं। ताते अक्षर पद मात्रा इन तीनोंका एक ही पर्यायहै ताते वाचक जो वर्णात्मक ओंकार तिसका जो वाच्य समष्टि व्यष्टि जगत् सो परस्पर अभेदहै एतदर्थ। निश्चयकरके १। जाग्रदभिमानी २ विश्व ३। पुरुष ३। अकारसंज्ञकहै ४। तिसकी स्थूलविराडाभिमानी ब्रह्माकेसाथ एकताहै। अरु ५। स्वप्नाभिमानी तैजसको ६। क्रमसे ७। उकार ८। ऐसा ९। कहतेहैं १०। तिसकी सूक्ष्माभिमानी हिरण्यगर्भविष्णुकेसाथ एकताहै। अरु सम्पूर्ण ११। ज्ञानवान् सर्व प्राज्ञको १२। मकार १३। कहतेहैं १४। अर्थात् सुषुप्त्यभिमानी प्राज्ञकी अरु अ-

व्यक्ताभिमानी रुद्रकी मकारमात्राकेसाथ एकताहै। सो यहसर्व। निर्विकल्पसमाधिकेपूर्वहै १५॥ अर्थात् यावत् १ अमात्रिक सर्वाधिष्ठान निर्विशेष आत्मस्थितिकों न प्राप्तहोय तावत् ही हैं। वास्तवसे १६। तो १७। नहीं १८। होते १९। अर्थात् जब निर्विशेष सर्वाधिष्ठानआत्माविषे स्थितहोताहै तिसनिर्विकल्पसमाधिविषे स्थूल सूक्ष्म कारण, ब्रह्मा विष्णु रुद्र, जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति, विश्व तैजस प्राज्ञ, अकार उकार मकार, इत्यादि विशेषताका भेद भावकुछ भी नहीं होता ॥ ४९ ॥

हे सौम्य जब जिज्ञासु पुरुष समाधिविषे स्थितहोय तब ओंकारका अरु आत्मतत्वका विचारकरै जो यह १ तीनमात्राहैं सो आत्मासे भिन्ननहीं अरु आत्माआप अमात्रिकहै। अर्थात् मात्राविषे आत्माका अन्वयहै १ अरु आत्माविषे मात्राका व्यतिरेकहै। जैसे अलातचक्र [बनेटी] के अग्निबिंदुका चक्रकेसाथ अन्वयहै। अरु बिंदुकेविषे चक्रका व्यतिरेकहै तैसे। ताते आत्माके अन्वयद्वारा मात्राआत्मरूपहै अरु आप आत्मा अमात्रिकहै। एक बुद्धिकी गुणविषमताकरके मात्राकीविषमता भासैहैं तिसकरके आत्मा विश्व तैजस प्राज्ञ भावकों प्राप्तभयाहैं तिसकरके जाग्रत् स्वप्नविषे स्थूल सूक्ष्म जगत्कों रचताहै अरु तिसका अभिमानी होकर भोक्ता है। अरु सुषुप्तिमें सर्वको लयकरके अभोक्ताहुआ आनन्दकों भोक्ताहै। ताते स्थूल सूक्ष्म संसार कारणसुषुप्ति

॥ विश्वं त्वकारं पुरुषं विलापयेदुकारमध्ये ब-॥
॥ हुधा व्यवस्थितं । ततो मकारे प्रविलाप्य तैजसं ॥
॥ द्वितीयवर्णं प्रणवस्य चान्तिमे ॥ ५० ॥
॥ मकारमप्यात्मनि चिद्घने परे विलापयेत् प्रा-॥
॥ ज्ञमपीह कारणम् । सोऽहं परं ब्रह्म सदा वि-॥
॥ मुक्तिमद्विज्ञानदृक् मुक्त उपाधितोऽमलः ॥ ५१ ॥

॥ बहुधा व्यवस्थितं विश्वं अकारं पुरुषं तु उकारमध्ये विलापयेत् ततः प्रणवस्य द्वितीयवर्णं तैजसं [उकारं] च अन्तिमे मकारे प्रविलाप्य ॥ अपि च प्राज्ञं कारणं मकारं अपि इह परे चिद्घने आत्मनि विलापयेत् [ततः] सः अहम् सदा विमुक्तिमत् विज्ञानदृक् उपाधितः मुक्तः अमलः परं ब्रह्म [इतिभावयेत्] ५०-५१

॥ बहुतप्रकारसे स्थित विश्वसंज्ञक अकार पुरुषको तो उकारमें लयकरे तदनन्तर प्रणवका द्वितीयवर्ण तैजससंज्ञक [उकारको] भी पिछलेअक्षर मकारमें लीनकरे ॥ पुनः प्राज्ञसंज्ञक कारण मकारको भी इस पर चैतन्यघन आत्माविषे विलीनकरे । [तदनन्तर] सो मैं सर्वकाल नित्यमुक्त विज्ञानदृष्टि उपाधिसे रहित निर्मल पर ब्रह्म–हौं [ऐसीभावनाकरे] ॥ ५० ॥ ५१ ॥ सर्वंखल्विदंब्रह्म ॥

हे लक्ष्मणजी जो बुद्धिमान् जिज्ञासु पुरुषहै सो आत्मदेवकी प्राप्तिकेलिये यहविचारकरै जो। बहुतप्रकारनानारूपसे १। स्थित २। विश्वसंज्ञक ३। अकार ४। पुरुषकों ५। तो ६। उकारविषे ७। लीनकरै ८। तदनन्तर ९। ओंकारका १०। द्वितीयवर्णजो ११। सूक्ष्मतैजससंज्ञक उकारको १२। भी १३। प्रणवके अन्तको अक्षर १४। मकारविषे १५। लीनकरै १६। पुनः तिसकेअनन्तर १७। प्राज्ञसंज्ञक १८। कारण १९। मकारकों २०। भी २१। ब्रह्म २२। सर्वसे पर २३। चैतन्यघन २४। आत्माविषे २५। लीनकरै २६। तदनन्तर। सो २७। सर्वाधिष्ठान। मैं २८। सर्वकाल २९। नित्यमुक्त ३०। सर्वत्रविज्ञानदृष्टि ३१ सर्वउपाधिसे ३२। रहित ३३। शुद्धनिर्मल ३४। प्रकृतिसेपर ३५। साक्षात् ब्रह्म हों ३६॥ तथाच "अयमात्मा ब्रह्म" "असंगोह्ययंपुरुषः" "नलिप्यतेकर्म्मणापापकेनेति" "शुद्धमपापविद्धं" "शिवमद्वैतं चतुर्थंमन्यन्ते स आत्मा स विज्ञेयः" "अहंब्रह्मास्मि"। इत्यादि श्रुतिके प्रमाणसे अहंब्रह्म भावनाविषे प्रत्याहृतकरके सर्वउपाधिकेअभावसे निर्विकार निराकार अपनेआपआत्माकों प्राप्तहोय।

हे सौम्य पूर्वकही जो मात्राओंकी लीनता तिसको व्यष्टि समष्टि की एकतासे पुनः सविस्तर कहते हैं तदनन्तर प्रणवोपासक सप्तसिद्धान्तिओंके उपासनाक्रम अरु मात्राओंके क्रम अरु प्रणवकेनामोंके अर्थक्रम। इत्यादि प्रणवोपासना तुमारेबोधार्थ

संक्षेपमात्र निरूपणकरतेहैं तिसको सावधानताते श्रवणकरो ॥ ५० ॥ ५१ ॥

हे सौम्य प्रथमकहा कि अकार जो प्रथम मात्राहै तिसको उकार दूसरी मात्राविषेलयकरै तिसका अर्थ यहहै जो अकार जागृत्रूप जगत्है अरु विश्वइसका अभिमानीहै तिसको वैश्वानर भी कहतेहैं अरु ब्रह्मा इसका देवताहै सत्वगुणहै। ऐसी जो प्रथम अकार मात्राहै तिसकों उकार सूक्ष्म तैजसरूपजानो। अर्थात् जागृत् जगत्कों स्वप्नरूपजानो अरु स्थूल जागृदभिमानीकों सूक्ष्म स्वप्नाभीमानीतैजसका स्वरूपजानो अरु ब्रह्माजो जागत्का देवताहै तिसकों विष्णु जो सूक्ष्म जगत्का देवताहै तिसहीका स्वरूपजानो। अर्थात् यह जो स्थूल जागृत् जगतहै सो सूक्ष्म स्वप्नरूपहै अरु जागृदभिमानी विश्वकों स्वप्नाभिमानी तैजसरूपजानो अरु ब्रह्मा विष्णुरूपजानो। इसप्रकारके चिंतनसे अकारकों उकारविषे लयकरो। अरु यह जो सूक्ष्म उकारमात्राहै कि जिसविषे स्थूल अकारमात्रा लीनभईहै उस उकारमात्राकों मकारमात्राविषे लीनकरो अर्थात् सूक्ष्म स्वप्नजगत्को सुषुप्तिरूपजानो अरु स्वप्नाभिमानी तैजसकों सुषुप्त्यभिमानी प्राज्ञरूपजानो अरु विष्णु जो सूक्ष्मका देवताहै तिसको कारणका देवता रुद्ररूपजानो। अर्थात् स्वप्न सुषुप्तिरूपहीहै अरु तैजस प्राज्ञरूपहै अरु विष्णु रुद्ररूपहै। इसप्रकारके चिन्तनसे सूक्ष्म उकारकों कार-

ण मकारविषे लीनकरे। अब कारण मकार जो तीसरी मात्राहै तिसकों भी अमात्रिकरूप परमात्माविषेलयकरो अर्थात् सर्व परमात्म रूपहीजानो। तथाच "सर्वंखल्विदं ब्रह्म" "ओंकारएवेदंसर्वम्" "ब्रह्मैवेदंसर्वम्" "पुरुषएवेदंसर्वम्" "आत्मैवेदंसर्वम्" "अहमेवेदंसर्वम्" ।इत्यादिश्रुतिः। जो यह सर्व परमात्मा हीहै। अर्थात् यह जाग्रत् रूपजगत् संयुक्त स्थूलशरीर अरु विश्व इसका अभिमानी अरु ब्रह्मादेवता इनसर्व को सूक्ष्म उकारविषेलीनकरो सो इसप्रकारजानो जो उकाररूप सूक्ष्म स्वप्न संपूर्ण लिंगशरीरोंका अभिमानी तैजस् विष्णुदेव हिरण्यगर्भहै जिससे सम्पूर्ण स्थूल-शरीर विराट्पुरुष ब्रह्मादेवता जाग्रदावस्था फुरीहै ताते यहसर्व वोहीरूपहै। तथाच "हिरण्यगर्भःसमवर्तताग्रे"। इति मंत्रवर्णे। इसप्रकारके विचारसे अकारमात्रास्थूल जगत्को सूक्ष्म उकाररूपजानो। अरु जो सूक्ष्म उकारमात्राहै तिसकों कारण मकारमात्रारूपजानो। अर्थात् सर्व कारणशरीर सुषुप्तिअवस्था अरु तिनका अभिमानीप्राज्ञ अरु रुद्रदेवता सर्वकाकारण अव्याकृत तिससे सूक्ष्मशरीर स्वप्नावस्था तिसका अभिमानी तैजस तिनसर्वकी समष्टिताका अभिमानी हिरण्यगर्भ सो फुरा है। तथाच "अव्याकृतं वा इदमग्र आसीत्" "हिरण्यगर्भो-जायमानः" इतिश्रुतेः ताते सर्व अव्यक्तरूपहै। तथाच "अव्यक्तादीनिभूतानि"। गीता विषे। ऐसीजो मकारमात्रा है। अर्थात् समस्त कारणशरीरोंकी समष्टिता अव्या-

सान अरु सुषुप्तिअवस्थाकी समष्टिता अविद्या अरु सं-
पूर्ण सुषुप्त्यभिमानी प्राज्ञकी समष्टिता रुद्रदेवता, यह स-
र्व मकारमात्रारूप कारण सो अर्धमात्रारूप अर्थात् अ-
मात्रिक परमात्मा चैतन्यघन निर्विशेष सर्वाधिष्ठान आत्म
से ही फुरेहैं ताते आदिकारण प्रकृति अरु तिसका का-
र्य स्थूल सूक्ष्म सम्पूर्ण जगत् सो सर्वरूपसे एक परमात्मा
ही इसप्रकारसे प्रकाशित होरहाहै। अर्थात् अस्ति भा-
ति प्रिय रूपसे एक परमात्माही सुशोभितहै तिससे भि-
न्न द्वैत कुछ नहीं। तथाच। "सदेवेदं सर्वम्" "चिदेवेदंसर्वं"
"पुरुष एवेदंसर्वं" "ब्रह्मैवेदं विश्वमिदंवरिष्ठम्" "मायामात्र-
मिदंद्वैतं" "नेहनानास्ति किंचन"। इत्यादिश्रुतिः। ताते सर्व
ब्रह्मरूपहीहै। हे सौम्य इसप्रकार विचारसे अकार उ-
कार मकार यह तीनमात्रारूप जो स्थूल सूक्ष्म कारण रू-
प प्रपंचहै सो सर्व ओंकार परमात्मारूप ही है तिससे
भिन्न रंचकमात्र भी नहीं। जैसे जलसे भिन्न समुद्र अरु
तरंग लहर झाग आदि कुछनहीं। जैसे अग्निसेभिन्न उ-
ष्णता दाहकता प्रकाशतादि कुछनहीं। वायुसे भिन्न स्पं-
द निस्पंदतादि कुछनहीं। आकाशसे इतर अवकाश-
कारूप कुछनहीं। तैसेही ओंकारके लक्ष्यपरमात्मा-
से इतर वाच्यरूप जगत् कुछ नहीं। ताते सम्पूर्ण जगत्-
को एक ओंकार परमात्मारूपजानकर जिज्ञासुपुरुष मो-
क्षकेलिये निर्विकल्पसमाधिको प्राप्तहोनेसे पूर्व भावना
करे। हे सौम्य और भावना उपासनाहै सो सर्व ओंकार

की अंगभूत उपासनाहैं अरु ओंकारकीजो उपासना-
है सो अंगी उपासनाहै । अर्थात् ब्रह्मकी उपासनामें अ-
न्यजे उपासनाहैं सो गौणउपासनाहैं अरु ओंकारकी
जोउपासनाहै सो मुख्य उपासनाहै । अरु ओंकार जो
नामहै परमात्माका सो मुख्यनामहै अरु औरजे नाम-
है सो गौणहै क्योंकि गुणोंके सम्बन्धसे हैं ताते गौणहैं
जैसे सूर्यके कर्त्ता ईश्वर आदिजे नामहैं सो गौणहैं अ-
रु भानु जो नामहै सो मुख्य स्वाभाविक नामहै । अथवा
देवदत्तविषे जे पिता पुत्र भ्राता आदिक नामहैं सो गौ-
णहैं । अर्थात् गुणसम्बन्धसे कल्पितहैं । अरु मुख्य
जो नामहै सो स्वाभाविक मुख्यहै । तैसेही ओंकार जो
नामहै परमेश्वरका सो मुख्यनामहै ताते ओंकारकी
जो उपासनाहै सो प्रत्यक्षरीत्या वाच्यकी अरु अप्रत्यक्ष
रीत्या लक्ष्यपरमात्माकी मुख्य उपासनाहै ताते सर्वउ-
पासनामें श्रेष्ठ ओंकारकी ही उपासनाहै और नहीं ।
सो ओंकार ब्रह्मरूपहै । तहां एक शब्दब्रह्महै एक प-
रब्रह्महै । तहां जो मन बुद्धि इंद्रियादिकोंकरकेजानने
विषे आवताहै सो सर्व शब्दब्रह्मके अन्तर्गतहै अरु
सोई ओंकारका वाच्यहै । अरु जो मन बुद्धि इंद्रियादि
कोंका विषय नहोत सर्वका प्रकाशक साक्षी विज्ञा-
नघन चैतन्य आत्माहै सोई परब्रह्म ओंकारका लक्ष्य
है । तिसलक्ष्य की जो उपासनाहै सो सो वाच्यरूप ओंका-
रकी उपासनाद्वाराही होतीहै । जैसे मनकी संतुष्टतार्थ

शरीरके लालन पालनसे होतीहै तैसे । तातें जिज्ञासु२ पुरुष अपनेआप सत्यस्वरूप आत्माकी प्राप्तिकेलिये ओंकारकी उपासनाकरें यही उपासना सर्व वेदोंने कहीहै तथाच "सर्वेवेदायत्पदमामनन्ति तपांसिसर्वाणिचयद्वदन्ति यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यंचरन्ति तत्तेपदं संग्रहेणब्रवीम्योम्" । क०उ०की द्वितीयवल्लीकी १५ श्रुतिमें । तथा "ओमित्येतदक्षरमुद्गीथमुपासीत" । छा०उ०के आदिमें । इत्यादि अनेकश्रुतियोंने मोक्षार्थ प्रणवोपासनाही मुख्य कहीहै यही मोक्षार्थीको परम आलम्बनहै । तथाच "एतदालम्बनंश्रेष्ठमेतदालम्बनंपरं एतदालम्बनंज्ञात्वा ब्रह्मलोके महीयते" । क०उ०की २ वल्लीकी १७ श्रुतिमें । अरु सर्वसिद्धान्तकारोंनेभी ओंकारकी उपासना प्रतिपादन कियाहै सो अब क्रमकरके जिस२ प्रकार शास्त्रकारोंने ओंकारकी उपासना किया अरु कहाहैं तिससर्वको संक्षेपमात्र तुम्हारे जाननेके अर्थ कहतेहैं तिसको सावधानतासे श्रवणकरो । हे सौम्य प्रथम ४८-४९-५०-५१ । इन चार श्लोकोंकरके ओंकारके स्वरूप विचाररीतिसे जो आत्मतत्व निरूपणकियाहै सो मांडूक्यउपनिषद्की रीति अनुसार किंचित् कहाहै । अरु अब और सिद्धान्तकारोंके मतानुसार पृथक्२ रीतिसे ओंकारकी उपासना कहीहै तिसको भी संक्षेपमात्र श्रवणकरो

हे सौम्य सम्पूर्ण शास्त्रके सातसिद्धान्तहैं तहां प्रथम हिरण्यगर्भ ब्रह्माजी का सिद्धान्त।१। दूसरा

कपिलदेवजीका सिद्धान्त।२॥ तीसरा अपान्तरतम मुनिका सिद्धान्त।३॥ चतुर्थ सनत्कुमारोंका सिद्धान्त।४॥ पंचम ब्रह्मनिष्ठोंका सिद्धान्त।५॥ षष्ट पशुपति शिवजीका सिद्धान्त।६॥ सप्तम पंचरात्र विष्णुजीका सिद्धान्त।७॥ इसप्रकार सात सिद्धान्तहैं तहां सातोंसिद्धान्तकारों ने तीनमात्राके तीन२ भेदसे ओंकारके नौ९-२ भेदकर उपासना कियाहै तातें सातों सिद्धान्तकरके ओंकारकी मात्राके तिरसठ ६३ भेद भयेहैं। अब इनके भेद९ कहतेहैं। जिस सिद्धान्तीने नव नाम रूप मात्राकर एक ओंकारकी उपासनाकियाहै तैसे सातो सिद्धान्तियोंने पृथक् २ नामरूपकरके एक ओंकारकी उपासनाकियाहै तिसकों अब पृथक्२ कहतेहैं सो सावधानतासे सुनो॥

॥१॥ प्रथम हिरण्यगर्भ सिद्धान्त॥

हे सौम्य हिरण्यगर्भके मतवादी पुरुष ऐसा कहतेहैं कि जिस जिज्ञासुकों परमात्मयोग पावनेकी इच्छाहोय। अर्थात् परमात्मायोगकहिये जीवात्मा अरु परमात्माकी एकतारूप योग वांछितहोय सो ओंकारकी उपासना इसप्रकारकरे जो ओंकार, त्रिमात्रारूपहै, त्रिब्रह्मरूपहै,९ त्रि अक्षररूपहै,। तहां अग्निवायुसूर्य यहतीन ओंकारकी मात्राहैं। अरु ऋग यजु सामवेद यह तीन ओंकारके ब्रह्महैं। अरु अकार उकार मकार यह तीन ओंकारके अक्षरहैं। इस प्रकारकाहै रूप जिसका ऐसाजो ओंकारहै सोई परमपदहै। अर्थात् मुमुक्षुकरके पावनेयोग्यहै

अरु ओंकारही परमगतिहै जो पुरुष ऐसाजानके ओंका-
रकी उपासनाकरतेहैं सो मोक्षको प्राप्तहोतेहैं पुनः जन्म-
मरणको नहीं प्राप्तहोते। अरु प्रथम जो अग्नि वायु सूर्य।
यहतीनमात्राकहीहैं सो व्यष्टिमें जीव ईश्वर आत्मा जान-
ने तहां अग्निरूप जीवहै सो वैश्वानररूपसे सर्वदेहमें स्थि-
तहै। अरु प्राणवायु सूत्रात्मा हिरण्यगर्भ ईश्वरहै सो स-
र्व देहोंमें व्याप्तहोय सर्वको धाररहाहैं। अरु सूर्य सर्वका-
प्रकाशक साक्षी आत्माहै। अरु ऋग यजु साम इनती-
नों वेदकरके शब्दब्रह्म जानना। अरु अकार उकार म-
कार यहजो तीन अक्षरहैं तिनकरके जाग्रत् स्वप्न सुषु-
प्ति यह तीन अवस्थारूप प्रपंच जानना। यहसर्व ओंकार
रूपहीहै ऐसा जानके जो मुमुक्षु ओंकारब्रह्मकी उपासना
करतेहैं सो पुरुष परमपदको प्राप्तहोतेहैं पुनः वो संसार
विषे नहीं आवते। इसप्रकार हिरण्यगर्भसिद्धान्तकी रीति-
से प्रणवोपासनाहै॥ इति हिरण्यगर्भसिद्धान्तः॥ १॥

॥२॥ दूसरा कपिलदेव सिद्धान्त॥

हे सौम्य सांख्यशास्त्रकेकर्ता कपिलदेवजीके सिद्धा-
न्तविषे इसप्रकारकहाहै कि जब मुमुक्षुपुरुष तीनज्ञा-
न तीनगुण तीनकारण इन नौ भेदसे जो एक ओंकार
को जाने सो मुक्तिहोय। अब इसका अर्थसुनो तीनप्र-
कारका जो ज्ञानहै तहां एक व्यक्तज्ञानहै दूसरा अव्यक्त
ज्ञानहै तीसरा ज्ञेयज्ञानहै। तहां यह जोकुछ स्थूल आ-
काश वायु अग्नि जल पृथिवी यहपंच भूत अरु इन-

का कार्य घटपट देहादि प्रपंचहै सो सर्व व्यक्तरूपहैं ग्रा
गमापायी अनित्यहै कभी भावहोतेहैं कभीअभावहोतेहैं
ताते सत्यनहीं असत्यहै । इनका जो ज्ञानहै सो व्यक्तज्ञान
है । अरु इनभूतोंका जो सूक्ष्मरूप तन्मात्रा शब्द स्पर्श
रूप रस गंध अरु अहंकार महत्तत्व अरु प्रकृति, यहस
र्व अव्यक्तरूपहैं ताते इनकाजो ज्ञानहै सो अव्यक्तज्ञानहै
अरु ज्ञेय [जाननेयोग्य] चैतन्यपुरुषहै तिसकाजो ज्ञान
है सो ज्ञेयज्ञानहै । इसप्रकार व्यक्त अव्यक्त ज्ञेय इनती
नोंका जो ज्ञानहै सोई तीनप्रकारकाज्ञानहै । हे सौम्य अ
ब इनकरके क्या जाननाहै सो सुनो जो मूल प्रकृतिहै सो
अव्यक्तहै सोई सर्वका कारणहै कार्य किसीकानहीं । ९
अरु महत्तत्व अहंकार अरु पंच तन्मात्रा यह सातों ८
कारणरूपभीहैं अरु कार्यरूप भी हैं ताहां कार्य तो प्र
कृतिकेहैं अरु कारण १६ षोड़श पदार्थोंकेहैं ताते इन
कों प्रकृतिविकृति भी कहते हैं । अरु पांचभूत दशइंद्रि
य एक मन, यह १६ षोडश पदार्थ कार्यरूपहीहैं कार
ण किसीकानहीं ताते इनकों विकृति भी कहतेहैं । अ
रु पुरुषरूपजो चैतन्यहै सो नतो किसीकाकारणहै न
किसीका कार्यहै केवल स्वयंज्योति सर्वकासाक्षी निरा
कार निर्विकार कूटस्थहै । अर्थात् व्यक्तजो स्थूल प्रपंचहै
सो कार्यरूपहै । अरु महत्तत्व अहंकार पंच तन्मात्रा
यह कार्य अरु कारण उभयरूपहै । अरु अव्यक्तप्रकृ
ति कारणरूपहै । अरु पुरुष ज्ञानरूपहै । इनकों ज्यों-

का यों जानना जिसका नाम तीनप्रकारका ज्ञानहै ॥ अरु
सत्व रज तम, यह तीन गुणहैं तहां सत्वगुणसे ज्ञान अ-
रु दैवीसंपदा होतीहै । अरु रजोगुणसे काम रागादिहोते
हैं । अरु तमोगुणसे प्रमाद आलस्य निद्रा क्रोध हिंसा॰
आदिहोतेहैं । पुनः सत्वगुणसे देवता आदि होतेहैं । रजो
गुणसे मनुष्यादिहोतेहैं । अरु तमोगुणसे पशु वृक्षा-
दिहोतेहैं । पुनः सत्वगुणसे स्वर्गादि उत्तमलोकहोतेहैं । र-
जोगुणसे मनुष्यादि मध्यमलोकहोतेहैं । तमोगुणसे॰
नरकादि अधमलोकहोतेहैं । इसप्रकार तीनगुणोंकास-
र्व कार्य जानना। यह तीन ओंकारके गुणहैं ॥ अरु तीन
कारणहैं तहां एकमन, दूसरी बुद्धि, तीसरा अहंकार
इनहीं करके सर्व प्रवृत्तिहोतीहै ताते यह तीनों कारणहैं॥
हे सौम्य यह सर्वकहनेसे यह जानना जो ओंकारब्रह्महै
सोई अव्याकृतरूपहै सोई व्याकृतरूपहै अरु सोई पुरुष-
रूपहै । अरु कारणरूप भी वोहीहै कार्यरूप भी वोहीहै
अरु सर्वाधिष्ठान साक्षीरूप भी वोहीहै । ताते सर्व ओं-
काररूपहीहै । ओंकारविषे जो दोमात्राहैं अकार अरु
उकार जिसको कार्यकारणात्मक प्रकृतिरूप जानना अ-
रु यह व्यंजन जो मकार अनुस्वारहै सो चैतन्यपुरुषरू-
पहै । अरु ओंकार तीनमात्राकरके त्रिगुणरूपहै एतदर्थ
सम्पूर्णप्रपंच त्रिगुणात्मक एक ओंकारहीहै । अरु व्यंज-
नरूप निर्गुण परमपुरुषहै ताते सर्व ओंकारहीहै । अ-
रु इस ओंकारकावाच्य प्रकृत्यात्मक प्रपंचरूपहै। अरु

स्वरूप सर्वकासाक्षी प्रकाशक अधिष्ठान सच्चिदानन्द आत्माहै। जो जिज्ञासुपुरुष ऐसा जानके ओंकारकी उपासनाकरतेहैं सो सर्वबंधनोंसे मुक्तहोय परमपदको प्राप्त होतेहै॥ इति कपिलदेव सिद्धान्तः॥ २॥

॥३॥तीसरा अपान्तरतमसिद्धान्त॥

हे सौम्य अपान्तरतम मुनि कहतेहैं कि जो पुरुष ओंकारब्रह्मको त्रिमुख तीनदेवता तीनप्रयोजन रूपसे जानताहै अरु ओंकारब्रह्मकी उपासनाकरताहै सो पुरुष मुक्तहोताहै। अब इनका अर्थसुनो। तीन जो अग्निहैं सोई तीन मुखहैं तहाँ एक गार्हपत्य अग्निहै, दूसरा दक्षिणा अग्निहै, तीसरा आहवनीयअग्निहै। तहां गृहस्थाश्रमका महानस [रसोईकेस्थानविषै] जिसअग्निकरके अन्न पक्वहोताहै तिसको गार्हपत्य अग्निकहते हैं। अरु दक्षिणाग्नि उसको कहतेहैं जो अग्निहोत्रका अग्निहै, सो इसप्रकारहोताहै कि जिसदिन इसपुरुषका यज्ञोपवीत संस्कारहोताहै तिस दिवस जो वेदोक्तअग्नि स्थापितहोताहै तिसका वेदके मन्त्रकरके सविधान पूजनकरना अरु तिसविषे यथाकाल आहुति करना। इस प्रकार अग्निहोत्र होताहै तिसको या प्रयोगके अग्निको दक्षिणाग्नि कहतेहैं। अरु आहवनीयअग्नि उसको कहतेहैं कि जिस अग्निविषे यज्ञहोताहै अरु सर्व पुरुषार्थ कामनाका साधनरूपहै। यह जो उक्त तीन अग्नि हैं सो इनहीका नाम त्रिमुख कहतेहैं॥ अरु ब्रह्मा वि-

ष्णु रुद्र यह तीन देवताहैं। अरु धर्म अर्थ काम यहती-
न प्रयोजनहैं॥ अर्थात् जो तीनों अग्निकहीहैं सो जग-
त्के उत्पत्ति पालन संहार का हेतु[कारण]है। तहां आहव-
नीयअग्निमें यज्ञाहुतिद्वारा मेघहोतेहैं मेघोंकेद्वारवर्षाहो-
तीहै। तथाच "यज्ञाद्भवतिपर्जन्यः" इत्यादि गी॰ अ॰३
१४ के श्लोकमें। वर्षाद्वारा अन्न अन्नद्वारा सर्वभूत प्रा-
णी होतेहैं ताते आहवनीयअग्निउत्पत्तिका हेतु,कारण
है। अरु गार्हपत्य जो महानस [पाकशाला] का अग्नि
है सो अन्तर बाह्य अन्नपरिपक्वकरताहै ताते पालनका
हेतु,कारणहै। अरु अग्निहोत्री यजमानके शरीरका
अंतमेंदाह उसी अग्निहोत्रकी अग्नि विषे होताहै ताते द-
क्षिणाग्नि संहारका हेतु,कारणहै, ताते यह तीनों अग्नि
जगत्के उत्पत्ति पालन संहार का हेतु,कारणहैं,अरु
सर्व जगत्के निर्वाहक ईश्वरहै एतदर्थ इनको त्रिमुख
कहतेहैं॥ अरु ब्रह्मा विष्णु रुद्र यहजो तीन देवताहैं
सो इनकरके भी जगत्का उत्पत्ति पालन संहार होता
है। तहां ब्रह्मा उत्पत्तिकर्ताहै विष्णु पालनकर्ताहै रु-
द्र संहारकर्ताहै ताते तीनों देवता भी जगत्के कारण
अरु जगत् के निर्वाहक ईश्वररूपहैं। अरु धर्म अर्थ
काम यहजो तीन प्रयोजनहैं सो भी जगत्के हेतुहैं। ताते
सर्व जगत् ओंकाररूपहै ओंकार ही जगत्रूपहै ओंकार
ही जीव ईश्वर ब्रह्मरूपहै जो इसप्रकार जानके ओंकार
की उपासनाकरतेहैं सो मोक्षको प्राप्तहोतेहैं इस प्रकार

अप्रान्तरतम मुनिकहतेहै ॥ इति अपांतरतम तृतीयसिद्धांत

॥ ४ ॥ चतुर्थ सनत्कुमारसिद्धान्तः ॥

हे सौम्य सनत्कुमार सिद्धान्तवाले प्रणवोपासना इसप्रकार करतेहैं जो तीनकालरूप तीनलिंगरूप तीनसंज्ञारूप २ इसप्रकारजानके जो ओंकारकी उपासनाकरतेहैं सो मुक्तहोते हैं । अब इसका अर्थसुनो २ तीनकाल उस २ को कहतेहैं जो भूत भविष्य वर्तमान रूपहैं । तहां भूतकाल उसको कहतेहैं जो पूर्व व्यतीतभयाहै । अरु वर्तमानकाल उसकोंकहतेहैं जो वर्त्तताहै । अरु भविष्यत्काल २ उसकों कहतेहैं जो आगे आवनहारहै । अब इनकाअर्थ सुनो हे लक्ष्मणजी यह जो त्रेतायुगहै तिसके प्रथम सतयुगव्यतीतभया सो भूतकालहै । अरु यहजो त्रेतायुगहै सो वर्त्तमानकालहै । अरु इसके पीछे जो द्वापरयुग आवनाहै सो भविष्यत्कालहै । इस ही प्रकार इस त्रेतायुगविषे जोवर्ष व्यतीतभये सो भूतकालहै । अरु यह जोवर्ष वर्त्तताहै सो वर्तमानकालहै । अरु जो अगलेवर्ष आवनेहैं सो भविष्यत्कालहै । इस ही प्रकार इसवर्षकेमध्येजो मास व्यतीतभये सो भूतकालहै । अरु जो मास वर्त्तताहै २ सो वर्तमानकालहै । अरु जो मास आगेआवनेहैं सो भविष्यत्कालहै । इस ही प्रकार दिवसके प्रहरके घडीके कलाके निमेषके काष्ठादि कालके स्थूल सूक्ष्म अंश हैं तिनसर्वके भूत भविष्य वर्तमान तीन २ रूप जानने । हे सौम्य इसकरके यहसिद्धभयाजो एक ही कालकी तीनसंज्ञाभईहैं ।

तैसेही ओंकारकी अनेक संधी संज्ञाभईहैं परंतु अक्षर १
ओंकार एकहीहै । इसप्रकार त्रिकालकों जानना । अरु
स्त्री पुरुष नपुंसक यह तीन इसके लिंगहैं । अरु वहि
संधी, मध्यसंधी, आन्तसंधी यहतीन इसकी संधीहैं ।
सो यह विश्व तैजस प्राज्ञरूपहैं । इस कहनेसे यह जान-
ना जो एक ओंकारही इसप्रकार तीनकालरूप तीनलिं
गरूप तीनसंधीरूप से स्थितहै ताते सर्व ओंकाररूपहीहै
तिसतेभिन्न कुछनहीं । जो जिज्ञासु पुरुष इसप्रकार जान
के ओंकारको उपासनाकरतेहैं सो मोक्षकों प्राप्तहोतेहैं ।
इति सनत्कुमार चतुर्थसिद्धान्तः ॥ ४ ॥

॥ ५ ॥ अथ ब्रह्मनिष्ठसिद्धान्तः ॥

हे सौम्य ब्रह्मनिष्ठ कहतेहैं जो हम ओंकारको तीन
स्थानरूप, तीन पदरूप, तीन प्रज्ञारूप, जानके उपासना
करतेहैं । तहां, हृदय, कंठ, मूर्द्धा, यह तीन स्थानहैं ॥ अ-
र्थात् ओंकार उच्चारकरनेसे इन तीनोंस्थानोविषे प्रकट
होताहै ताते यह तीन इसके स्थानहैं । अरु जागृत स्व-
प्न सुषुप्ति यह तीन इसके पदहैं । अरु, वहिःप्रज्ञा, अन्तः
प्रज्ञा, घनप्रज्ञा, यह तीन इसकी प्रज्ञाहैं ताते तीनोंप्रका
रसे एक ओंकारही है । अरु जो होगया अरु जो है १
अरु जो आगेहोताहै सो सर्व एक ओंकारही है । तथाच
"यद्भूतं भवद्भविष्यदिति सर्वं ओंकारएव" इत्यादि । ताते
तीनस्थानरूप भी, तीन पदरूप भी, तीन प्रज्ञारूप भी एक
ओंकारहीहै इसीसे इसको सर्वव्यापी कहतेहैं । अपना

बहिःप्रज्ञा जो विभुहै सो विश्वरूपहै अरु अंतरप्रज्ञा तैजसहै अरु घनप्रज्ञा प्राज्ञहै ताते तीनप्रकारहोकर सर्व देहोंविषे स्थितहै। तहां स्थूल जो वैश्वानरहै तिस बाहरदृष्टिका भोक्ता विश्वहै। अरु सूक्ष्म अन्तरप्रकृतिका भोक्ता तैजसहै। अरु कारण आनन्दका भोक्ता प्राज्ञहै जो इस तीनप्रकारके भोग भोक्ताकों जानेहै सो मुक्तरूप है। अरु सात्विक प्रकृति जबहोतीहै तब यह जीव बुद्धहोकर स्थूलकों रचताहै अर्थात् जाग्रत् जगत् दृष्टआवता है। अरु जब राजसी प्रकृतिहोतीहै तबतैजसभावकोंप्राप्तहोय अंतर प्रवृत्ति स्वप्नरूप सूक्ष्मजगत् तिसकों रचता है। अरु जब तामसी प्रकृतिहोतीहै तब सर्वका अभाव कर सुषुप्तिस्थानविषे प्राज्ञरूपसे आनंदकों भोक्ताहै। जो इन तीनप्रकारके भोग भोक्ता स्थानकों जाननेवाला चतुर्थ साक्षीहै सोई आत्मा मुक्तरूपहै सर्वसाथ मिलके भी किसीकेसाथ लिपायमाननहींहोता ताते यह जो नौ ९ नामरूपसे स्थितभयाहै सो सर्व ओंकारही है सोई ओंकार सर्व जगत्का कारण संतजनोंने निश्चयकियाहै। अरु वेदविषे भी कहाहै जो ओंकार ही सर्वकों उत्पन्नकरताहै अरु सोई सर्वका ज्ञाताहै सोई ओंकाररूप परमेश्वरहै सोई ईश्वररूपसे सर्वकों उत्पन्न करताहै सोई जीवरूपसे सर्वका भोक्ताहै सोई सर्वकासाक्षी है। ऐसा जो ओंकार, कर्त्ता, भोक्ता, साक्षी रूपहै, तिसकों जो जिज्ञासु उपासना करतेहैं सो मोक्षकों प्राप्तहोतेहैं॥

यह ब्रह्मनिष्ठोंका सिद्धान्तहै। इति ब्रह्मनिष्ठसिद्धान्तः ॥५॥

॥६॥षष्ठः पशुपतिसिद्धान्त॥

हे सौम्य पशुपति शिवजीके मतवादी पुरुष ऐसाकहते-हैं कि जो ओंकारविभु नवनामरूपसेस्थितहै तिसकी हम उपासनाकरतेहैं तहां, तीन अवस्थारूप, तीन भोग्यरूप, तीन-भोक्तारूप, ओंकारहै। तहां तीन अवस्थाओं सुनो प्रथम, शान्त, दूसरी घोर, तीसरीमूढ, यह तीन अवस्थाहैं सो जाग्रत् स्वप्न सुषुप्तिको भी कहतेहैं। अरु इन जाग्रदादि प्रत्येक अवस्थाविषे यह शान्त घोर मूढ तीनोंअवस्था वर्ततीहैं तहां चित्त जाग्रत्‌विषे शान्तरूपहोताहै अरु स्वप्नविषे घोररूपहोताहै अरु सुषुप्तिविषे मूढरूप होताहै। अब इन प्रत्येक अवस्थाके अवान्तरको भी श्रवणकरो। जाग्रत्‌विषे जोपदार्थहै सो ज्यों का त्यों भासताहै तहां जो चित्तकी अवस्थाहै तिस अवस्थाका नाम शान्तअवस्थाहै अरु जाग्रत्‌विषे जो विपर्यय भासताहै, जैसे रज्जुविषे सर्प, तहां चित्तकी अवस्थाका नाम घोर अवस्थाहै। अरु जाग्रत्‌विषे कुछ भी नहीं भासता तहां चित्तकी अवस्थाका नाम मूढ अवस्थाहै॥ तैसे ही स्वप्न अवस्थाविषे जो पदार्थ स्फुरणभयाहै सो तैसाही भासताहै तहां चित्तकी अवस्थाकानाम शान्त अवस्थाहै। अरु स्वप्नविषे औरका और ही भासताहै, जैसे स्फुरणभया हाथी सो भासनेलगा पक्षी, ऐसी जो स्वप्नमें चित्तावस्थाहै तिसका नाम घोर अवस्था कहतेहैं। अरु स्वप्नविषे जो पदार्थस्फुरणभयाहै सो

नहीं भासता अरु जागृतभयेस्मरणमें भी नहीं आवता त-
हां चित्तकी अवस्थाका नाम मूढअवस्थाहै ॥ अरु सुषुप्ति
अवस्थाविषे चित्त लीनभयाहै तिससे जागृतभये कहताहै
जो मैं बडे सुखसों सोया, सो जो सुषुप्तिमें चित्तकी सुखाव-
स्थाहै सो शान्तअवस्थाहै । अरु जो सुषुप्तसे जागृतभया
कहताहै कि मेरेकों अस्तव्यस्तनिद्रा आई सो सुषुप्तिमें चि-
त्तकी घोर अवस्थाहै । अरु जो सुषुप्तिसे जागृत भया कह
ताहै कि मैं ऐसा सोया कि कुछ भी ज्ञान न रही, सो जो सु-
षुप्तिमें चित्तकी अवस्थाहै तिसका नाम मूढ अवस्थाहै ॥
अब इन तीनोंको औरप्रकार भी श्रवण करो । जागृतविषे
जो चित्तको सुखविश्रामहोताहै तिस चित्तावस्थाका नाम २
शान्त अवस्थाहै । अरु जागृतविषे जो दुःखविश्रामहोता
है तिस चित्तावस्थाका नाम घोर अवस्थाहै । अरु जागृ
तविषे जो मूर्छादि अवस्थाहै तिसका नाम मूढ अवस्थाहै
अरु जागृतविषे जो दैवीसंपदा शास्त्रव्यवहार यज्ञ दान २
जप पाठ पूजा से लेके जो सात्विक कर्महै तिसमे चित्तकी
प्रवृत्तिहै जिस अवस्थामें सो शान्त अवस्थाहै । अरु जा-
गृतविषे व्यवहारादि राजसीकर्म होतेहैं चित्तकी जिस २
अवस्थामें तिसका नाम घोर अवस्थाहै । अरु जागृत
विषे जो हिंसादि तामसीकर्महैं तिसकी प्रवृत्तिमें जो २
चित्तावस्थाहै तिसका नाम मूढअवस्थाहै ॥ इसही प्रका
र स्वप्नमें जो सुखानुभवहोताहै चित्तको जिस अवस्थामें
तिसका नाम स्वप्न शान्त अवस्थाहै । अरु स्वप्नविषे जो २

चित्तकों दुःखानुभवहोताहै जिस अवस्थामें तिसका नाम ॥
घोर अवस्थाहै । अरु स्वप्नविषे जो चित्तकी मूर्छादि अचे
त अवस्थाहै तिसका नाम मूढ अवस्थाहै ॥ इसही प्रकार
जो सुषुप्ति अवस्थाविषे सोया भया उसके कहताहै जो मैं ॥
सुखसों सोया मुझकों शान्तिभयी. ऐसी जो सुषुप्ति में चि-
त्तकी अवस्था तिसका नाम शान्त अवस्थाहै । अरु सुषु-
प्तिसे उठके कहताहै कि मैं दुःखसों सोया परंतु मुझकों॥
दुःखभान न भया मैं सोगया. ऐसीजे सुषुप्तिमें चित्ताव-
स्था तिसका नाम घोर अवस्थाहै । अरु सुषुप्तिसे उठके॥
जो कहताहै कि मैं ऐसा सोयाकी मुझकों दुःखसुखकीकु
छ भी खबर नरही. ऐसी जो सुषुप्तिमें चित्तावस्था तिस
का नाम मूढ अवस्थाहै ॥ हे सौम्य अब एकप्रकार औ-
र भी श्रवणकरो । इस जाग्रत अवस्थामें यथार्थ अनुभ-
वसे अपने आप सच्चिदानन्द आत्माविषे जो चित्तकीस्थि
ति तिसचित्तावस्थाकी, अरु तिसकी प्राप्तिकेअर्थ जो श्र-
वणादि साधन तिसविषे चित्तविश्रामकी जो अवस्था॥
तिसका नाम उत्तम मध्यम शान्त अवस्थाहै । अरु वि-
षयोंविषे जो चित्तकी स्थितिहोती नहीं चित्तावस्थाकाना-
म घोर अवस्थाहै । अरु देहाभिमानकरके रागद्वेषादि-
कों विषे जो चित्तकी स्थितिहोती तिसचित्तावस्थाका ना-
म मूढ अवस्थाहै ॥ इसही प्रकार स्वप्नअवस्थाविषे जो॥
धर्मादि सत्वगुणी संपदामें प्रवृत्ति तहां चित्तकी अवस्था
का नाम शान्त अवस्थाहै । अरु विषयोंविषे प्रवृत्ति हो

ना सो चित्तकी घोर अवस्थाहै । अरु स्वप्नविषे हिंसादि आसुरीसंपदाके व्यवहारहोना सो चित्तकी मूढअवस्थाहै ॥ इसहीप्रकार सुषुप्तिविषे ब्रह्मविचारकोंकरताहुआ लीन होताहै तहांजो चित्तावस्थाहै तिसका नाम शान्त अवस्था है । अरु जो विषयभोगके संस्कार स्मृति लेके सुषुप्ति- विषे लीनभयाहै तहां चित्तावस्थाकानाम घोर अवस्थाहै अरु जो देहाभिमान रागद्वेषादिकोंकों लेके सुषुप्तिविषे लीनभयाहै तहां चित्तावस्थाका नाम मूढ अवस्थाहै ॥

हे सौम्य इसप्रकार कहा जो अवस्थाका स्वरूपभेद १ सो यह तीनों सूक्ष्मअवस्था ओंकारकी हैं ॥ अब तीन प्रकारके जे भोग्यहैं तिनकों श्रवणकरो । १ अन्न २ जल ३ सोम [चंद्रमा], यह तीन भोग्यहैं १ भोग्यकहिये भोग नेयोग्य वस्तु । अर्थात् जिसकरके १ पुष्टि २ तुष्टि ३ आन- न्द, होय सोकहिये भोग्य। तहां प्रत्यक्ष अन्न अरु १ जलकरके १ पुष्टि २ तुष्टि ३ आनन्द, होताहै । अरु चंद्रमा करके औषधि वनस्पति आदि १ पुष्ट २ तुष्ट ३ आनन्दित, होतीहैं । ताते १ अन्न २ जल ३ चंद्रमा, इनतीनोंकरके स्थाव- र जंगम सर्व १ तुष्ट २ पुष्ट ३ आनन्दित, होते हैं एतदर्थ अन्न १ जल २ चंद्रमा, यह तीन भोग्यहैं ॥ अरु १ अग्नि, प्राण, सूर्य, यह तीन भोक्तारूपहैं । सो यह अनुभव १ सर्वकों प्रत्यक्षहै देखो क्षुधा पिपासा प्राणकाधर्महै जहां प्राणहोताहै तहांही भोगनेकी शक्तिहोतीहै ताते देह भोक्तानहीं किन्तु प्राणही भोक्ताहै । अरु अग्नि १

देवता भी प्रत्यक्ष भोक्ताहै । काष्ठादिकोंके संबंधसे बाह्य हुत भुक्है अरु देहके सम्बन्धसे अन्तर हुत [भोजनकिया अन्न] भुक्है ताते अग्नि भी प्रत्यक्ष भोक्ताहै । अरु सूर्यभगवान् भी अपनीकिरणोद्वारा सर्व रसजातिको प्रत्यक्ष भोक्ताहैं । ताते प्राण, अग्नि, सूर्य, यहतीनोंभोक्तारूप हैं । अर्थात् अग्नि वैश्वानररूपसे बाह्य समष्टि भोक्ताहै । अरु जठराग्निरूपसे अन्तर व्यष्टि भोक्ताहै । अरु वायु बाह्य सूत्रात्मारूपसे समष्टि सर्वको अपनेविषे धारनेद्वारा भोक्ताहै । अरु अन्तर प्राणरूपसे व्यष्टिकाधारणकर्ता भोक्ताहै । अरु सूर्य बाह्य समष्टिका प्रकाशक भोक्ताहै अरु अन्तर चक्षुरूपसे व्यष्टिका प्रकाशक भोक्ता है । इसप्रकार समष्टि व्यष्टि विषे, अग्नि, वायु, सूर्य, यहतीनों भोक्ताहैं ॥ इसप्रकार जो तीन अवस्था, तीन भोग, तीन भोक्ता, यह नौ नामरूपहोकर एक ओंकारही सुशोभितहै जिसको यथार्थ जानके जो मुमुक्षु उपासना करतेहैं सो मुक्तिको प्राप्तहोतेहैं । यह पशुपति शिवजीका सिद्धान्तहै ॥ इति षष्ठः पशुपतिसिद्धान्तः ॥ ६ ॥

॥७॥ विष्णुपंचरात्रसिद्धान्त ॥

हे सौम्य अब सप्तम विष्णुपंचरात्रसिद्धान्त श्रवण करो । विष्णुजीके सिद्धान्तवादी कहतेहैंकि ओंकार तीन आत्मारूपहै, तीनस्वभावरूपहैं, तीन स्वरूपहैं, इसप्रकार जो नौ ९ नामरूपभये हैं सो ओंकार परमेश्वर है तिसको जो उपासनाकरतेहैं सो मोक्षकोप्राप्तहोतेहैं

तहां बल, वीर्य, तेज, यह तीन आत्माहैं। तहां बल उसको कहतेहैं जो देहविषे सामर्थ्यहै। अरु वीर्य उसको कहतेहैं जो इन्द्रियोंकी शक्तिहै। अरु तेज उसकोकहतेहैं जो मनका उत्साहहै॥ तहां देहसे जो चेष्टा होतीहै सो बलकीहै। अरु ज्ञानेंद्रियसे जो देखना सुनना सूंघना बोलना मिलना इत्यादि पंचविषयोंका सेवनरूप जो चेष्टाहै सो वीर्यरूपहै। अरु मनविषे जो उदारता आदि धर्महैं सो तेजहै। सो यह बल, वीर्य तेज तीनआत्माहैं॥ अरु, ज्ञान, ऐश्वर्य, शक्ति, यह तीन स्वभावहैं। तहां यह जो देह इंद्रिय प्राण मन बुद्धि चित्त अहंकार महत्तत्व प्रकृति आदि यहसर्व अनात्मारूपहैं सो असत्य भ्रांतिमात्रहैं अरु इनका जो साक्षिआत्मा प्रत्यक् चैतन्य कूटस्थ अन्तर्यामीहै सोई सत्य सर्वका प्रकाशक परमात्मा मैंहौं, मायातेआदि लेके जो प्रपंचहैं सो मेरेविषे उपजतेहैं स्थितहोतेहैं मिटजातेहैं। जैसे समुद्रविषे तरंग उठतेहैं तिसहीविषे वर्ततेहैं तिसहीविषे लीनहोतेहैं। तैसेही मेरेविषे जगत्है मैं चैतन्यरूपसमुद्रहौं, मेरा एका अद्वैत अखंड सच्चिदानन्दरूपहै। ऐसा जो निश्चयहै सो ज्ञानहै॥ अरु अणिमासे आदिलेके जो अष्टसिद्धि आदि सिद्धिहैं सो ऐश्वर्यरूपहैं॥ अरु जो अन्यकिसीसे न बनिआवे तिसको बनावना तिसका नाम शक्तिहै। सो यह तीन स्वभावहैं॥ अरु, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, यह तीनव्यूहहैं॥ ताते, तीनआत्मा, तीन स्वभाव, तीनव्यूह, यह नव नामरूपसे एक अव्ययपुरुष ईश्वर ओंकार हीहै।

ओंकारसे इतर कोई वस्तु नहीं ओंकार जो नाम है सो प्रकृति-का वाचक है ताते भी सर्व ओंकारही है । अर्थात् जो कुछ स्थूल सूक्ष्म मूर्त्तामूर्त्त कार्यकारणात्मक जगत् है अरु उत्पत्ति स्थिति संहार है सो सर्व एक वासुदेवही है । तथाच "वासुदेवस्सर्वमिति" । गीता अ० ७ के १९श्लोकमें । ताते वासुदेवसे भिन्न कुछ नहीं । तथाच नान्यत्किंचन । छां० उ० के आदिमें इसप्रकार ओंकार जो सर्वात्मा ब्रह्म है तिसको जो मुमुक्षु उपासना करते हैं सो मोक्षको प्राप्त होते हैं ॥ यह विष्णुजीका सिद्धान्त है । इति विष्णुपंचरात्रे सप्तमसिद्धान्तः ॥ ७ ॥ ॐ ॥

हे सौम्य यह जो सातों सिद्धान्तियों के मत से उपास्य-रूप एक ओंकार कहा है सोई अक्षर ब्रह्म है । तथाच "ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म" । मां० उ० की आदिमें । अरु इस अक्षर ब्रह्मकी उपासना करके वीतराग योगी यती जो आत्मज्ञानी हैं सो सर्वाधिष्ठान चैतन्य विषे समुद्र में नदीवत् प्रवेश करते हैं । अरु मुमुक्षु भी इसकी इच्छा धारके ब्रह्मचर्यादि व्रत को धारणकर आचार्यद्वारा तिसको पाय मोक्ष होते हैं सो हमने तुम्हारे प्रति संक्षेपमात्र कहा है । तथाच "सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति तपांसि सर्वाणि च यद्वदन्ति । यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदं संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत्" ॥ १५ ॥ "एतद्ध्येवाक्षरं ब्रह्म एतद्ध्येवाक्षरं परम् । एतद्ध्येवाक्षरं ज्ञात्वा यो यदिच्छति तस्य तत्" ॥ १६ ॥ "एतदालम्बनं श्रेष्ठमेतदालम्बनं परम् एतदालम्बनं ज्ञात्वा ब्रह्मलोके महीयते" ॥ १७ ॥ इत्यादि क० उ० की दूसरी वल्ली के १५ । १६ । १७ ।

तीन श्रुतिमें। हे सोम्य यह जो ओंकार अक्षरहै तिसका उ
च्चारण स्मरणकरताहुआ इसका लक्ष्यजो अखंडसच्चिदा
नन्द चैतन्यआत्माहे सो मैं हों। इसप्रकार परमात्माके
साथ आपको अभेदजानके एकहुये देहको त्यागतेहैं सो
परमगतिको प्राप्तहोतेहैं। तहां एकतो मरणके समय २
ओंकारका उपासक ओंकारकास्मरणकरता देहको त्या
गताहे सो उत्तमगतिको प्राप्तहोताहे। तहां भी जो ओंका
रको एकमात्रारूपजानके उपासनाकरतेहैं सो देहत्याग
के शीघ्र ही इसलोकको प्राप्तहोय धर्मार्थकरके सम्प
न्नहोते हैं। अरु जो ओंकारको दो मात्रारूपजानके उ
पासनाकरताहे सो देहत्यागके अनन्तर पितृलोकको पा
प्तहोय वहांके भोग भोगके पुनः इसलोकविषे आवताहे
अरु जो त्रिमात्रारूपजानके ओंकारकी उपासना करताहे
सो पुरुष देहत्यागके अनन्तर सर्व पापोंसे रहितहोय २
सूर्यकी किरण द्वारा ब्रह्मलोकको प्राप्तहोताहे वहां ब्र-
ह्माके उपदेशद्वारा ओंकारके लक्ष्य अमात्रिक चैतन्यआ
त्माके अभेदज्ञानको पाय मोक्षहोताहे ॥ अरु जो ओं
कारके वाच्यकी उपासनाकरके आचार्यद्वारा लक्ष्यस
च्चिदानंद आत्माको अपनाआपस्वरूप जानकर सर्व
अनात्म अहंकारसे रहित ज्ञानभयाहे सो जीवन्मुक
ब्रह्मही है। तथाच "ब्रह्मविद्ब्रह्मैवभवति"। इति श्रुतेः॥
हे सौम्य यह जो सातोंसिद्धान्तकरके ओंकारके
निरसन ६२ भेद कहे हैं सो सर्व सगुण स्थूलरूपहैं॥

अरु जो इनसेपरे चौसठवां ६४ रूपहै सो केवल निर्गु-
णरूपहै । तथाच "केवलोनिर्गुणश्च" । इति श्वेताश्वतरउपनि-
षद्विषे । अरु शास्त्रकारोंने भी कहाहै कि जो विष्णु अ-
क्षरहै सो निरंजन अर्थात् अविद्यारूपीश्यामतासे रहित
परमशान्त आनन्दघनहै । तथाच "निरंजनंशान्तमुपैति
दिव्यं" । सो न स्थूलहै न सूक्ष्महै न अणुहै न दीर्घहै न
ह्रस्वहै न रक्तहै न पीतहै न हरितहै इत्यादि सर्ववर्ण
रूपसे रहितहैं सो न इंद्रियांहै न प्राणहै न मनहै न
बुद्धिहै अरु न इनका विषयहै ताते सर्व विशेषतासे
रहित निर्विशेष नित्य निरक्षर सर्वाधिष्ठान परमशान्त-
रूपहै तिसविषे एक, दो, आदि, वर्णसंज्ञा कोईनहीं ताते
निरक्षरहै सो सम विषम भावसे रहित सदा अच्युत
ज्योंका त्यों है ताते परमअक्षरहै सो कैसा परम अ-
क्षरहै जो अधोक्षजहै अर्थात् शब्द ध्वनिसे रहितहै ।
अरु जो अक्षर परा पश्यन्ति मध्यमा अरु वैखरी
इन चारोंवाचाके आश्रय होइ कंठ तालू नासिका, इ-
त्यादिस्थानोंद्वारा प्रकटहोतेहैं सो क्षर रूपहैं होते ही
भूत संज्ञाको प्राप्तहोतेहैं वर्तमानमें उनका अभाव है ।
अरु जो होठ तालु कंठादि स्थानोंसे प्रकट नहीं होता अ-
रु सर्वका साक्षी प्रकाशक अधिष्ठानहै सो सदा वर्त-
मानरूपहै अक्षरहै उसका नाम स्वयंभूहै अर्थात् अप-
ने आपकर आपही सिद्धहै सो ओंकार अचिन्त्य स-
र्व प्रमाणोंसे रहित अप्रमेय नित्यहै अचलहै पूर्णहै

परम शिवरूपहै सनातनपुरुषहै । “तद्विष्णोःपरमंपदम् ।
सोई विष्णुका परमपदहै पद कहिये पावनेयोग्यहै ।
जिसके पायेसे पुनः संसारभ्रम नहीं होता सोई परम-
धामहै सोई क्षराक्षरसे रहित उत्तमपुरुष परमईश्वर
है । अर्थात् सर्व कार्य कारणसे रहित निराकार सर्वा
धिष्ठान परमात्माहै सोई सर्वका अपना आप प्रत्यक्
आत्माहै जिसके जाननेसे मोक्ष होताहै इससे इतर
मोक्ष मार्ग नहीं । तथाच “नान्यःपंथाविमुक्तये”। “नान्य
पंथा अयनाय”। इत्यादि श्रुतिः ॥

हे सौम्य इस ओंकार ईश्वरके दश नामहैं सो सार्थ
[अर्थसहित] नामहैं सो जिज्ञासुकरके जाननेयोग्यहैं
तिसको भी श्रवणकरो । तथाच “ओंकारं प्रणवं चैव स-
र्वव्यापिनमेव च अनन्तं च तथा तारं शुक्लं वैद्युतमेवच
तुर्यं हंसं परंब्रह्म इति नामानि जानते” । इति अब इन
को अर्थ सुनो ॥

॥१॥ प्रथमनाम ओंकार ॥

हे सौम्य प्रथम नाम ओंकारहै सो जब ओंकारका-
उच्चारण करतेहैं तब चरणसे लेके मस्तकपर्यंत सर्वशरीर
को ऊंचाकरताहै तबप्राण ब्रह्मरंध्र पर्यन्त व्याप्तहोताहै ए-
तदर्थ इसकानाम ओंकारहै ॥१॥ अथवा जो योगक्रिया
की रीतिसे प्राणायामद्वारा स्थानविशेषमें ध्वनिकोसाधिके
ओंकारका आन्तरीयउच्चार करताहै तिसके प्राण ब्रह्मरंध्रको
प्राप्तहोतेहैं अरु देहान्तभये सर्वसेऊर्द्ध ब्रह्मलोकको वो उ-

पासक प्राप्तहोताहै तातें इसकानाम ओंकारहै ॥२॥ अथवा ओंकारके दो अक्षर [मात्रा] हैं तिनका अर्थ पालन अरु रक्षाहै । अर्थात् जो इस ओंकारकी उपासनाकरतेहैं तिनकी रक्षा अरु पालना ओंकारकरताहै अर्थात् योगक्षेम करताहै । जो पदार्थ प्राप्तनहोय अरु तिसकी इच्छाहोयसो प्राप्तकरदेना तिसकानाम योग है। अरु जो पदार्थ प्राप्तहै तिसकीरक्षाकरनी तिसकानाम क्षेम है । सो योगक्षेम अपने उपासकोंका ओंकार करताहै । अर्थात् सकाम उपासककों संसारके भोग्य पदार्थों से पालन अरु रक्षाकरेहै । अरु जो निष्काम जिज्ञासु उपासकहै तिनकी ज्ञानभूमिकाद्वारा रक्षा अरु पालना करेहै । अर्थात् जो जिज्ञासुकों ज्ञानभूमिका नहीं प्राप्तभई तो तिसकी प्राप्तिकरताहै अरु जो ज्ञानभूमिका प्राप्तभयीहै तो कामक्रोधादि आसुरी संपदासे तिसकी रक्षाकरताहै तातें इसकानाम ओंकारहै ॥३॥ अथवा ओंकारका अर्थ अंगीकार करना भी है । अर्थात् जोकोई इस ओंकारका भजनकरता सम्यक् उपासकहै तिनके कहे हुए वरशापादिक वाक्य देवताआदि सर्व ही अंगीकार करतेहैं एतदर्थ इसका नाम ओंकारहै ॥४॥ अथवा ओंकार शब्दका भी अर्थहै जो इसकी समाहितचित्तसे सम्यक् उपासना करतेहैं तिनकों अपनेआप आत्मा ब्रह्मपदकी अभेद ज्ञान करावताहै ताते इसका नाम ओंकारहै ॥५॥ सकल सर्व ओंकार नामके अर्थहैं ॥ अब प्रणवके अर्थ सुनो ॥

॥ २॥ दूसरानामप्रणव ॥

हे सौम्य अब प्रणव नामका अर्थ सुनो। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्वणवेद अरु ब्रह्मा आदि सर्व देवता ऋषि मुनि मनुष्य दैत्यादि जो हैं सो सर्व, तीनअक्षररूप हैं जो ओंकार तिसको मन वाणी शरीरकरके प्रणामकरते हैं ताते ओंकारका नाम प्रणवहै ॥ २॥

॥ ३ ॥ तीसरानाम सर्वव्यापी॥

हे सौम्य अब तीसरे सर्वव्यापीनामका अर्थ श्रवणकरो। यहजो स्थावर जंगम स्थूल सूक्ष्म शरीरहैं अरु जो २ सम्पूर्ण विद्याहैं वेद स्मृति पुराण इतिहासादिक सो लेके इन सर्वविषे व्यापरहाहै। अर्थात् इनसर्वविषे नाना भेद भावकरके एक विष्णु ओंकारही को वर्णनकियाहै ताते इसको सर्वव्यापी कहतेहैं। अथवा एक ओंकारही अपने कमात्राहोके वेदादि सर्वविद्याविषे ओत प्रोतहै यावत् बावन आदि मात्राहैं सो सर्व एक ओंकारहीका विस्तारहै ताते ओंकार सर्वव्यापीहै ॥३॥ अथवा जो अक्षर आत्मा अस्ति भाति प्रिय रूपहोकर स्थितहै, ताते अक्षर ओंकारको सर्वव्यापी कहतेहैं ॥३॥ यह ओंकारके तृतीय सर्वव्यापी नामका अर्थहै ॥ ३ ॥

॥४॥ चतुर्थ नाम अनन्त॥

॥हे सौम्य अब ओंकारके चतुर्थ अनन्तनामका अर्थ श्रवणकरो। जब जिज्ञासु इस ओंकारका यथाविधि भलीप्रकार भजनकरताहै तब तिस अपने उपासक को २

अपने अनन्तापदमें प्राप्तकरताहै ताते ओंकारकानाम अनं-
तहै ॥१॥ अथवा इस ओंकारब्रह्मका देश काल वस्तुकरके
अन्त नहीं पायाजाता क्योंजो वायु अग्नि जल पृथिवी आ-
दिकोंकी अपेक्षा आकाशको अनंतताहै जो वायुआदि-
तत्वोंका आकाशविषे अन्तहोताहै अरु इन चारों तत्वोंसे
आकाशका अन्त नहीं होता ताते चारोंतत्वोंकी अपेक्षामें
आकाशको अनन्तताहै सो आकाशकी अनन्तता ओंका-
रके लक्ष्यसर्वाधिष्ठान आत्माकि भरपूर अस्तित्वके ज्ञा-
नसे एक परमाणुमात्र भी नहीं रहती ताते ओंकार पर-
मात्माको अनन्त कहते हैं॥२॥ अथवा ओंकारके वा-
च्य नामरूपात्मक जगत्का अन्त बिनासर्वाधिष्ठान चैत-
न्य आत्माके साक्षात् ज्ञानबिना अन्य देवता दैत्य ऋषि
मुनि आदिकों करके नहीं पायाजाता ताते ओंकारकानाम
अनन्त है ॥३॥ यह ओंकारके चतुर्थ नामका अर्थहै ॥४॥

॥५॥ पंचमनाम तार॥

हे सौम्य अब ओंकारका पंचम नाम जो तारहै तिस
का अर्थ श्रवणकरो। सर्व जो, आध्यात्मिक आधिभौतिक,
आधिदैविक, दुःखहै। तहां अन्तःकरणविषे काम क्रोध
तृष्णा चिन्ता आदिकोंके क्षोभसे दुःखहोताहै तिसका ना-
म आध्यात्मिक दुःखहै। अरु ज्वरादि रोगजन्य अथवा
सर्प सिंहादिकोंके भयजन्य जो दुःखहै तिनका नाम आ-
धिभौतिक दुःखहै। अरु इन्द्रादि देवताओंके कोपजन्य जो
दुःखहै तिनका नाम आधिदैविक दुःखहै। इत्यादि सर्व

दुःखोंसे अपने उपासकको तारदेताहै एतदर्थ ओंकारका नाम तारहै ॥२॥ अथवा यह जो नामरूपक्रियात्मक महा- दुःखरूप अपार संसार सागर है तिसविषे जन्म जरा मरण काम क्रोध लोभ मोहादिरूपी बड़े२ ग्राह मकरादि सर्वको ग्रासकरताहै अरु तृष्णा कामना अभिलाषा इच्छा आदि बड़ी२ पृथ्वीलोकसे ब्रह्मलोक पर्यंत उछलती सर्वको अपने- विषे आकर्षणकर तृणवत् अधो उर्द्धको प्राप्तकरती तरंग है तिसविषे ज्ञानरूपा तारु विद्यासेरहितजेअज्ञानी जीव हैं सो पड़े मग्न होते हैं अरु दुःखपावते पुकारते रोवते हाडू वे२ शब्दकरतेहैं अरु इस संसारसागरमें मग्नहोते जीव २ सो देवतादिक बड़ेश्रेष्ठ पूजनीय भजनीयहैं तिनको अप नात्राण समझके उनका आश्रयलेतेहैं अरु उनको भी इ स अपारसागरमें मग्नहोते सुनते अरु जानते हैं तब निरा धारहुये जन्मजन्मांतर पर्यंत दुःखही पावते हैं। ऐसा जो परम दुःखमय असार अपार संसार महदुस्तर सागर २ तिससे अपनेउपासकको तारदेताहै तातै ओंकारका नाम तारहै ॥२॥ अर्थात् यह ओंकार ही तारक वेदोंकरके सु- नियाहै तातै जिनको सत्संस्कार वेदका अधिकारहै ति- नको संसारदुःखकी निवृत्तिके अर्थ सर्वोत्तम तारक ओं- कारकी ही उपासनायथाविधि कर्तव्य योग्यहै। अरु जे वेद के अनधिकारीहै सो यथाविधि पुराणोक्त तारक की उपा- सनाकरे उनको वो ही परम पुरुषार्थक है ॥ यह ओंकार के पंचम तारनामका अर्थ है ॥ ५॥

॥६॥ षष्ठः नाम शुक्ल॥

हे सौम्य अब ओंकारके शुक्लनामका अर्थ श्रवणकरो। वर्णाकरके जो पवित्र [शुद्ध] होय सो कहिये शुक्ल अर्थात् जो सर्व मलकरके रहित निर्मलहोय सो कहिये शुक्ल। तहां सर्व मलोंका कारण अविद्या तिसअविद्यारूप महामलसे रहित सदा शुद्ध एक ओंकारहीहै एतदर्थ ओंकारका नाम शुक्लहै ॥१॥ तथाच "शुद्धमपापविद्धम्" ई० उ० के ८ मेंमंत्रमें। तथा "तदेवशुक्रं तद्ब्रह्म तदेवामृतमुच्यते"। क० उ० अ० २ व० ५ श्रुति १ में॥ अथवा ओंकार अपने उपासकको शुद्ध ब्रह्मपदविषे प्राप्तकरताहै ताते ओंकारका नाम शुक्लहै ॥२॥ अथवा तीनप्रकारको जे कायिक वाचिक मानसिक पापहैं तिनका नाशकरके अपने उपासककों शुद्धकरताहै एतदर्थ ओंकारका नाम शुक्लहै ॥३॥ अथवा तीनप्रकारके जो कर्मरूप पापहैं तिनपापोंसे अपने भक्तकों शुद्ध करताहै ताते ओंकारका नाम शुक्लहै ॥४॥ अब उन तीनप्रकारके कर्मरूप पापोंको श्रवणकरो। एक संचितकर्म, दूसराक्रियमाणकर्म, तीसरा प्रारब्धकर्म,। सो यह तीनप्रकारके कर्मरूप पाप, नर्कसमेंवाणवत्, अन्तःकरणरूप तर्कस विषे रहताहै सो कैसाहै अन्तःकरणरूप तर्कस जो साक्षी आत्माके आभास किंवा प्रतिबिम्बकरके युक्तहै अरु अविद्याका कार्य होनेसे अज्ञानअन्धकारको भी युक्तहै तिस अन्तःकरणरूप तर्कसविषे तीनोंप्रकारके कर्म-

रूप बाण रहतेहैं। स्वतः अन्तःकरण जड़है तिस चै-
तन्याभास अरु अज्ञानके कर्मधारनेमें समर्थ नहीं।
जब अन्तःकरण चैतन्याभास अरु अज्ञानकरि युक्त
होताहै तबही कर्मोंको धारनेविषे समर्थ होताहै॥ हे
सौम्य अब श्रवणकरो जो अन्तःकरण क्याहै अरु अ-
ज्ञान क्याहै अरु चैतन्य क्याहै अरु कर्मोंको धारताकै
सेहै सो सर्व श्रवणकरो। जैसे मृत्तिका अरु जल अरु
आकाश यह तीनों मिलतेहैं तब घटउत्पन्नहोय पदार्थ
कों धारताहै तहाँ न तो केवल मृत्तिका ही पदार्थकों
धारतीहै न केवल जलही पदार्थ धारताहै अरु न
केवल आकाश ही पदार्थकों धारताहै। जब मृत्तिका
जल आकाश यह तीनों मिलतेहैं तब घटहोय पदा-
र्थको धारताहै। तैसे ही सत्वगुणरूपी मृत्तिका अरु
अज्ञानरूप जल अरु चैतन्यरूप आकाश यह तीनों
मिलतेहैं तब अविद्याके सत्वगुण भागका परिणाम
अन्तःकरणरूपहोय कर्मोंको धारताहै। तहां नतो केव-
ल चैतन्यही कर्मको धारताहै न केवल अज्ञानही धा-
रताहै न केवल सत्वगुण धारताहै। जब सत्वगुण अ-
रु अज्ञान अरु चैतन्य यह तीनों एकत्र होतेहैं तब
अन्तःकरणहोय प्राण सूत्रके आश्रय कर्मोंको धार
ताहै। ऐसा जो अन्तःकरणरूप तरकसहै तिसविषे क-
र्मरूपी बाण रहतेहैं॥ अथवा अन्तःकरणरूप मंदिर
है तिसविषे तीनोंप्रकारके कर्मरूपी अन्नके दाने भरेहैं

तहां व्यतीतभये जे अनेकजन्म तिनके कर्मोंके सूक्ष्म सं-
स्कार जे अन्तःकरणविषे संचितहैं तिनका नाम संचित-
कर्महै उन संचितकर्मोंमेंसे जिनकर्मोंसे यह वर्त्तमान
शरीरभयाहै अरु जिनका फल सुखदुःखादि इसशरी-
रविषे अवश्य भोगनाहै तिसकानाम प्रारब्धकर्महै। अ-
रु जो वर्तमान शरीरसेकरके अभिमानपूर्वक कर्मकिये
जातेहैं तिनकानाम क्रियमाण कर्महै। सो क्रियमाण
कर्महो तीनसंज्ञाको प्राप्तहोताहै। तहां करनेके समय
क्रियमाण संज्ञाहै अरु करनेके उत्तर उसको संचितसं-
ज्ञाहोतीहै अरु तिसके फलभोगका समय जबहोताहै
तब उसको प्रारब्ध संज्ञाहोतीहै। जैसे एकही काल
भूत भविष्य वर्तमान तीन संज्ञाको प्राप्तहोताहै। तैसेही
जो क्रियमाणकर्महै सो क्रियमाण संचित प्रारब्ध तीन
प्रकारकी संज्ञाको प्राप्तहोताहै। तिसविषे जे प्रारब्धकर्म
हैं तिनका फल जाति, आयुष्य, भोग, तीनरूपसे प्राप्तहो-
ताहै। तहां जाति कहिये देव दैत्य मनुष्य पशु पक्षी वृक्षा-
दि तिनविषे भी उत्तम मध्यम कनिष्ठ है सो सर्व अपने
प्रारब्धके फलहैं अरु आयुष्य जो है सब निमेषादिसे
लेके परारब्ध ब्रह्माके आयुष्य पर्यन्त न्यूनाधिक सो सर्व
प्रारब्धके फलहैं। अरु भोग जो हैं नानाप्रकारके स्वर्ग
नरकादिकोंके उत्तम मध्यम निकृष्ट रूप सुख दुःख सो
सर्व प्रारब्धका फलहै अवश्यमेव देहधारीको भोग-
नाहै। यह तीनों प्रारब्धकर्मके भोग सो भोगनेहीसे

निवृत्तहोतेहैं ओर किसीप्रकारसे भी इनकी निवृत्ति नहीं।
अरु संचित क्रियमाण यह दोनों कर्म ज्ञानवान्के नष्ट
होजातेहैं अरु प्रारब्धकर्म देहकोआश्रय रहताहै सो अ-
पना भोगदेकै अभावहोताहै मध्यमें मिटतानहीं। जैसे२
शूरमाके तर्कसविषे जो बाणहोतेहैंतिनकों अरु जो बा-
ण चलावनेकेलिये हाथविषेलियाहै तिसको नाशकरने
कों योधाशूरमा समर्थ होताहै। अरु जो बाण धनुषसे छू-
ट चुकाहै तिसको नाशकरनेमें समर्थ नहींहोता सो बा-
ण जब अपनेवेगसे रहितहोताहै तब गिरपडताहै। तै-
सेही तर्कसके बाणवत् संचितकर्महैं अरु हाथके बा-
णवत् क्रियमाणकर्महैं सो यह दोनों कर्म ज्ञानकी प्राप्ति
से नाशहोजातेहैं। अरु जो प्रारब्धकर्महैं सो धनुषसेच
लेहुए बाणवतहैं सो ज्ञानप्राप्तहुए भी रहताहै सो जब
अपने भोगदानरूपी वेगसे रहित होताहै तब शरीरपू-
र्वक गिरपडताहै फेर आगेको चलतानहीं। अर्थात् जब
ज्ञानीका प्रारब्ध अपनाभोगदेके सशरीरनष्टहोताहै त-
ब ज्ञानीको पुनःजन्मआरंभक कोई कर्म शेष रहतानहीं
क्यों कि जब आचार्यसे तत्त्वमस्यादि महावाक्योंको श्र
वणकरताहै तब यह जानताहै जो मैं.स्थूल.सूक्ष्म.कारण
इन तीनों शरीरोंसे रहित अजन्मा अक्रिय सो तातें मेरे
साथ शरीर अरु तदाश्रित कर्म कोईनहीं मैं एतनेका-
लसे अपने अज्ञानपिशाचके वशभया अपनेको कर्त्ता
भोक्ता आदि मानतारहा परंतु अपनाआप ज्ञानस्वरूप है

तिसकरके मैं कर्त्ता भोक्ता नहीं अरु आगेको मुझे कुछ कर्तव्य भी नहीं मैंतो निराकार निर्विकार अक्रियआत्माहौं। इसप्रकार अपनेआप आत्माको साक्षात् ज्ञानहोनेसें तिसही ज्ञानरूप अग्निद्वारा संचित अरु क्रियमान दोनोंकर्म भस्म होजातेहैं। तथाच "क्षीयंतेचास्यकर्माणि"। मुं० उ० के चतुर्थ मुं० ८ श्रुतिमें। तथा "ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं"। गी० अ० ४ श्लोक १९ में। अरु जो पीछेरहा प्रारब्धकर्म सो अपना भोगदेके नष्टहोताहै अरु प्रारब्धके भोगकालमें भी प्रारब्धभोगको ज्ञानी अपने विषे नहीं भोगता साभास लिंगशरीरभोक्ताहै अरु स्थूलशरीरं भोगालयहै अरु इनदोनोंकाकारण अविद्याहै अरु मैं तो इनसे पृथक् इनसर्वका प्रकाशक साक्षीहौं। जैसे सूर्यके प्रकाशको आश्रय जीव अपना२ व्यापार करतेहैं अरु सूर्य सर्वसें पृथक् सर्वका साक्षीहै तैसे। तथाच "सूर्योयथासर्वलोकस्यचक्षुर्नलिप्यते चाक्षुषैर्बाह्यदोषैः एकस्तथा सर्व भूतांतरात्मा नलिप्यतेलोकदुःखेन बाह्यः"। क० उ० के ५ मीवल्लीकी ११ श्रुतिमें। हे सौम्य इसप्रकार अपनेआप सत्यस्वरूप आत्माकों जानके ज्ञानवान् संचितादि सर्वकर्म अरु कर्मके फल भोग तिनसे रहित ज्योंका त्यों है अरु यावत् लोकदृष्टि ज्ञानीका देह भासताहै तावत् प्रारब्ध भी भासताहै तथापि तिस अवस्थामें भी ज्ञानी देह अरु तदाश्रित कर्तृत्व भोक्तृत्वता तिसके अभिमानसे रहितहोताहै। तथाच "प्रा-

रब्धमश्नात्यभिमानवर्जितो मय्येव साक्षात् प्रविलीयते-
तनः । टी०श्लोक ५४ में। अरु प्रारब्धभोग भी तीन प्र-
कारकाहै तहां एक इच्छितरूप, दूसरा अनिच्छितरूप, २
तीसरा परिच्छिन्नरूप,। सो यह तीनप्रकारकी क्रियाभो-
ग जीवोंको प्राप्तहोतीहै। सो तीनोंप्रकारकी प्रारब्ध क्रि
याभोग श्रीकृष्णपरमात्माने गीताविषे निरूपणकिया
है सो ज्ञानी अज्ञानी दोनोंको तुल्यहै परंतु अज्ञानीको
साभिमानहै ताते बंधनकाकारणहै। अरु ज्ञानवान्नि
रभिमानहै ताते उसको बंधनकाकारण नहीं। अब ती
नोंप्रकारके प्रारब्ध क्रिया भोग देखावतेहैं। तथाच
श्री भगवानुवाच "सदृशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञान-
वानपि प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किंकरिष्यति" ३३
अर्थ हे अर्जुन अपने प्रारब्धकर्मके अनुसार सर्वचे
ष्टाकरतेहैं अर्थात् ज्ञानवान् भी अरु अज्ञानी भी सर्व
अपने२ पूर्वसंस्कारोंके आश्रय चेष्टाकरतेहैं अरु उ
सहीस्वभावको प्राप्तहोतेहैं फेर निग्रह किसकाकरिये
अर्थात् पूर्वशरीरोंसे कियाजो कर्म सो संस्काररूपसे
अन्तःकरणविषे स्थितहै तिन संस्कारोंका जो प्रबुद्ध२
[जागना] होनाहै इसहीके आश्रय ज्ञानी अज्ञानी स
र्व चेष्टाकरतेहैं फेर निग्रह क्योंकरिये। यहतो इच्छापू
र्वक क्रियाभोगहै क्योंजो पूर्वजन्मोंके किये जे इच्छा-
पूर्वक शुभाशुभकर्म सो संस्काररूपसे अंतःकरणमें
स्थितहोय इसशरीरको अपने आश्रय वर्तावैहैं ताते

इस स्वाभाविक चेष्टाका नाम इच्छापूर्वक चेष्टाहै ॥

॥शिष्यउवाच॥

हे भगवन् शुभरूप उत्तमक्रियाकरनेकी अभिला-षा सर्वकोहोतीहै तथापि जिसपापकर्मकी इच्छा भी नहीं तिसही पापकर्मकों करतेहैं सो किसकी प्रेरणासे करतेहैं जैसे स्वामी [राजा] की प्रेरणासे भृत्य [सिपाही] विना इच्छाके भी युद्धरूप कर्म करताहै कि जिसमें मरणप-र्यन्तका भयहै । तैसेही यहपुरुष जो विनाही इच्छाके पा-परूपक्रियाकरताहै कि जिसका परिणाममें नरकादिदु-खोंका भयहोताहै तथापि तिसकों करताहै सो किसकी प्रेरणासे करताहै यह आप कृपाकरके कहिये ॥

॥गुरुरुवाच॥

हे सौम्य यही प्रश्न पूर्व अर्जुनने भगवान्प्रतिकि-याहै तिसकाउत्तर जो श्रीकृष्णभगवान्ने कहाहै सो-ई तुम्हारेप्रतिकहतेहैं तिसकों श्रवणकरो । तथाच "का-मएषः क्रोधएषः रजोगुणसमुद्भवः महाशनो महापा-प्मा विद्धेन मिहवैरिणं" । भगवान् कहतेहैं कि हे सखा यह जो काम अरु क्रोधहै सो रजोगुणसे उपजेहैं अ-रु बड़े भोजनकेकरनेवाले पापी अरु जित्तासुकेनित्य वैरीहैं तिनकी प्रेरणासे यह जीव अनिच्छित भी पाप कर्ममें प्रवृत्तहोताहै । अर्थात् यह जो कामनाहै सोई अपनी अपूर्णतासे क्रोधरूप परिणामकों पावतीहै । क्यों कि जोकोई किसीपदार्थकी कामनासे क्रियामें ।

प्रवृत्तहोताहै तिसक्रियामें जब कोई विघ्नकरताहै तब वो-
हीकामना जो रजोगुणात्मकरही सोई क्रोधरूपकामोगु-
ण परिणामहोतीहै सो विवेकशून्य पापात्माहै । अरु १
कामना भोगोंकरके तृप्तनहींहोती, आहुतीसे अग्निवत्
अरु जिज्ञासुकी नित्यवैरीहै इसहीसे कहाहै जो "जहि-
शत्रुंमहाबाहोकामरूपंदुरासदम्" इस कामरूप बल-
वान्शत्रुकानाशकरो तिसबिना कल्याण नहीं । अरु पू-
र्व जन्मोंके जे रजोगुणात्मककर्मोंके सूक्ष्मसंस्कार अं-
तःकरणमें स्थितहैं सो जब अपनाफलदेनेको सन्मुख
होतेहैं तब प्रारब्धभावको प्राप्तहोय कामनारूपसे प्रवृ-
त्तहोतेहैं तब तिसके वशपड़ा जीव अनिच्छितभी पा-
पकर्मोंमें प्रवृत्तहोताहै सो क्रिया अरु तिसका फलभो-
ग सर्व अनिच्छित क्रियाभोगहै ताते यह अनिच्छित
रूप प्रारब्धभोगहै ॥ अब परेच्छित प्रारब्ध सुनो । श्री
कृष्णभगवान् कहतेहैं कि हे अर्जुन अपनेपूर्वसंस्का-
रजन्य प्रकृति [स्वभाव] तिसके वशभया जो तूं सो अ-
ज्ञानभ्रमसे अपनाधर्मरूप युद्धकर्म सो नहीं भी करता
तथापि परवशभया युद्धकर्मकरेहीगा इसविषे संशय-
नहीं ताते यहजो तेरी युद्धरूपक्रियाहै अरु तिसका जो-
परिणाम फल भोगहै सो दोनो परेच्छितहै । अरु का-
मना अरु क्रिया यहदोनों परस्पर ओत प्रोतहैं काम
नाबिना क्रियानहीं अरु क्रियाही कामनाको सखाव-
तीहै ताते यह नहींकहाजाता जो कामना प्रथमहै कि

क्रिया प्रथमहै। अरु यहदोनों अविद्याके आश्रयहैं सो अविद्या अनादिहै ताते काम कर्मभी अनादिहैं परंतु सर्वाधिष्ठानआत्मसत्ताके साक्षात् ज्ञानसे अविद्या अरु तदाश्रित सम्पूर्ण काम कर्म आदिकोंका अभावहोताहै। ताते असत्यहैं। अज्ञानअवस्थाविषे अनादिकालके जे कामकर्मादिकोंके संस्कार सो जब अपना भोगदेनेकों सन्मुखहोतेहैं तब वोही प्रारब्धसंज्ञाकों प्राप्तहोय, इच्छित, अनिच्छित, परेच्छित, इन तीनप्रकारसे प्रवृत्त होतेहैं ताते प्रारब्ध क्रिया भोग तीनप्रकारकेहैं॥

हे सौम्य तुम्हारे बोधार्थ पुनः कहतेहैं तहां प्रथम इच्छारूप क्रिया भोग श्रवणकरो। जैसे कोई एक रोगीपुरुषहै तिसकों वैद्यने आज्ञाकिया कि तू कुपथ्य भोजन मतकरिओ जो करेगातो क्लेशपावेगा। सो यह्वार्ता वैद्यकी सुनके भी वो रोगीपुरुष कुपथ्यकी इच्छाकर सोई भोजनकरके क्लेशकों भोगताहै। सो कुपथ्य भोजनकों वैद्यद्वारा क्लेशरूपजानकरके भी पुनः सोई कुपथ्य भोजनकरना अरु दुःखभोगना सो यह क्रिया भोग दोनों इच्छितरूप प्रारब्धहैं। तैसेही चौर्यादि कर्मके फलकों जानकरके भी चौर्यादिकर्ममें प्रवृत्तहोना अरु तिसके फल ताड़नादि क्लेशकों भोगना सो यह सर्व क्रियाभोग स्वेच्छितहै॥ अब अनिच्छितकों सुनो। हे सौम्य जैसे कोई एक पुरुष किसी ग्रामकों जाताहै सो उस ग्रामका जो मार्गहै तिसमें चल

नाहै सो चलतै२ उसमार्गको भूलके दूसरे मार्गको चल-
नेलगा सो उस मार्ग विषे उसको कंटकादिकोंसे खेदभ-
या अथवा किसीपदार्थकी प्राप्तिसे हर्षभया सो उस
मार्गमें गमनकिया अरु दुःखसुखका जो भोग है सो
उस पुरुषकों अनिच्छित क्रिया भोगहै ॥ अब परे-
च्छितको श्रवणकरो । हे सौम्य कोई एक निर्धनपुरुष
अपने किसी प्रयोजनार्थ कहींको जातारहा किंवा बैठा-
रहा तिसको अकस्मात् किसी राजकीय बलवान् पुरु-
षने अपने बंधनमें करके अपना जोकुछ [सामान] भा-
रथा सो उसके मस्तकपरधरके उसको ताडना सहित
अपने अनुकूल मार्गमें चलावने लगा । सो उस निर्ध-
न मनुष्यका जो मार्गमें चलना भारको उठावना ताड-
नाके क्लेशको भोगना सो सर्व परेच्छित क्रिया भोग
है ॥ हे सौम्य अब इसपर दृष्टांतकी साक्षी श्रवणकरो
जैसे सत्यवतीमाताके वश्यभये व्यासदेवजीने राजा
धृतराष्ट्र अरु पांडु अरु विदुरकी माताकेसाथ उन-
के संतानार्थ विषयभोगकिया सो व्यासदेवजीने २
अपनी इच्छापूर्वक नहीं किया केवल अपनी माता-
की आज्ञावश्यहोय कियाहै सो परेच्छित क्रिया भो-
गहै ॥ हे सौम्य एकप्रारब्धके तीनप्रकारकी क्रिया
भोग तुमसे कहा सो सर्वको भोगनी पडतीहै भोगे-
विना औरप्रकारसे इसका अभाव होतानहीं । अरु
आत्मज्ञानीके दोप्रकारकी प्रारब्ध क्रिया भोग इ-

च्छिन्न अनिच्छित अभावहोजातेहैं क्यों जो ज्ञानवानको सर्वात्मभाव उदयभयाहै तब इच्छा अनिच्छा कौनकी करे। यह इच्छा अनिच्छा द्वैतविषेहोतीहै सो द्वैतभाव-अविद्याकरकेहोताहै सो अविद्या ज्ञानवान्की अभाव भयीहै ताते ज्ञानीविषे इच्छा अनिच्छाका भी अभावहै अरु एक लोकदृष्ट्या व्यवहारमात्र जो ज्ञानी विषे क्रिया भोग भासताहै सो परिच्छिन्नहै तथापि ज्ञानीकेस्वरूप विषे सो भी नहीं क्यों कि ज्ञानीकेस्वरूपविषे पर अपर का भेद नहीं उसकोंतो भेदभावसे रहित एक अपना आप आत्माही भासेहै उसके अनुभवविषे "सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानिचात्मनि" "सर्वंखल्विदंब्रह्म" "नेह नानास्तिकिंचन" "नात्रकाचनभिदास्ति" इत्यादि श्रुतियोंके प्रमाणसे एक अद्वितीय ब्रह्महीहै। ताते ज्ञानीके विषे संचित क्रियमाण प्रारब्ध तीनोंकर्मोंका अभावहै। अरु जो लोकदृष्ट्या ज्ञानी विषे क्रिया भोग प्रत्यक्ष देखतेहैं सो देहके आश्रय इच्छा अनिच्छासे रहित असाधारण प्रारब्धकर्महैं क्योंजो देहकाहोनाहै सो प्रारब्धकर्मसंस्कारके आश्रयहै ताते ज्ञानीका यावत् देहहै तावत्प्रारब्धहै यावत् प्रारब्धहै तावद्देहहै इसप्रकार देह अरु प्रारब्धका व्यापार अन्योऽन्याश्रयहै एतदर्थ यावत् ज्ञानीका देहहै तावत् देहसंबंधसे ज्ञानीकेविषे प्रारब्ध क्रिया भोग भासतेहैं सो ज्ञानीकेस्वरूपविषे आभासमात्र मिथ्याहै ज्ञानीको प्रारब्ध क्रिया भोग नहीं

ताते प्रणवोपासक ज्ञानवान्के संचित आगामी प्रारब्ध ये तीनोंकर्मोंका अभावहोताहै। अर्थात् ओंकारके उपासक मुमुक्षुको तीनोंप्रकारके कर्मरूपीपापसे ओंकारशुद्ध करेहै ताते ओंकारकानाम शुक्लहो है सौम्य औरसुनो यह संचितादि तीनप्रकारके जे कर्महैं सो देहाभिमानी अज्ञानीको सत्यहै। अरु ज्ञानवान्के तीनोंकर्म अभाव होजातेहैं तहां संचितकर्मतो ज्ञानहोतेही ज्ञानाग्निकरके नष्टहोजातेहैं ताते आगे पुनर्देहका अभावहोताहैं। जैसे कोईपुरुष अपने अन्नकरेभरेहुए मंदिरको भस्मकरदे तब सो अग्निकरके दग्धभये अन्नकेदाने अंकुरउपजावनेको समर्थनहींहोते। तैसे ही ज्ञानवान्का अन्तःकरणरूपमंदिर संचितकर्मरूप अन्नदाने सहित ज्ञानाग्निकरके दग्धहोजाताहै सो पुनः शरीररूपी अंकुर उपजावनेको समर्थनहीं। सो अन्तःकरणका नाश इसप्रकार होताहै जो ज्ञानवान्काचित्त सत्पदको प्राप्तहोताहै। हे सौम्य जिसकरके असम्यक्ज्ञान दर्शनहोय अर्थात् सत्स्वरूपआत्माविषे असत्यबुद्धिहोय अरु असत्यदेहादिकोंविषे सत्यात्मबुद्धिहोय तिसकानाम असम्यक्दर्शन मन है अरु अज्ञान जीव है। अरु जब आचार्यके उपदेशद्वारा सत्य आत्मानुभव विज्ञानहोताहै तब अज्ञानरूप जीव मनभाव नष्टहोजाताहै तब केवलशुद्ध आत्मपद ज्यों का त्यों शेषरहताहै तिसको चित्तसत्कहतेहैं। इसप्रकार जब चित्तसत्पदकोप्राप्तहोता-

है तब अन्तःकरणजोहै मनभाव सो संचितकर्मों सहित अन्नकेमंदिरवत्, नष्टहोजाताहै तब पुनः देहउपजावनेको समर्थनहींहोते ॥ अरु क्रियमानजेकर्महैं सो ज्ञानीकोविषे उपजतेही नहीं क्यों कि क्रियमाणकर्म जो उपजतेहैं सो अज्ञानके आश्रय अन्तःकरणविषे उपजतेहैं सो अन्तःकरणज्ञानवानूका सहितअज्ञानके नष्टहोताहै ताते ज्ञानवानूकों क्रियमाण आगामीकर्म उपजते नहीं। अथवा ज्ञानीपुरुष साक्षात् आत्मपदविषे प्राप्तभयाहै सो आत्मपद क्रियासेरहित अक्रियहै ताते भी ज्ञानवानूके स्वरूपविषे क्रियमाणादिकर्मका अभावहै। अरु ज्ञानीकी जीवन्मुक्तअवस्थाविषे जो देहक्रियादीखतीहै सो देहकेप्रारब्धसेहै सो सर्वकों समानहोतीहै परंतु सोई क्रिया जब अनात्मअहंकारपूर्वकहोतीहै तब क्रियमाणभावकों प्राप्तहोय पुनः संचितसंज्ञाकोंपाय अपना फल जे सुख दुःख तिसकों प्रारब्धरूपसे भोगावेहै अरु नानाप्रकारके उत्तम मध्यम कनिष्ट देहोंकों उपजावेहै। ताते देहाभिमानी अज्ञानीकों उनकी क्रिया जन्मदायकहोतीहै। अरु वोही क्रिया जो पूर्वसंस्कारसे प्रारब्धवश देहविषे दीखतीहै सो जब अहंकारपूर्वक नहींहोती तब वो क्रियमाणसंज्ञाकों भी नहीं प्राप्तहोती तब संचित अरु प्रारब्धभावकों भी नहींप्राप्तहोती क्योंजो क्रियाबंधनका मूल अनात्मअहंकारहीहै सो जिसका अभावभयाहै तिसकी जो वर्तमानशरीरक्रिय

है सो क्रियमाण संचित प्रारब्ध इनसंज्ञाकों प्राप्तहोय पुन
र्जन्मकाकारणहोतानहीं । अरु देहविषे जो क्रियाहोतीहै
सो पूर्वजन्मके केवलप्रारब्धसंस्कारसेहोतीहै सो प्रारब्ध
देहकेसाथहै सो देहकेसाथ नाशमानहोनहारहै । प्रार-
ब्धकेअभावसे देहका अभाव अरु देहके अभावसे प्रा
रब्धका अभावहोताहै ताते अन्योऽन्याश्रय दोनो असत्य
हैं । ताते हे सौम्य ज्ञानीकों क्रियमाणकर्मनहीं क्यों जो ऽ
ज्ञानी सर्वअहंकारसेरहित अक्रिय आत्मपदकों प्राप्तभ
याहै ताते ज्ञानीके शरीरकी क्रिया क्रियमाणभावकों
नहीं प्राप्तहोती ॥ जैसे भोजनरूपजो क्रियाहै सो मानो
पूर्वसंस्कारजन्य प्रारब्धरूप क्रियाहै सो क्रियाजबहो
तीहै तब निरोगीके देहविषे पुष्टिरूप क्रियमाणसंज्ञाकों
पावतीहै अरु वोही प्रारब्धजन्य भोजनरूपक्रिया सरोग
शरीरविषे पुष्टतारूप क्रियमाणसंज्ञाकों नहीं प्राप्तहोती।
तैसेही जिज्ञासुपुरुष जब साक्षात् आत्मज्ञानरूपीरोग
संयुक्तहोताहै तिसअवस्थामें उसकेशरीरविषे जे प्रारब्ध
जन्य क्रियाभोग दृष्ट आवतेहैं तथापि वो क्रिया क्रिय
माणरूपपुष्टताकों नहीं प्राप्तहोती । अरु जिसपुरुषकों
साक्षात् आत्मज्ञानरूपी रोगनहीं ऐसा जो निरोगी अज्ञा
नीहै तिसकों प्रारब्धक्रियासे क्रियमाणरूपक्रिया उप
जतीहै निरोगीकेभोजनवत् ॰ यहां वैधर्म्यदृष्टान्तहै ता
ते हेसौम्य इसप्रकार ज्ञानीपुरुषविषे संचित क्रियमा
ण दोनों क्रियानहीं अरु जो पूर्वसंस्कारजन्य प्रारब्धऽ

रूप क्रियाहै सो भी वास्तवमें ज्ञानीकेस्वरूपविषे नहीं १ देहके आश्रय प्रतीतहोताहै सो ज्ञानी अज्ञानी दोनोंकों तुल्यहै परंतु अज्ञानी तो तिसविषे अहंकारपूर्वक राग-द्वेषसहित अपनेआपकों कर्त्ता भोक्ता मानेहै ताते उसकी क्रिया क्रियमाण संचित प्रारब्ध तीनोंसंज्ञाकों प्राप्तहोय पुनः शरीरोत्पत्ति अरु सुखदुःखादि भोगका कारणहोतीहै । अरु ज्ञानवान्की शरीरक्रिया पूर्वप्रारब्ध वशात्होतीहै परंतु तिसविषे ज्ञानवान्कों अहंकार रागद्वेष कर्तृत्व भोक्तृत्व भावनहीं ताते ज्ञानवान्की देहक्रिया पुनर्जन्म अरु सुखदुःखादि भोगोंकाकारणनहीं ताते हे सौम्य ओंकारके उपासक ज्ञानवान्के संचित क्रियमाण प्रारब्ध तीनोंकर्म नाशकरके उसकों ओंकार शुद्ध अक्रिय आत्मपदविषेप्राप्तकरताहै एतदर्थ १ ओंकारकानाम शुक्र है ॥ अथवा स्थूल सूक्ष्म कारण तीनों शरीरोंका जो अभिमानरूप पापहै तिसकोभी नाशकरके अपने उपासककों शुद्धकरताहै ताते ओंकारकानाम शुक्र है । अथवा तीनजे त्रिपुटी हैं ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय, ध्याता ध्यान ध्येय, कर्त्ता कर्म क्रिया इत्यादिजे अज्ञानजन्य त्रिपुटीरूप पापहैं तिनपापोंसे छोडायके अपने उपासककों शुद्धकरताहै एतदर्थ १ ओंकारका नाम शुक्रहै ॥ हे सौम्य यह तुमकों ओंकारके षष्ठ शुक्र नामका अर्थ संक्षेपमात्र कहाहै १ तिसका विचार कर शुद्धहो ॥ ६ ॥

॥७॥सप्तमनाम वैद्युत॥

हे सौम्य अब ओंकारके सप्तम वैद्युतनामका अर्थ श्रवण करो। विद्युतनाम है प्रकाशका सो ओंकार अपने ज्ञानरूप प्रकाशकरके अपने उपासकके अज्ञानरूप अंधकारको नाशकरके अपना आप आत्मरूप पदार्थ प्रत्यक्षकरदेताहै दीपकवत्। तथाच "यदेतद्विद्युतो"। के०उ०के ४ खंडमें। तथा "ज्ञानदीपेन भास्वता"। गी० अ० के श्लोकमें। ताते ओंकारका नाम वैद्युत है॥७॥

॥८॥ अष्टमनाम हंस॥

हे सौम्य अब ओंकारके अष्टम हंस नामका अर्थ श्रवणकरो। हंस नाम सूर्यकाहै जैसे सूर्य रात्रिको अरु तज्जन्य अंधकारको अरु तज्जन्य अभासको नाश करताहै। तैसे ही ओंकाररूपी सूर्यहै तिसकी उपासना अर्थात् विचार ध्यान उच्चार जोउपासककरताहै तिस उपासकके अंतःकरणमें ज्ञानरूपसे सूर्यवत् उदय होय अविद्यारूपीरात्रि तदाश्रित तमोगुण अरु तदाश्रित कारण सुषुप्ति तिसको अभावकरके शुद्ध तुरीय रूपसे प्रकाशताहै ताते ओंकारकानाम हंसहै। तथाच "आदित्य उद्गीथ एष प्रणवः"। छां०उ०के ५ पाठकके ५ खंडकीश्रुतिमें। अथवा हंस उसकोभी कहतेहैं जो मिश्रितभये दूधजलको पृथक् २ करताहै। तैसेही ओंकाररूप हंसहै सो अपने उपासककी चिज्जडग्रंथी जो दूधजलवत्, मिश्रितहै तिस चिज्जडग्रं-

थिको खोलके चैतन्यरूपदूध अरु जड़रूप जलको पृथ-
क२ करके अपनेउपासककों आत्मरूप दूधकी प्राप्ति
करताहै ताते ओंकारका नाम हंसहै तथाच "हंसः
शुचि" । क०उ०के५ मीवल्लीकी २ श्रुतिमे । अर्थात् ओं-
कार अपनेउपासककी अविद्यारूपरात्रि अरु अनात्म
जड़रूप जलकों नाशकरके स्वयंज्योति सर्वकासार नित्य
अपनाआप आत्मपदविषे प्राप्तकरताहै ताते ओंकार-
कानाम हंसहैं ॥ ८॥

॥९॥नवमनाम तुरीय ॥

हे सौम्य अब ओंकारके नवम तुरीया नामका अ-
र्थ श्रवणकरो। तुरीया उसकों कहते हैं जो स्थूल सूक्ष्म
कारण अरु जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति अरु विश्व तैजस प्रा-
ज्ञ इत्यादिकोंका प्रकाशक साक्षी है तिसका नाम तुरी-
य है अरु सोई ओंकारका लक्ष्यहैं तिसअपने लक्ष्यरूप
की प्राप्ति अपने उपासककोंकराय तीनोंअवस्थारूप
संसारसे तारदेताहै ताते ओंकारका नाम तुरीय है।९।

॥१०॥ दशमनाम ब्रह्म ॥

हे सौम्य अब ओंकारके दशम ब्रह्म नामका अर्थ
श्रवणकरो। परा पश्यन्ती मध्यमा वैखरी इनचारवा-
चाकरके जो प्रकटहोताहै सो ओंकारका वाच्य शब्दब्र-
ह्महै। तहां परा उसकोंकहतेहैं जहां पश्यन्ति मध्यमा
वैखरी तीनोंवाणीकी समष्टताहै अरु जहांसे पश्यन्ती
का उत्थानहोताहै सो परावाचाहै अरु पश्यन्तिस्फुरण

रूपहै तिसविषे यहस्फुरणहोताहै जो कुछ कहों इसस्फुरण- का नाम पश्यन्तीवाचाहै अरु जब वो स्फुरण निश्चया- त्मकहोतीहै जो अब कहो तिसकानाम मध्यमावाचाहै।अ- रु उसी निश्चयसे करके होठ जीभ हिलाय प्रकट कहा त- ब तिसको वैखरीवाचा कहतेहैं तिस वैखरीविषे चार वेद षट्शास्त्र अष्टादशस्मृति अष्टादशपुराण इति- हासादि जो विद्याहैं अरु नानाप्रकारकी देशभाषाहैं। अरु नानाप्रकारकी जो पशुआदिकोंकी भाषाहै सो ८ सर्व स्थूलरूप वैखरीविषे स्थितहै। तथाच "सर्वेषांवेदा नां वागेकायनम्"। बृ०उ०के अ०६ की बा०५ मेंके ११मी श्रुतिमें। तहांसे स्वर वर्णात्मक शब्दरूपसे प्रकटहोयहै सो सर्व ओंकारका वाच्य शब्दब्रह्महै तहां वेदरूप शब्द ब्रह्म ओंकारकी उपासना अध्ययन विचाररूप करनेसे शब्दब्रह्मकरके प्रतिपाद्य जे ओंकारका लक्ष्यनिर्विशे- ष परब्रह्म परमात्मा तिसकी अपनेआप आत्मत्वसेकर के प्राप्तहोतीहै। तथाच "शब्दब्रह्मणि निष्णातः परब्र- ह्माधिगच्छति" इति। ताते इस ओंकारको परब्रह्मकहते- हैं यह ओंकारके दशम परब्रह्मनामका अर्थहै ॥ १०॥

हे सौम्य इस ओंकारब्रह्मके अनेकनामहैं अरु स- र्ववेदकरके इसकी उपासना अनेकप्रकारसे प्रतिपाद्य है परन्तु यहां संक्षेपमात्र अति स्वल्पकरके तुम्हारेप्रति कहाहै। अरु और उपासक विद्वानोंने जिसरप्रकार मात्राओंके भेदसे उपासनाकियाहै सो भी तुम्हारेवो-

र्थ संक्षेपमात्र कहतेहैं । हे सौम्य वाष्कल्यऋषिहैं।
तिनकेमतविषे ओंकारको एकमात्रारूपसे भजतेहैं। अ-
रु साल अरु काइत आचार्यहै तिनकेमतविषे ओंका
रको दो मात्रारूपजानके भजतेहैं । अरु नारदऋषि-
केमतविषे ओंकारको ढाई २॥ मात्रारूपजानके भजते
है। अरु मोंडल किंवा मांडुक्य ऋषिकेमतविषे ओं-
कारको तीनमात्रारूप जानके भजतेहैं अरु सनत्सिद्धा
न्ति आदि अन्यऋषियोने भी तीनमात्रारूपजानके उ-
पासना कियाहै । अरु पराशरादि जे अध्यात्मचिन्त-
क मुनिहैं तिनके मतविषे चारमात्रारूपजानके ओंका
रका भजनकरतेहैं । अरु वशिष्टभगवान्के मतविषे
ओंकारको साढेचार ४॥ मात्रारूपजानके भजतेहैं।
अरु और २ ऋषियोंने और २ मात्रारूपसे भजनकिया
है । अरु भगवान् याज्ञवल्क्यजी ओंकारअक्षरको अ
मात्रारूपसे भजतेहैं । ताते वेदशास्त्रद्वारा किंवा आ-
चार्य अथवा अपनेआपअनुभवद्वाराजैसा जिसने २
ओंकारको जानाहै तैसेही उपासनाकियाहै अरु सर्व
का ही भजना सफलहै क्यों जो ओंकारब्रह्मकी अन-
न्त मात्राहैं जैसारूपजानके जिसने भजनकियाहै तिस
ने एक ओंकारहीका कियाहै क्यों जो सर्वरूप ओंका
रहीहै । तथाच "सर्वओंकारमेव", "ओंकारएवेदं सर्वम्"
ताते सर्वकाभजनकरना सुफलहै सो यह वाच्यरूप
विशेष ओंकारका भजनहै । अरु जो लक्ष्यरूप नि-

विषेपा ओंकारब्रह्महै सो वास्तवमें अमात्रिकहै उसवि
षे मात्राकोईनहीं । हे सौम्य इस ओंकारके दो रूपहैं ।१
तथाच "एतद्वै सत्यकाम परंचापरंच ब्रह्मयदोंकारः" । प्र०
उ०के ५ मे प्र०की २ श्रुतिमे । एक सगुण एक निर्गुण त-
हां सगुण तो समात्रिक शब्दमय ओंकार ब्रह्महै । अरु
निर्गुण शब्दसे रहित अमात्रिक लक्ष्यरूप ओंकार ब्रह्म
है । तहां अब सगुण ओंकार ब्रह्मकी मात्राके भेदसे ऋ
षियोंने जो२ उपासनाकिया अरु कहाहैं तिसको श्रीश्र
वणकरो ॥

हे सौम्य शाकल्यऋषिहैं कि जिनकेमतविषे ओं
कारको एकमात्रारूपजानके उपासनाकरतेहैं सो इस
प्रकार कहतेहैं कि जितनाकुछ स्थूल सूक्ष्म विराट्वपुहै
सो सर्व ओंकारकाहीस्वरूपहैं तिससे इतर कुछ नहीं।१।
अर्थात्ओंकार जो ईश्वरहैं सो दो प्रकारकाहै एक सगु
ण दूसरा निर्गुण तिनके भजनकरनेवाले अपने२ अ-
धिकारको देखे भजन करतेहैं तहां सगुणब्रह्मके उपासक
जानतेहैं कि इस सगुणरूपका अधिष्ठान आधार नि-
र्गुणहै ताते यही ओंकार ईश्वरहै इससे इतर निर्गुण२
नहीं । अरु निर्गुणब्रह्मके उपासक जानतेहैंकि ओं-
कार निर्गुणब्रह्महै सो अपनी इच्छाशक्तिकरके सगुण
रूपभयाहै ताते निर्गुणसेइतर सगुण नहीं ताते निर्गु-
ण सगुण दोनों एक ओंकारब्रह्मके ही स्वरूपहैं ताते२
दोनोंप्रकारके उपासक कल्याणको प्राप्तहोतेहैं ताते२

ओंकार एकमात्रारूपही है। अथवा यावत् स्थूलरूपविराट्
जगत्है तावत् सर्व विराट्पुरुषका वपुहै ताते हम इस ए-
कमात्रारूप ओंकारब्रह्मकी उपासना करतेहैं। यह एक
मात्रारूपसे ओंकारका भजनकरनेवालेका मतहै ॥१॥२

हे सौम्य सात्व अरु कात्यायन आदि जे ओंकारकी दोमात्रा
के उपासकहैं सो इसप्रकार कहतेहैं जो ओंकार दो मात्रा
रूपहै तहां एक स्थूलरूप कार्यमात्रा अरु दूसरी सूक्ष्मरू-
प अव्याकृत सूक्ष्ममात्राहै। इसप्रकार स्थूल सूक्ष्म दो मात्रा
हैं जिसकी तिस ओंकारब्रह्मकी हम उपासनाकरतेहैं॥
अथवा जो ओंकार चैतन्य ब्रह्महै जिसकी दोमात्राहैं एक
यह स्थूलरूप जाग्रत् जगत् दूसरी स्वप्नरूप सूक्ष्मजगत्
इन दोनोंका साक्षी चैतन्यलक्ष्यहै जिसकी हम उपासना-
करतेहैं। यह ओंकारके दोमात्राके उपासकोंका मतहै॥

हे सौम्य नारदादि जो ओंकारकी २॥ अढाई मात्रा-
के उपासकहैं सो इसप्रकार कहतेहैं जो अकार जाग्रत्-
रूप जगत्है अरु उकार स्वप्नरूप जगत्है अरु मकार
सुषुप्तिरूप अर्धमात्राहै कि जिसविषे जाग्रत् स्वप्न दोनों
लीनहोतेहैं सो किसीविषे लीननहीहोताहै ताते इसका-
नाम सुषुप्ति अर्धमात्राहै इसप्रकार २॥ मात्रारूप जो
है जगत् सो है वपुजिसका तिस ओंकारब्रह्मकी हम २
उपासना करतेहैं। अथवा अकार स्थूलदेह जाग्रतज-
गत्समेत प्रथममात्रा अरु उकार सूक्ष्मदेह स्वप्नमनो-
राज्य जगत्समेत दूसरीमात्रा अरु अर्धमात्रा चैतन्य।

तत्त्वहै सो सर्वका ज्ञाताहै उसका ज्ञाता कोई नहीं। तथाच "नदेवाविदिता दथोऽविदितात्" के०उ०के१ खंडकी ३ श्रुतिः। तातें उसकानाम अर्धमात्राहै ऐसा जो ३॥ मात्रारूप ओंकारहै तिसकीहम उपासनाकरतेहैं। यह ओंकारके ३॥१ मात्राके उपासकोंका मतहै ॥ ३ ॥

हे सौम्य मौद्गलऋषि आदि जो ओंकारके तीनमात्राके उपासकहैं सो इसप्रकार कहतेहैं जो जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति तीनअवस्था, अरु अकार उकार मकार यह तीनमात्रा, अरु ब्रह्मा विष्णु रुद्र, देवता यहहै वपु जिसका अरु सोईहै स्थूल सूक्ष्म कारणरूप सर्वजगत्का धारणकरनेवाला तिसकी हम उपासनाकरतेहैं। अरु तीनमात्रारूप उपासना अनेकप्रकारसे कहीहै अरु सप्रसिद्धज्ञानियोंने भी तीनमात्रारूपसे कहीहै। यह ओंकारके तीनमात्राके उपासकोंका मत है ॥ ४ ॥

हे सौम्य अब साढेतीनमात्राके उपासक इसप्रकारकहतेहैं जो अकार उकार मकाररूप जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति यह तीन मात्राहैं अरु अर्धमात्रारूप चैतन्यब्रह्महै अरु कोई एक आचार्य इसप्रकार कहतेहैं जो प्रथममात्रा अकार स्थूलजगत् अरु दूसरीमात्रा उकार सूक्ष्म जगत् अरु तीसरीमात्रा जीवकला अरु अर्धमात्रा सर्वाधिष्ठान परमपदरूपहै कि जिसविषे जीवकलासंयुक्त स्थूल सूक्ष्म सर्व लयहोताहै ऐसाजानके हम ओंकारकी उपासनाकरतेहैं। यह ओंकारके साढेतीन

मात्राके उपासकोंकामतहै॥५॥

हे सौम्य पराशरादिऋषिआदि जे ओंकारकी चारमा-
त्राके उपासकहैं सो ऐसाकहतेहैं जो प्रथम मात्रा अका-
ररूप स्थूल विराट्पुरुष अरु दूसरीमात्रा उकाररूप
सूक्ष्म हिरण्यगर्भ अरु तृतीयमात्रा मकाररूप कार-
ण अव्याकृत अरु चतुर्थ बिंदुरूप चैतन्यपुरुष कि
जिसके आश्रय यह समष्टि व्यष्टि तीनोंशरीरहैं सो
चैतन्य परमपदहै ताते सर्व चैतन्यहीहै ताते हम ओं-
कारको चारमात्रारूपसे भजतेहैं। यह ओंकारके चा-
र मात्राके उपासकोंकामतहै ॥ ६ ॥

॥हे सौम्यवशिष्ठादि ऋषि जो ओंकारको साढे-
चारमात्रारूपजानके उपासनाकरतेहैं सो ऐसाकहते-
हैं कि अकार प्रथम मात्रा सो यह स्थूल जगतहै अ-
रु उकार दूसरीमात्रा सो यह सूक्ष्म जगतहै अरु म-
कार तीसरीमात्रा सो यह सुषुप्तिहै अरु चतुर्थमात्रा
नादरूप परमशक्तिहै अरु अर्धमात्रा चैतन्यपुरुषहै
कि जिसकेआश्रय चारों मात्रा सिद्धहैं तिस ओंकारकी
हम उपासनाकरतेहैं। यह ओंकारके साढेचारमा-
त्राके उपासकोंका मतहै ॥ ७ ॥

हे सौम्य कोईएक पुरुष इस ओंकारको पांच-
मात्रारूप विचारके भजतेहैं सो ऐसाकहतेहैं कि ९
अकार अन्नमयकोश, उकार प्राणमयकोश, मका-
र मनोमयकोश, अर्धमात्रा विज्ञानमयकोश; बिंदु

आनन्दमयकोषहै । यह पांचमात्रा जिसचैतन्य आ-
त्माके आश्रयहैतिस ओंकारस्वरूपको हम उपासनाकरते
हैं । यह पांचमात्राके ओंकारके उपासकोंका मतहै ॥ ८॥

हे सौम्य जे कोई पुरुष ओंकारको षट्मात्रारूप ९
जानके भजतेहैं सो ऐसा कहतेहैं कि जो अकाररूपजा-
ग्रत जगत्है उकाररूप स्वप्नजगत्है मकाररूपसुषुप्तिहै
अरु अनहदशब्दसे आदि जो वाच्यहैं सो शब्दरूप च-
तुर्थमात्राहै अरु बिंदुरूप कारणप्रकृति पंचममात्राहै।
अरु षष्ठ रूप साक्षी आत्माहै । ऐसा है स्वरूप जिसका
तिस ओंकारब्रह्मको हम उपासनाकरतेहैं । यह षट्९
मात्रारूप ओंकारके उपासकोंका मतहै ॥ ९ ॥

हे सौम्य कोई एक आचार्य ओंकारको सप्त मा-
त्रारूपजानके भजतेहैं सो ऐसा कहतेहैं कि पृथिवी
अप् तेज वायु आकाश यह पंचभूत तत्त्व अहंकार
अरु महत्तत्त्व यह सातमात्राहैं अरु इनका आपचै-
तन्यपुरुषहै तिसको हम उपासनाकरतेहैं । यह सात
मात्रासे ओंकारकी उपासनाकरतोंका मत है ॥ १० ॥

हे सौम्य इसप्रकार ३८ - ४९ - ५२ - ६१ - ६४ ॥११
मात्रा पर्यन्त ओंकारको उपासनाकरतेहैं सो आचार्य
ऐसाकहते हैं कि जेतनेकुछ वर्णादिकहैं सो सर्व ओं-
कारकीमात्राहैं क्योंजो अपनेकारण ओंकारसे फुरी-
हैं अरु स्फुरणहोतीहैं ताते सर्व ओंकार हीकी मात्राहैं।
इसहीसे ओंकाररूप सर्व जगत्है जिसकिसी पदार्थ

का नामहै सो सर्व उक्तमात्राओंके अन्तरहैं अरु जेतने कुछ वर्णाक्षरहैं सो सर्व ओंकारकी मात्राहैं ताते वर्णाद्मकजे ओंकार अक्षरहैं सो सर्व नामोंकेविषे ओत प्रोत हैं ताते ओंकाररूपही सर्व जगतहै । ओंकारही वाच्यरूपहोके इसप्रकार आदि अन्त मध्य सर्वत्र सर्वरूपसे ओत प्रोतहै अरु लक्ष्यरूप जो चैतन्य आत्माहै सो अस्ति भाति, प्रिय रूपकरके व्याप्तहै ताते वाच्य वाचक सर्व एक ओंकारही है ॥

हे सौम्य अब इस ओंकारके मात्रा ऋषि छंद देवतादि श्रवणकरो । अकार, उकार, मकार, यह तीन मात्राहैं । अग्नि, वायु, सूर्य यह तीन ऋषिहैं । गायत्री, त्रिष्टुप्, बृहती, यह तीन छन्दहैं । ब्रह्मा विष्णु रुद्र, यह तीन देवताहैं । श्वेत, रक्त, कृष्ण यह तीन वर्णहैं । जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति यहतीन इसकी अवस्थाहैं । भूलोक, अन्तरिक्षलोक, स्वर्गलोक यह तीन लोक किंवा व्याहृतिहैं । उदात्त, अनुदात्त, स्वरित यह तीन स्वरहैं । ऋग्, यजु, साम, यह तीन वेदहैं । गार्हपत्य दक्षिणाग्नि आहवनीय यह तीन अग्निहैं । प्रातः मध्याह्न सायं यहतीन संधिकालहैं । भूत, भविष्य, वर्तमान यह तीन कालहैं । सत्व, रज, तम यह तीन गुणहैं । उत्पत्ति, स्थिति, संहार यह तीन क्रियाहैं । कर्म, उपासना, ज्ञान यहतीन कांडहैं । विराट्, हिरण्यगर्भ, अव्याकृत, यह तीन शरीरहैं । स्त्री, पुरुष

नपुंसक, यह तीन लिंग हैं। होता अध्वर्यु, उद्गाता, यह तीन इसके ब्राह्मण हैं। ज्ञान ऐश्वर्य, शक्ति, यह तीन स्वभाव हैं। बहिः, अन्तर, घन, यह तीन प्रज्ञा हैं। अन्न, जल, चंद्रमा यह तीन भोग हैं। अग्नि, वायु, सूर्य, यह तीन भोक्ता हैं॥

हे सौम्य यह जो ७६ छियासठ मात्रा ओंकारकी कही हैं सो क्रमकरके अकार उकार मकार इन तीनों अक्षरसे उपजे हैं ताते सर्व ओंकारकी ही मात्रा हैं सो सर्व अपने २ विचार अनुभवके अनुसार विद्वान् आचार्योंने कही हैं सो भी मात्रा हैं अरु औरभी अनंतमात्रा हैं कि जिसका पार नही पाया जाता। अरु सर्वमात्रासे रहित अमात्रिक भी यही ओंकार है तिसकी उपासना आचार्योंने जिस २ प्रकार कही अरु कियाहै सो हमने अपनी अल्पबुद्धिके अनुसार संक्षेपमात्र तुमसे कहा है॥

॥ शिष्य उवाच॥

हे गुरो यह जो आपने ओंकारकी उपासना कही है सो जिज्ञासुको निर्विकल्प समाधिके पूर्व कर्तव्यही है ताते इसकी उपासनाका क्रम कृपाकरके कहिये॥

॥ गुरुरुवाच॥

हे सौम्य इस ओंकार अक्षरका जपकरना अरु इसके अर्थकी भावनाकरनी। तथाच "तज्जपस्तदर्थभावनम्"। पातंजलशास्त्रके प्रथमपादके २८ मे सूत्रमे॥ तिसका नाम उपासना है। अब तिसका प्रकार सावधानहोके श्रवणकरो। ओंकारनाम है परमेश्वरका तिसका २

जपकरना नहीं कोइतो ओम् ओम् ओम् सहितस्वर उच्चारकरके जपकरतेहैं। अरु कोई मनोमय उच्चारकर-के जपकरतेहै। कोइ प्राणायामद्वारा जपकरतेहै सो प्राणायाम इसप्रकारकरतेहै जो प्रथम पूरक अर्थात् मुखबंदकरके अरु वाम नकसोरा [नाककाछेद]सो दक्षणहाथकी मध्यमा अरु अनामिका दो अंगुलिनसों दवाय सीधे नकसोराकेद्वारा बाहसे प्राणकों अंदर खीचना पिछे सीधे नकसोराकों बंदकरना तिस-कानाम पूरकहै तिस पूरकविषे ३२ बार मनोमय ओंकारका उच्चारकरना। अरु कुंभक अन्तरप्राणरोकना तिसविषे ओंकारका ६४ बार मनोमय उच्चारकरना। अरु रेचक प्राणवायुकों वायेंनकसोराकेद्वारसें बाहर छोडना तिसविषे १६ बार मनोमय ओंकार-का जपकरना। इसप्रकार जब एकबारकरे तब एक प्राणायाम होताहै। सो कोई एक प्राणायामद्वाराभी ओंकारका जपकरतेहैं। अरु कोइ एक इसप्रकारभी करतेहैं जो ओंकारकी अकार उकार मकार तीन मात्राहैं तिनकों क्रमसे ह्रस्व दीर्घ प्लुत रूप स्वरस-हित उच्चारकरतेहै सो मूलाधार से मस्तक ब्रह्मरंध्रप-र्यंत ध्वनिकों प्राप्तहोतेहैं॥ इत्यादि अनेकप्रकार जपसे है तिनमेंसे जिसप्रकार श्रद्धासहित अपनेसे होताजा-ने तिसप्रकारकरें। यहतो ओंकारके जपका संक्षेप-मात्र प्रकारहै। अब इसके अर्थकी भावनासुनो॥

हे सौम्य जो इसओंकारके अर्थकी भावनाकरनीहै सो दो।
प्रकारकीहै तहां एक सगुण वाच्यरूप दूसरी निर्गुण लक्ष्य
रूप तहां जो सातोसिद्धान्तियोंके मतसे ६३ तिरसठ भेद ना
मरूपसे कहीहै सो। दूसरे ओंकारके मात्रा ऋषि देवता
आदि ६६ छियासठ भेदसे कहीहै सो। अथवा जो एक२
मात्रासे लेके १८-४५-५२-६३-६४ मात्रापर्यंत कही
हैसो। इन तीनो प्रकारसे जो इस ओंकाररूपके अर्थकी।
भावनाकहीहै सो ओंकारके वाच्य सगुणब्रह्मकी भाव
नाहै। अरु ओंकारके लक्ष्य निर्गुणब्रह्मकी भावना उ-
पासक इसप्रकार करतेहै जो जिस ओंकारब्रह्मकी हम
उपासनाकरतेहै तिस त्रिमात्रिक प्रणवशब्दका जो जा-
ननेवालाहै सोई सर्वका साक्षी सच्चिदानंदब्रह्म आ-
त्माहै सोई सर्वत्र सर्व, अस्ति भाति प्रिय, रूपहोकर
व्याप्तहोरहाहै। तहां अस्ति कहिये है है है यह सत्ता-
रूपजो व्याप्तहोरहिहै जो कि यह नहीं यह नहीं यहनहीं
इसप्रकार सर्वनिषेधके अन्तमें निषेधके अभावरूप भा
वका प्रकाशक। कि जिसकरके अस्ति नास्ति सिद्धहोते
है अरु जो अस्तिनास्तिरूपभावनाकी कल्पनाका आ
दि अन्त शेष सर्वाधिष्ठान परम अस्तिरूपहै सोई अ
पने संकल्पसे नानाप्रकार अस्तिनास्तिभावसे सुशोभि
तहै ताते वोही अस्तिरूप सर्वाधिष्ठान सर्वत्र पूर्णहै॥
अरु भाति जो प्रकाशताहै। अर्थात् जो पदार्थ भा
सताहै सो सर्व भातिरूपहै क्यों जो एक दूसरेको प्र-

काशताहै जैसे अंधकारके अभावको प्रकाश प्रकाशेहै अथवा रात्रिकेअभावको दिवस प्रकाशेहै जो इस समय रात्रि किंवा अंधकार का अभावहै। अरु १ दिवस किंवा प्रकाशमें रात्रि किंवा अंधकार का अभावहै सो अभावरूपसे जो रात्रि किंवा अंधकार सो दिवस किंवा प्रकाशके भावको प्रकाशेहै क्यों कि जो कदापि उसकालमें रात्रि किंवा अंधकारका अभाव नहोता तो दिवस किंवा प्रकाशका अस्तित्वकैसेहोता ताते अभावरूप रात्रि किंवा अंधकार सो भावरूप दिवस किंवा प्रकाशको प्रकाशेहै ॥ अथवा दीपक जो है प्रकाशरूप सो अप्रकाशरूप पदार्थ को प्रकाशेहै तैसे ही अप्रकाशरूपपदार्थ आप अप्रकाशरूपहोतसंते प्रकाशरूप दीपकको सिद्धकरतेहै जो कि अप्रकाशरूप पदार्थ न होता तो दीपकप्रकाशरूप है ऐसा किसआधारसे सिद्धहोता। ताते अप्रकाशरूप पदार्थ प्रकाशरूप दीपकको प्रकाशेहै ॥ हे सौम्य इसप्रकार भाव अभाव प्रकाश अप्रकाश आदि यावत् भूत भौतिक पदार्थहैं सो सर्व भ्रांति रूपहैं ताते जो स्वयंप्रकाश अस्तिमात्र निर्विशेष आत्मसत्ताहै सोई सर्वरूपहै। तथाच "तस्यभासासर्वमिदंविभाति"। क० उ० वी ५ वल्लीकेअंतमें ॥ अरु प्रिय कहतेहै आनंदको सो आनंदरूपब्रह्महै सोई सर्वत्र सर्वरूपसे व्याप्तहै यावत् जोकुछ कर्तव्य अकर्तव्य गुण दोष पाप पुण्य

राग द्वेष ग्रहण त्याग इत्यादिहै तावत् सर्व आनंदरू-
पहीहै जो कोई शुभ अशुभादिकरतेहैं सो सर्व आनं-
न्दार्थही करतेहैं। अरु जो कोई जोकुछकरताहै तिसको
उसहीमें आनंदहोताहै जो उसमें आनंद न होय तो कोई
भी कुछ न करे। अरु जो जिस आनंदकेअर्थ ग्रहण
त्याग शुभाशुभ आदिकरतेहैं सो आपही परमानन्द-
रूपहै सोई सर्वानन्दभयाहै। तथाच "आनन्दाद्धेवख-
ल्विमानिभूतानि जायन्ते"। तै०उ०की भृगुवल्लीमें।
तातें जहांहै जोहै सो सर्व आनन्दहीहै॥ इस प्रकार
केवल अद्वितीय निराकार निर्विकार सच्चिदानन्दब्रह्म
है सोई इसप्रकार अस्ति भाति प्रिय रूपहोकर व्या-
प्तरहाहै तातें। "ओंकारएवेदंसर्वम्, सर्वंखल्विदंब्रह्म
नेहनानास्तिकिंचन"। सर्व ओंकारब्रह्महीहै उससे इ-
तर कुछ नहीं। इसप्रकार ओंकारके लक्ष्यनिर्गुण
ब्रह्मकी भावनारूप उपासना करतेहैं भावनाकहिये
सोहम् भावसे निदिध्यासनकरतेहैं॥ हे सौम्य कहे
प्रकार ओंकारका जप अरु तिसकेअर्थकी भावना
करनी औ प्रत्यक् चैतन्य सर्वका अन्तर्यामि सर्वअ-
वस्थाका साक्षी अखंड अज अविनाशी चैतन्यब्रह्म
सोई मैं अपनाआपहौं इसप्रकार जब अपनाआप
साक्षात् अनुभव अभ्यास करताहै तब तिसके अ-
न्तराय जो विघ्नहैं सो सर्व अभावहो जाते हैं। तथाच
"ततः प्रत्यक् चेतनाधिगमोप्यन्तरायाभावश्च"। इति

पातंजल्य शास्त्रके प्रथमपादका २९ वा सूत्र ॥

॥ शिष्य उवाच ॥

हे प्रभो वो अन्तराय भी कौनहैं जो आत्मप्राप्तिमें मुमुक्षुकों विघ्नकरतेहैं तिनको भी आपकृपाकरकहिये।

॥ गुरुरुवाच ॥

हे सौम्य विघ्नोंके नाम अरु स्वरूप पातंजल्ययोगशास्त्रके - ३० - ३१ दो सूत्रमें कहाहै। तथाच "व्याधि स्त्यान संशय प्रमदालस्याविरति भ्रान्ति दर्शनालब्धभूमिकत्वानवस्थितत्वानि चित्तविक्षेपास्तेऽन्तरायाः ॥३०॥ दुःख दौर्मनस्याङ्गमेजयत्व श्वास प्रश्वासा विक्षेप सहभुवः॥३१॥" सोई तुमारे प्रति कहतेहैं। व्याधि१, स्त्यान२, संशय३, प्रमाद४, आलस्य५, अविरति६, भ्रान्तिदर्शन७, अलब्धभूमिकत्व८, अनवस्थितत्व९, दुःख१०, दौर्मनस्य११। अङ्गमेजयत्व१२। श्वास१३, प्रश्वास१४, । यह चतुर्दश आन्तर विघ्न समाधिमें चित्तको विक्षेपकरनेवालेहैं। अब इनके स्वरूप श्रवणकरो ॥ तहां व्याधि उसको कहतेहैं जो उदरस्थ अन्नरस धातुहै सो कफ वात पित्त इनके क्षोभसे बिगड़ताहै तब विषमहोनेसे ज्वरादि व्याधिहोतीहै। १। अरु स्त्यान, उसको कहतेहैं जो अकर्मण्यता चित्तकी अर्थात् शुभकर्मविषे चित्तका न प्रवर्त्तना। २। अरु संशय, उसको कहतेहैं जो ईश्वर है या नहीं अरु जो है तो ज्ञानयोगसे साध्यहै या नहीं अर्थात् ज्ञानयोग अ-

भ्यासमे सिद्धहोनाहै या नहीं।३। अरु, प्रमाद, उस-
कों कहतेहै जो समाधिके साधनोंविषे उदासीनता-
होनी।४। अरु, आलस्य, उसकों कहतेहै जो देह अ-
रु चित्तका गुरुत्वभाव। अर्थात् जड़वत् होरहतेहै सो
ज्ञानप्रवृत्तिके अभावकाकारणहै तिसकों आलस्य
कहतेहैं।५। अरु, अविरति, उसकों कहतेहै जो वि
षयोंके संयोगसे भोगकी इच्छा होनी।६। अरु भ्रा
न्तिदर्शन, उसकों कहतेहै जो विपर्ययज्ञानदर्शनहैं
अर्थात् जैसें सीपविषे रूपेका भासना तिसकाना-
म भ्रान्तिदर्शनहै।७। अरु, अलब्धभूमिकत्व, उसकों
कहतेहै जो ज्ञानकी सप्तभूमिकाकहीहै तिनमेंसे को-
ई भी भूमिका अरु योगकी जो निरोधरूपी एकाग्र-
ता सो किसी विशेषसे नप्राप्तहोनी तिसकानाम अ-
लब्ध भूमिकत्वहै।८। अरु, अनवस्थितत्व, उसकों
कहतेहै जो कोइएक ज्ञानकी पायीभयी भूमिकावि-
षे चित्तकी स्थिरतानहोनी।९। अरु दुःख, उसकों-
कहतेहै जो आध्यात्मिक आधिभौतिक अधिदैविक ती-
नप्रकारके दुःखहै।१०। अरु दौर्मनस्य, उसकों कहते
है जो भीतर बाहरके कोई भीकारणोंकरके चित्तकी
विक्षेपता अर्थात् चित्तकी असमाधानता तिसका
नाम दौर्मनस्य, है।११। अरु अंगमेजयत्व, उसकोंकह
तेहै जो शरीरका कंपनाहै।१२। अरु, श्वास, उसको कह
तेहै जो प्राणका शीघ्र चलनाहै।१३। अरु प्रश्वास,

उसको कहतेहै जो दीर्घश्वास [दमकारोग] होनाहै ॥१४॥

हे सौम्य यह जो चतुर्दश विघ्नहैं सो जिनको विशेषकरके आत्मलाभार्थजो समाधि तिसविषे विघ्नकर्ता है॥ "तत् प्रतिषेधार्थमेकतत्त्वाभ्यासः।३२। तिसको२ निवृत्तिके अर्थ एकतत्त्वकाअभ्यास करे। अर्थात् इन-विघ्नोंके अभावकरनेके अर्थ अरु आत्मदेवकी साक्षात् प्राप्तिके अर्थ ओंकारब्रह्मकी अर्थभावना अरु जप करे। जे कोई ओंकारके वाच्यकी उपासनाकरते है तिनके जे निर्विकल्पसमाधिमें विक्षेपकर्ता विघ्न-हैं सो सर्व अभावहोजातेहैं अरु उपासक समाधिविचारद्वारा सर्वबंधनोंसे रहित अपनेआप चैतन्यआत्माकोंपाय मोक्षहोतेहैं॥

हे सौम्य यह जो ओंकार लक्षरूप ब्रह्महै तिसको सर्व उपनिषद कहतेहै जो यही अक्षर चिन्मात्रब्रह्महै। जो मनवाणी चक्षुआदिकोंका विषयनही तिसको ने-ति२ द्वारा सर्व विशेषताके अभावसे निर्विशेष सर्वका अपनाआपकहाहै ताते यही चैतन्यआत्मा अक्षर ब्रह्महै इसको बृहदारण्य उपनिषद्विषे भगवान्याज्ञवल्क्यजीने गार्गीप्रति कहाहै। तथाच "एतद्वैतदक्षरं गार्गी ब्राह्मणा अभिवदंत्यस्थूल मनएवहूस्वमदीर्घ मलोहितमस्नेह मच्छाय मतमो ऽवाय्वनाकाशमसंगमरसमगंधमचक्षुरश्रोत्रं मवागमनोऽतेजस्कमप्राणममुखममात्र मनन्तर मबाह्यं नतदश्नाति किंचन नत-

दश्यातिकश्चन । बृ० उ० के ५ में अ० के ८ में ब्रा० की ८ मी श्रुतिमें । अर्थ याज्ञवल्क्यकहतेहैं कि हे गार्गी जिसको तू पूछतेहै जिसको ब्राह्मण ब्रह्मवेत्ता अक्षर कहतेहैं सो ऐसाकहतेहैं कि वो स्थूलनहीं स्थूलसे पृथक् है, तो अणु सूक्ष्महोगा, वो सूक्ष्म भीनहीं, तो छोटाहोगा, वो छोटाभीनहीं, तो दीर्घहोगा, वो अदीर्घहै। इसप्रकार द्रव्यधर्मसे रहितहै। तातें वो द्रव्यनहीं। हे याज्ञवल्क्य, वो लोहितगुणवान्होगा, हे गार्गी वो अग्निके लोहितादि धर्मरहित अलोहितहै, तो स्नेहादि जलकेगुणवान् होगा, वो स्नेहादि जलकेगुणसेरहित अस्नेहहै, तो छायाहोगा, वो अछायाहै, तोतमहोगा, वो अतमहै, तोवायुहोगा, वोअवायुहै, तोआकाशहोगा, वो अनाकाशहै, तोसर्वकासंधातहोगा, वोअसंगहै, तो रसहोगा, वो अरसहै, तो गंधहोगा, वोअगंधहै, तो चक्षुवानहोगा, वो अचक्षुहै, तो श्रोत्रहोगा, वो अश्रोत्रहै। "पश्यत्यचक्षुः सश्रृणोत्यकर्णः" इति मन्त्रवर्णे। तोवागहोगा, वो अवागहै, तो मनहोगा, वो अमनहै, तो तेजहोगा, वो अग्न्यादिवत् तेजवान्नहीं अतेजहै, तो प्राणहोगा, वो आध्यात्मिकवायुरहित अप्राणहै, तो मुखादिद्वारहोगा, वोद्वाररहित अमुखहै। तो मात्राहोगा, वो अमात्रहै, तो अन्तरहोगा, वोअनन्तरहै, तो बाह्यहोगा, वो अबाह्यहै अर्थात् न भोग्यहै न भोक्ताहै॥ सर्व विशेषणसे रहित निर्विशेषहै। हे

गार्गी इत्यादिप्रकार ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मणोंने निषेधमुखसे कहाहै सो सर्वकी अवधि सीमा अन्त अधिष्ठान अक्षरकहाहै. सोई अक्षर सर्वका प्रेरकहै तिसही अक्षर नेवेदकों प्रेरणाकियाहै ब्रह्मांडकेचलावनेकेअर्थ अरु वेदने ईश्वरकोंप्रेरणाकियाहै जीवोंकों कर्मफल देनेके अर्थ अरु ईश्वरने जीवकों प्रेरणाकियाहै कर्मकरनेके अर्थ। इसप्रकारजो परंपराकरके सर्वका प्रेरक चैतन्य परम अक्षरहै तिसके भयकों पायके वेद ईश्वर जीव आपे आप नेधर्मविषैचलतेहैं। अरु सूर्य चंद्र अग्नि वायु जल पृथिवी आदि अद्यावधि जिसके भयकों पायके आप आप नेधर्मपरखडेहैं कदापि अन्यथा नहीं करनेसकते। तथाच "एतस्यवा अक्षरस्य प्रशासने गार्गि द्यावा पृथिव्यौ विधृते तिष्ठतः" इत्यादि बृ० उ० केप्र५ तैसे ८में ब्रा०विषे। तथाच "भयादस्याग्निस्तपति भयात्तपति सूर्यः भयादिन्द्रश्च वायुश्च मृत्युर्धावति पंचमः" क० उ० की ६ठीवल्लीकी ३ श्रुति। तथाच "भीषास्माद्वातः पवते भीषोदेति सूर्यः भीषास्मादग्निश्चेन्द्रश्च मृत्युर्धावति पंचम" । तै० उ० की आनंदवल्लीविषे। हे सौम्य सोई अक्षरहै कि जिसके जाननेसे मोक्षहोताहै। अरु उसके न जाननेसे संसारहोताहै सोई अक्षरहै

॥ शिष्यउवाच ॥

हे भगवन् जिसअक्षरब्रह्मका ऐसा प्रताप अरु प्रभावहै तिसकों प्रत्यक्ष कैसे जानताहोय सो कहिये॥

॥ गुरुरुवाच ॥

हे सौम्य ऐसा क्यों पूछतेहो यो तो सर्वका अपना आप प्रत्यक् आत्माहै यही सर्वका अनुभवी अक्षरहै यह सर्वको देखताहै इसको चक्षुरादि कोई नही देखते यह सर्वकी सुनताहै इसको कोई नहीं सुनता यह सर्वकोज्ञात करताहै इसको ज्ञात कोई नहीं करता सोई सर्वका ज्ञाता विज्ञानघन चैतन्य अक्षरहै । अर्थात् जिसका कभी क्षय न होय सो कहिये अक्षर सो हे सौम्य तेरा क्षय कदापि नही तुही सर्वका ज्ञाताहै तेरा ज्ञाता कोई नहीं तुही चक्षु आदि सर्वका द्रष्टाहै तेरा द्रष्टा कोई नहीं तुही श्रोत्रादिकों का श्रोताहै तेरा श्रोता कोई नहीं तुही सर्वका मननकर्ता है तेरा मननकर्ता कोई नहीं । ताते तुही अक्षरहै तूं अपने आपको अनुभवकर ॥

हे सौम्य यह जो वेदशास्त्रोंद्वारा निर्णयकरके निर्विशेष आत्मा कहाहै सोई ओंकार अक्षरका लक्ष्यरूप अमात्रिक निर्गुण ब्रह्म परम अक्षर सर्वका अपना आपहै इसहीके जानने से मोक्ष होतीहै ताते इस ओंकारके लक्ष्य आत्माके जानने के अर्थ ओंकारके वाच्य सगुण अक्षरकी भावना अरु जप विचार करतेहैं सो मुमुक्षु सर्व विघ्नोंसे रहित निर्विघ्न अपने आप अक्षर आत्माको साक्षात् सम्यक् जानके मोक्ष होतेहैं ॥ हे लक्ष्मणजी, हे प्रिये, हे सौम्य, हे मुमुक्षु यह जो तुमको मैंने ओंकारका स्वरूप विचार उपासना कहाहै सो सर्व वेद शास्त्र स्मृति

॥ एवं सदा ज्ञातपरात्मभावनः स्वानन्दतुष्टःपरि॥
॥ विस्मृताखिलः । आत्मा तु नित्यात्मसुखप्रका॥
॥ शितः साक्षाद्विमुक्तोऽचलवारिसिन्धुवत् ॥ ५२ ॥

॥ एवं सदा ज्ञातपरात्मभावनः स्वानन्दतुष्टः परिवि-
स्मृताखिलः आत्मा तु नित्यात्मसुखप्रकाशितः सा-
क्षात् विमुक्तः अचल-सिन्धुवारिवत् ॥ ५२ ॥

॥ कहेप्रकार निरंतर जानीहै परात्मभावना जिसने
[सो] आत्मानन्दकरके संतुष्ट [अरु] सर्वओरसे वि-
स्मरणकियाहै अखिलनामरूपदेहादि जिसने और अ-
विनाशी जो आत्मसुख तिसकेप्रकाशितहुआहै जिसकरके १
[तथा] समुद्रकेजलवत् अचल [इसप्रकारका] २
आत्मा साक्षात् विमुक्तहोताहै ॥ ५२ ॥

पुराण इतिहास सिद्धान्तादिकोंका सार संक्षेपमात्रक-
हाहै तिसको विचारपूर्वक अंतःकरणविषे धारण
करो जो सर्व बंधनोंसे मुक्तहोय परमपदको प्राप्तहो २
आगेजो तुम्हारी इच्छा ॥ ५२ ॥ ओम् तत्सत् ॥

॥ भावार्थश्लोक ५२ मेका ॥

हे लक्ष्मणजी इस चारश्लोककरके ओंकारकी उ-
पासना कहेप्रकार १ व्यवधानसे रहित निरंतर २
जानीहै परमात्मभावना आत्मत्वकरके जिसने ३ —

अर्थात् श्रुतियोंके तत्त्वमस्यादिमहावाक्योंका गुरु द्वारा विचार मननकरके अनुभवकियाहै अपनेआप आत्माकों जिसने । सो ज्ञानवान् आत्मा जो अपनाआप परमानंदस्वरूपहै तिसके आनंदकरके तुष्ट४। अरु सर्वओरसे अर्थात् बुद्धिइंद्रियांदिकोंकी वृत्तिकरके विस्मरणकियाहै अधिष्ठानआत्माविषे अध्यस्त देहादि नामरूप सर्व जिसने ५। औऱ ६। निरंतर निर्विशेषआत्मानंद प्रकाशित अर्थात् अनुभव भयाहै जिस विचारमननकरके ७। तिसके ही अभ्याससे, समुद्रकेजलवत् ८। अचल ९॥ अर्थात् आत्मअभ्यासी पुरुषकीवृत्ति बहिर्मुख प्रवाहसे रहित स्वरूपाकार अचल होतीहै । जैसे समुद्र बहिरमुखप्रवाहसे रहित अपनेआपविषे अचलहोताहै तैसे । हे सौम्य इसप्रकार आत्मा१० अर्थात् मुमुक्षु आचार्यसे ओंकारके लक्ष्य परमात्माकोंश्रवणकर तिसके मननअभ्यासद्वारा साक्षात् अपनेआपकों परमात्मा सच्चिदानंद "अहंब्रह्मास्मि" निश्चयकरके ११। सर्व बन्धनोंसे रहित विमुक्तहोताहै १२ ॥—॥ ५२ ॥

॥ भावार्थश्लोक ५३मेका॥

हे लक्ष्मणजी इसप्रकार १॥ अर्थात् पूर्व ५२मे श्लोककरके कहेप्रकार प्रथम वाच्यार्थविचाररूपी सविकल्पसमाधिकरके पुनः ॥ निरन्तर २ ॥ अर्थात्

॥ एवं सदाभ्यस्तसमाधियोगिनो निवृत्तसर्वेन्द्रिय॥
॥ यगोचरस्य हि । विनिर्जिताशेषरिपो रहं सदा॥
॥ दृश्यो भवेयं जितषड्गुणात्मनः ॥ ५३ ॥

॥ एवं सदा अभ्यस्तसमाधियोगिनः हि निवृत्तसर्वे-
न्द्रियगोचरस्य विनिर्जिताशेषरिपोः जितषड्गुणा-
त्मनः अहं सदा दृश्यो भवेयम् ॥ ५३ ॥

॥ इसप्रकार निरंतर अभ्यासकियाहै समाधियोग जि-
सने [अरु] निवृत्तकरे हैं सर्वइंद्रियगो-
चरविषय जिसके [अरु] विशेषकरके जीते हैं संपूर्ण वै-
री जिसने [अरु] जीते हैं षट्ऊर्मी ऐसा है अंतःकरण
जिसका तिसकों मैं सर्वकाल अपरोक्ष होताहूं ॥५३

देशकालके व्यवधानसे रहित । अभ्यासकियाहै स्व-
स्वरूप निर्विकल्पसमाधि राजयोग जिसने १। अरु
श्रुति युक्ति अनुभव निश्चयकरके ४। निवृत्त भये हैं
सर्वइन्द्रियगोचर शब्दादिविषय जिसके ५। अर्थात्
अभाव भई है शब्दादि विषयवासना जिसकी । अरु
विशेषकरके जीते हैं काम क्रोधादि आसुरी संपदारू-
प वैरी जिसने ६। अरु जीती हैं षट् ऊर्मी ऐसा है अं-
तःकरण जिसका तिसको ७। अर्थात् जन्म मरण
देहकी ऊर्मी २, शोक मोह मनकी ऊर्मी २, क्षुधा पिपा-

॥ध्यात्वैवमात्मानमहर्निशं मुनिःतिष्ठेत्सदा॥
॥मुक्तसमस्तबंधनः। प्रारब्धमश्नन्नभिमान॥
॥वर्जितः मय्येव साक्षात् प्रविलीयते ततः॥ ५९॥

॥एवं आत्मानं अहर्निशं ध्यात्वा मुनिः सदा मुक्तसमस्तबंधनः तिष्ठेत् अभिमानवर्जितः प्रारब्धं अश्नन् ततः साक्षात् मयि एव प्रविलीयते ॥ ५९॥

॥इसप्रकार आत्माको निरन्तर अभ्यासध्यानकरके मननशीलमुमुक्षु सर्वबंधनोसेमुक्त सदा स्थितहोरहे और अनात्मअभिमानरहित प्रारब्धको भोगताहुआ परिणामसे साक्षात् मेरेविषे ही लीनहोताहै ॥ ५९॥

सो प्रारब्धी कर्मी, इनसर्वका अभाव निश्चयकियाहै। अपनेआप आत्माविषे जिसने तिसको। मैं परमात्मा ८। सर्वकाल ९। अपनाआपआत्मत्वकरके। अपरोक्ष साक्षात् १०। होताहौं ११॥ अर्थात् कहेप्रकारके साधनसंपन्न मुमुक्षुको मैं जो निर्विशेषपरमात्माहौं सोई सर्वनामरूपात्मकजगत्विषे अपनाआप अनुभवहोताहौं। भूषणमे सुवर्णवत्, घटादिकोंविषे मृत्तिकावत्। तथाच "सर्वंखल्विदंब्रह्म", "सकलमिदमहंचवासुदेवः"॥ ५९॥

॥भावार्थश्लोक५९ मेंका॥

हे लक्ष्मणजी इसकहेप्रकार ५। अपनेआपसाक्षी

आत्माको २। व्यवधानसेरहित ३। अभ्यास ध्यानकरके
४॥ अर्थात् आत्मकामासाधनसम्पन्नमुमुक्षुको औ
कि जिज्ञासापूर्वक आयप्राप्तहोय तो तिसको आत्मत-
त्त्वका उपदेशकरना। अरु जो कोई समानधर्मी विचा
रशील आयप्राप्तहोय तो तिसकेसाथ आत्मतत्त्वका
मनन विचार करना। अरु एकांतविषे प्राण अरु
अन्तःकरणकीवृत्तिको रोकके निर्विकल्पसमाधिविषे
स्थितहोना तिसको आत्मविचार अभ्यास मनन
निदिध्यासन आत्मध्यान कहतेहैं। तिसको करके॥ म-
ननशील मुमुक्षु ५। समस्त क्रियमाण संचितकर्मोंके
बंधनसे मुक्त ६। सदा ७। स्थितहोताहै ८। अरु देह
इंद्रिय बुद्धि प्राणादि स्थूल सूक्ष्म संघातरूप जो अना-
त्मा तिनके कर्तृत्व भोक्तृत्वादि अभिमानसे रहित ९।
प्रारब्धको १०। भोक्ताहुआ ११॥ अर्थात् जो मुमुक्षु कि
जिसको अपनाआप आत्मतत्त्व ज्यों का त्यों निर्विका-
र साक्षात् अनुभवभयाहै सो जानताहै जो मेरी सत्ता
के आश्रय देहेंद्रियादिकोंने कर्मकियेहैं सोई कर्म-
का फलभोक्तेहैं मैं न कर्ताहौं न भोक्ताहौं। तथाच "
गुणा गुणेषु वर्त्तंत इति मत्वा न सज्जते"। गी० अ० ३-
के २८ श्लोकमें। तथा "नकर्तासि न भोक्तासि मुक्त-
एवासि सर्वदा"। अष्टावक्रके १ प्रकरणके ५ श्लोकमें
इत्यादि प्रमाणसे कर्तृत्व भोक्तृत्वादि अभिमानसे रहित
देहेंद्रियादिकोंको प्रारब्धभोगवतेसंते आप प्रारब्ध

कापुगादि तृणपर्यन्त जोकुछ नामरूपात्मक जगत्है सो सर्व अपनिउत्पत्तिसे पूर्व असत्यहैं अरु अभावभये पीछे भी असत्यहैं ताते जो वस्तु आदि अंतमें असत्य है सो वस्तु अपने वर्तमान मध्यकालमें भी असत्यहै। तथाच "आदावंतेचयन्नास्ति वर्तमानेपितत्तथा"। तथा "अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानिभारत अव्यक्तनिधनान्येव"। इत्यादि गी० अ० २ के २८ श्लोकमें। तिस विषे जो सत्यप्रतीति सोई भय अरु शोकका कारणहै तहां ब्रह्मलोकसे शेषलोकपर्यंत मृत्युका भय अरु तैसेही इष्टवियोगजन्य शोक प्रतितहै। तिसको शास्त्र अनुभवद्वारा विचारके ॥ वेदके विधिवाक्यकथित-१२। समस्त १३। कामुकयज्ञादिकर्म कि जिनका फल परिणाममें संसारही है तिनको। त्यागके १४। तिसके अनन्तर १५। अन्नमय प्राणमय मनोमय विज्ञानमय, आनंदमय, इन सर्व आत्माओंका आत्मा जो १६। अपना आपचैतन्यपरमात्माहै १७। तिसका १८। विचार अभ्यासद्वारा भजनकरे १९॥ ५५॥

॥ भावार्थश्लोक ५६ मेंका ॥

हे लक्ष्मणजी हे सौम्य अब विवेकी विचारवान पुरुष जैसे आत्मपदविषे स्थितहोतेहैं सो श्रवण करो। प्रथम संपूर्ण इसनामरूपात्मक जगत्को १। अपनेआत्माविषे २। अभेदज्ञानतेकरके ३। विचारवान् ४। होताहै॥ अर्थात् ऐसे जाने जो यह सम्पूर्ण

॥आत्मन्यभेदेन विभावयन्निदं जानात्यभे-॥
॥देन मयाऽऽत्मना तदा। यथा जलं वारिनिधौ॥
॥यथा पयः क्षीरे वियद्व्योम्न्यनिले यथाऽनिलं ।५६

॥इदं आत्मनि अभेदेन विभावयन् [भवति] तदा आत्मना मया अभेदेन जानाति यथा वारिनिधौ जलं यथा क्षीरे पयः [यथा] व्योम्नि वियद् यथा अनिले अनिलं [अभेदेनजानाति] ॥ ५६ ॥

॥इसजगत्को अपनेआपमें अभेदकरके विचार-वान् [होताहै] तब अपनेआत्माकरके मेरेसाथ अभेदसे जानताहै जैसे समुद्रमें जल जैसे दूधमें दूध [जैसे] आकाशमें आकाश जैसे वायुमे वायु [अभेदहोताहै तद्वत् अभेदहोताहै] ॥ ५६ ॥

जगत् मेरेविषे स्थित अरु मेराही स्वरूपहै। जैसे स्वप्नजगत् स्वप्नशरीरसमेत सर्व अनुभवरूपहै इतरनहीं तैसेही जाग्रत जगतभी अनुभवसे इतरनहीं अरु अनुभव आत्मासेइतरनहीं आत्मा अनुभवरूपहीहै॥

॥शिष्यउवाच॥

।हे भगवन् प्रथमकहा कि आदि अन्त मध्यमें जगत्को भय शोकका कारण जानके मुमुक्षु त्यागकरे। अरु अब आप आज्ञाकरतेहौ कि जगत्को अपने

आपविषे अभेदजाने सो इनवाक्योंमें पूर्वापर विरोध दीखताहै ताते इस विरोधको कृपाकर निवारण करिये

॥ गुरुरुवाच ॥

हे सौम्य यह जीव अज्ञानसे इस जगत्को आत्मासे इतरकरके सत्य जानताहै ताते भय शोकको प्राप्तहोताहै । वास्तवमें यह जगत् आत्मसत्तासे इतर नहीं । जैसे मृत्तिका, सुवर्ण, लोह, इनसे घट भूषण खड्ग आदिकोंकी पृथक् सत्ता नहीं । घटादि सर्व वाचारंभण मात्र असत्यही हैं । तथाच "एकेन मृत्पिंडेन सर्वं मृण्मयं विज्ञातं स्याद्वाचारंभणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम्" । छां० उ० के ६ छठें प्रपाठककी ४ श्रुतिमें । १ ताते सर्वजगत् आत्मसत्ताहीहै इतर नहीं । तथाच "आत्मैवेदं सर्वं" "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" । इत्यादि श्रुतिः । अरु १ पूर्व जो जगत्का त्याग कहाहै सो आत्मसत्तासे इतर जे जगत्की प्रतीति भावना होतीहै सोई भय शोकका कारणहै ताते संसारकी पृथक् भावनाका त्याग कहाहै एतदर्थ आत्मा अरु जगत्के भेदको मिटायके अभेद भावना करनी अरु अभेद भावनाही शोक भयके अभावका कारणहै । तथाच "यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्येवानुपश्यति सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते" "यस्मिन्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः" । ई० उ० के ६ ७ मे मंत्रमें । ताते विवेकी पुरुष सम्पूर्ण जगत्को १

अपनेविषे अभेदजाने ॥ तब ५। अपने आत्मानुभव करके आपको ६। मेरेस्वरूपकेसाथ७। अभेद ८। जानताहै ९। जैसे १०। समुद्रसाथ ११। तरंगादिकोंसहित नदीकाजल १२। अभेदहोताहै। जैसे १३। समष्टिक्षीरविषे १४। व्यष्टिदूध १५। अभेदहोताहै। जैसे आकाशविषे १६। घटमठाकाश १७। अभेद होताहै। जैसे १८। सूत्रात्मावायुविषे १९। प्राणवायु २०। अभेदहोताहै। तैसेही अभेददर्शी मुमुक्षु नामरूपक्रियाकोत्याग के मुजपरमात्मासाथ अभेदहोताहै। तथाच "यथा नद्यः स्यंदमानाः समुद्रेऽस्तंगच्छंति नामरूपे विहाय तथा विद्वान्नामरूपाद्विमुक्तः परात्परं पुरुषमुपैतिदिव्यम्" ॥ स यो ह वै तत्परमं ब्रह्मवेद ब्रह्मैव भवति"। मुं० उ० के तीसरे मुंडकके दूसरे खंडकी ८-९ मी श्रुतिमें ॥ ५६॥

॥ भावार्थ श्लोक ५७ मेका ॥

हे लक्ष्मणजी जो विचारशील बुद्धिमानपुरुषहै सो इस। संसारमें, जो कि अविवेकीकों भय शोक कारणहै, स्थितहोते संते १ भी २। आत्ममननकाकरनेवाला मननशील मुनि ३। श्रुतिके "नेहनानास्ति किंचन" प्रमाण अरु युक्ति अनुमान करके ४। इस संसारकी पृथकसत्ताका। निराकरणहोनेसे ५। सो कैसा है पृथकसत्ताकाभेद। जैसे ६। नेत्रदोषवालेकों एक चंद्रमाविषे दो चंद्रमा अथवा भ्रमणकरतापुरुष को स्थित चंद्रमामें भ्रमणका भेद ७। अरु जैसे ८

॥इत्थं यदीक्षेत हि लोकसंस्थितो जगन्मृषैव॥
॥वेति विभावयन्मुनिः। निराकृतत्वाच्छ्रुतियु॥
॥क्तिमानतो यथेंदुभेदो दिशि दिग्भ्रमादयः॥५७॥

॥लोकसंस्थितो हि मुनिः श्रुतियुक्तिमानतः निराकृतत्वात् यथा इन्दुभेदः [यथा] दिशि दिग्भ्रमादयः [तथा] जगत् मृषा एव इति विभावयन् इत्थं यदि ईक्षेत [तदा कृतार्थः स्यात्] ॥ ५७॥

॥संसारमें स्थित भी मुनि श्रुतियुक्तिअनुमानकरके निराकरणहोनेसे जैसे चंद्रमाकाभेद [जैसे] एकदिशामें अन्यदिशाकीभ्रान्ति [तैसे] जगत् मिथ्या ही है ऐसेविचारवान् पूर्वोक्तप्रकारकरके जब देखताहै [तबकृतार्थहोताहै] ॥ ५७॥

एक दिशामें ८। अन्यदिशाकीभ्रान्ति ९॥ अर्थात् पूर्वदिशामें पश्चिमकी अरु पश्चिमदिशामें पूर्वकी भ्रान्तिजन्यभेद सो सर्व अनहोता ही भासेहै। तैसे जगत् १०। एक अद्वैतआत्माविषे असत्य ११। ही १२। है। इसप्रकारका १३। विचारवान् पुरुष १४। पूर्वोक्तप्रकारकरके १५॥ अर्थात् अपनेआपआत्मामें सम्पूर्ण जगत्कों॥ जब १६। देखताहै १७। तब ही सर्व भयशोकादिकोंसे रहित कृतकृत्यपरमशान्तहोताहै॥५७॥

॥यावन्न पश्येदखिलं मदात्मकं तावन्मदारा-॥
॥धनतत्परो भवेत्। श्रद्धालुरत्यूर्जितभक्ति-॥
॥लक्षणो यस्तस्य दृश्योऽहमहर्निशं हृदि॥५८॥

॥श्रद्धालुः अत्यूर्जितभक्तिलक्षणः यः यावत् अखिलं
मदात्मकं न पश्येत् तावत् मदाराधनतत्परो भवेत्
तस्य हृदि अहर्निशं अहं दृश्यः॥ ५८॥

॥श्रद्धावान् [अरु] अत्यन्त है उत्कृष्ट भक्तिलक्षण १
जिसमें ऐसा जो भक्त सो यावत् सम्पूर्णविश्वको मे-
रास्वरूप न देखै तावत् मेरे सगुणआराधनविषे-१
तत्पर–होय तिसके हृदयविषे सदैव मैं प्रत्यक्ष १
[होताहौं यामें संशय नहीं]॥ ५८ ॥

हे लक्ष्मणजी श्रद्धावान् १॥ अर्थात् श्रद्धा है मु-
ख्य जिनमें ऐसे विवेकादि अन्तरंग बहिरंग साधन सं-
पन्न ॥ अरु अत्यन्त उत्कृष्ट शुद्ध प्रेमलक्षण भक्ति २
तिस भक्तिकरके सम्पन्न २। ऐसा जो भक्त सो ३। मे-
रे वास्तविक पदका अधिकारी है तथापि मनन अ-
भ्यासकी न्यूनतासे। यावत्पर्यंत ४। सम्पूर्णनामरूपा-
त्मक जगत्को ५। मेरास्वरूप ६। न ७। देखै ८॥ अ-
र्थात् जिस अधिष्ठानविषे अध्यस्त, कल्पित, वा-
चारंभणमात्र, जैसे मृत्तिकाविषे कुम्भीवावान् घट

तद्वत्, तिस सर्वाधिष्ठान परम चैतन्य मेरे स्वरूपविषे सम्पूर्ण जगत्को केवल वाचारंभणमात्र ही जान, घटमें मृत्तिकावत् साक्षात् मेरा अनुभव न करे। तावत् ९। मेरी सगुणमूर्त्तिके आराधनाविषे तत्पर १०। होय ११। अर्थात् यावत् पर्यंत "सर्वंखल्विदंब्रह्म" सर्व ब्रह्म ही है ऐसी भावना दृढ न होय तावत्पर्यंत। पूर्व कहा जो सप्तसिद्धान्तियोंके सिद्धान्तसे ओंकारका स्वरूप तिसका विचार अभ्यासकरे अथवा। मनोवृत्तिकी स्थिरताके अर्थ मेरे अवतारी शरीरोंमेंसे जिसविषे प्रीतिहोय तिसका यथाविधि ध्यान पाठ सुमिरणकरे और ध्यानमेंआई मूर्त्ति और ध्यानकर्त्ती वृत्ति इन दोनोंका प्रकाशक साक्षी आत्मा तिसको ध्यानाकारवृत्तिसे "घटद्रष्टा घटाद्भिन्नः" इसन्यायप्रमाण पृथक् अनुभवकरे॥ इसप्रकार मेरी उपासनाकरनेवाला जो साधु भक्त। तिसके १२। हृदयविषे १३। आत्मस्वरूपसे। सदैव ही १४। मैं १५। प्रत्यक्षहोताहौं १६। तब तिसके। अभ्यासद्वारा अन्तर्यामी जो मैं तिसके अनुग्रहसे सम्पूर्ण जगत् उसको अपना आप भासताहै तथ भय शोकादिकों से रहित कैवल्य शान्तिको प्राप्तहोताहै॥ तथाच "ज्ञानंलब्ध्वापरांशान्तिमचिरेणाधिगच्छति"। गी० अ० ४ के ३९ श्लोकमें। तथा "ज्ञानादेवतु कैवल्यं"॥ ५८॥ ॐ तत्सत्॥

॥रहस्यमेतच्छ्रुतिसारसंग्रहं मया विनिश्चित्य॥
॥तवोदितं प्रिय। यस्त्वेतदालोचयतीह बुद्धि-॥
॥मान् स मुच्यते पातकराशिभिःक्षणात॥ ५९॥

॥मया प्रियं श्रुतिसारसंग्रहं एतत् रहस्यं विनिश्चित्य तव उदितं यः तु इह बुद्धिमान् एतत् आलोचयति सः पातकराशिभिः क्षणात् मुच्यते ॥ ५९॥

॥मैंने प्रिय श्रुतिसारउपनिषदोंकासंग्रह यह रहस्य निश्चयकरके तुमारेप्रतिकहा जो कोई भी यहां बुद्धिमान् इसको विचारताहै सो पापोंकेसमूहसे क्षणमात्रमें मोक्षहोताहै ॥ ५९ ॥

हे लक्ष्मणजी। मैंने१ अपनेकोंप्रिय २। श्रुतिजो वेदकासार उपनिषद् अध्यात्मविद्या तिन्होंकासिद्धान्तसंग्रह ३। यह४।उक्तरहस्य५। मोक्षकेअर्थ। निश्चयकरके६। तुम्हारेप्रति७। कहाहै८। तिसको जो९। कोई अन्यजिज्ञासूभी१०। यहां११। मोक्षमार्गविषे। सूक्ष्मबुद्धिवाला१२। इसरहस्यको१३। श्रवणमनन अभ्यास विचार करताहै१४। सो१५। पापोंकेसमूहसे १६॥ अर्थात् संचितादि ज्ञात अज्ञात जोकुछ शुभाशुभ कर्मरूपपापहैं तिससे॥ क्षणमात्रमें१७। मोक्षहोताहै१८। तथाच "विद्वान् पुण्यपापेविधूय निरंजन-

॥भ्रातर्यदिदं परिदृश्यते जगन् मायैव सर्वं॥
॥परिहृत्य चेतसा। मद्भावनाभावितशुद्धमा॥
॥नसः सुखीभवानंदमयो निरामयः॥ ६०॥

॥भ्रातः यत् इदं जगत् परिदृश्यते [तत्] सर्वं मा-
या एव [इति] चेतसा परिहृत्य मद्भावनाभावित
शुद्धमानसः निरामयः आनन्दमयः सुखी भव॥

॥हे भ्राता जो यह जगत् दृश्यआवताहै [सो] सर्व
माया हीहै [ऐसाज्ञानके] चित्तसे परित्यागकरके
मेरीभावनाकरशुद्धहैमनजिसका [ऐसा तूं] निर्दोष
आनन्दमय सुखी हो॥ ६०॥ यह उपदेश है॥

साम्यमुपैतिदिव्यम्" "यथा पादोदरस्त्वचाविनिर्मुच्यत
एवं वै स पाप्मनाविनिर्मुक्तः" "अश्वइव रोमाणि विधूय
पापं चंद्रइव राहोर्मुखात् प्रमुच्य धूत्वा शरीरमकृतं कृ-
तात्मा ब्रह्मलोकमभिसंभवामि"। इत्यादि श्रुतिः॥ ५९॥

॥भावार्थश्लोक ६०में का॥

हे लक्ष्मणजी हे भ्राता १। जोकुछ ३। यह २। देखता-
ईं। जगत् ४। दृश्यआवताहै ५॥ अर्थात् जो यह मन
बुद्धि इंद्रियादिकोंकरके देखने सुनने कहनेविषे आ-
वताहै सो। सर्व ६। माया ७। हीहै ८। अर्थात् माया उ-
सकोंकहतेहैं जो वास्तवमें होय नहीं अरु भासेतथा

वत्। जैसे मरुस्थलविषे जल, सीपिविषेरूपा, रज्जुविषेसर्प, आकाशविषे नीलिमा, इत्यादि सर्व मिथ्याहोतसंतेभी सत्यवत् भासतेहैं सो उनकी सत्यता अविचारित सिद्धहै वास्तव विचारकरनेसे इनका सद्भाव रहेतानहीं ताते इनकों माया कहेतेहैं। तैसे ही एक अखंड परिपूर्ण चैतन्यघन परमात्माविषे जोकुछ नामरूपात्मकजगत् भासैहै सो सर्व मायामात्रहीहै। अथवा जिसवस्तुका आदि अन्त मध्यमें अभाव न होय सो कहिये सत्य। अरु जो आदि अन्तमें नहोय मध्यमें भासे सो कहिये असत्य माया। जैसे मृत्तिकामें घट, तंतुमें पट, सुवर्णमें भूषण, इत्यादि सर्व अपनेहोनेसे पूर्व अरु अभावके पश्चात् असत्य अभावरूप है। अरु मध्यमें भासे हैं ऐसो वो भासकालमें भी असत्य हीहै। तथाच "आदावंतेचयन्नास्ति वर्त्तमानेपि तत्तथा"। इस न्यायप्रमाण। ताते जोकुछ नामरूपक्रियात्मक जगत्है सो सर्व देखने सुनने मात्र ही है विचारकरनेसे सर्वाधिष्ठानआत्मासे इतर जगत् सत्ताका अभावहै, मृत्तिकामें घट, आकाशमें नीलिमा, इत्यादिवत्। ताते हे सौम्य जोकुछ जगत्है सो सर्व मायामात्रहीहै वेद शास्त्र आचार्य युक्ति अनुभव द्वारा जानके॥ चित्तसे॰। चित्तसमेत परित्यागकरके॥२०॥ अर्थात् सर्व जगत्को मायामात्र जानके बहिर्मुख प्रसरित जो चित्तवृत्ति अर्थात् अन्तःकरणकी वृत्ति तिसकों चित्तविषे संहारकरी

अर्थात् हिरण्यगर्भसे तृणपर्यंत अरु ब्रह्मलोकसेरौर
वादि नरक पर्यंत कार्य कारण उत्तम अधम जो है
सो सर्व चित्तकी कल्पनाहै ऐसा विचारके अंतःकार-
णको कल्पनासे रहित करो। पुनः उस चित्तनामा-
अंतःकरणकों चैतन्यसर्वाधिष्ठानविषे लीनकरो।
तहां चित्तनामहै अनुसंधानात्मकवृत्तिका। अर्था-
त् जिसवृत्तिकरके, आत्मा सत्य अरु जगत् मिथ्या
यह चिंतवन होय तिस चित्तात्मकवृत्तिकों अधिष्ठा
न आत्माविषे लीनकरो. तहां ऐसाजानो जो सर्वसं-
ख्यातीत सम परिपूर्ण अचेतचिन्मात्रसत्ताके भरपू
र सघन उस अस्तित्वमें जगत् ऐसीकल्पनाकरनेवा-
लेसहित जगत् सत्य किंवा असत्य मूलसे ही नहीं।
अरु आत्माकों जो सच्चिदानन्देत्यादि विशेषणहैं सो
आपेक्षिकहैं। अर्थात् जगत् असत्य तिसकीअपे-
क्षासे आत्मा सत्य। जगत् जड तिसकीअपेक्षासे
आत्मा चैतन्य। जगत् दुःखरूप तिसकीअपेक्षासे
आत्मा आनंदरूप। जगत् नानारूप तिसकीअपेक्षा
आत्मा अद्वैतरूप है। इस प्रकार प्रथम जगत् कों
असत्य जड दुःख द्वैत रूपमानके तब उससे विल
क्षण आत्माकों सत् चित् आनंद अद्वय कहतेहैं।
ताते जगत्रूपविशेष्यताके प्रतियोगित्वसे आत्मामें
सच्चिदानंदत्यादिविशेषणहैं सो असत्य जड दुःख
द्वैतरूप जगत्के निर्मूल अर्थात् अज्ञानसहित अ-

भावहोनेसे आत्माविषे रहेजे सापेक्षक सच्चिदादि वि
शेषण तिनका भी अभावहोताहै तब विशेषविशेष-
णके अभावसे आत्माके विशेष्यत्वका भी अभावहै।
तिसके पश्चात् जो अवाच्य अनुभवमात्र सर्वाधिष्ठा-
न निर्विशेष आत्मसत्ताहै सोई मेरा अरु तेरा सर्वका
अपना आपस्वरूपहै। तिसमेरेसर्वाधिष्ठानस्वरूपको।
घटादिकोंमें मृत्तिका, भूषणोंमें सुवर्ण शस्त्रादिकोंमें।
लोह इत्यादिवत्, सर्वत्र सर्वविषे "सर्वंखल्विदंब्रह्म"
इस श्रुतिप्रमाण अनुभवसे भावनाकर मुक्त शुद्धम-
नहै जिसका ११। ऐसा तू निर्दोष १२। अर्थात् सर्व।
पापादि रहित। परमआनन्दमय १३। सुखी १४। हो-
१५॥ अर्थात् जिसआनन्दघनआत्माका किणका।
परंपराकरके ब्रह्मलोकके आनंदसे चक्रवर्तिके आ
नंदपर्यंत ऊंचाऊंचीभावसे पसररहाहै। अरु जिस
आनंदसे सर्वआनंदसिद्धहोतेहैं सोई परमानंद तेरा।
स्वरूपहै तिसका अनुभवकर आनंदमय सुखी हो।
यही परमपुरुषार्थहै अरु यही संसारसेतरनेका परम
उपायहै "नान्यःपंथाविमुक्तये" अन्य उपाय कोई नहीं
याते हे लक्ष्मणजी हेप्रिये हे सौम्य मेरे कहेप्रमाण
आत्मानुभवकर सम्यक्बोधपाय "अहंब्रह्मास्मि" भा
वसे स्थित हो आगे जो तुम्हारी इच्छा ॥ ६० ॥

॥ भावार्थश्लोक ६१ मेका॥

हे लक्ष्मणजी जो मुमुक्षुपुरुष। गुणोंसे १ परे

॥यः सेवते मामगुणं गुणात्परं हृदा कदा वा॥
॥यदि वा गुणात्मकं। सोऽहं स्वपादांचितरे-॥
॥णुभिःस्पृशन् पुनाति लोकत्रितयं यथा रविः॥

॥६१॥

॥यः गुणात् परं अगुणं माम् कदा वा हृदा सेवते ।
यदि वा गुणात्मकं [सेवते] सः अयं स्वपादांचितरेणु-
भिः स्पृशन् लोकत्रितयं यथा रविः पुनाति [तथा]

॥जो मुमुक्षु गुणोंसे परे निर्गुण मुझको कदापि [अं-
तःकरणकरके] हृदयविषे सेवताहै अथवा सगुण-
रूप [मुझकोसेवताहै] सो यह [पवित्रपुरुष] अपने
चरणरजकरके स्पर्शकरता त्रैलोक्यको जैसे सूर्य
[तैसे] पावनकरताहै ॥ ६१ ॥ श्रीरामायनमः ॥

२॥ अर्थात् माया अरु तिसके सत्वादि गुणसे रहित
निर्गुण ३॥ अर्थात् सर्व विशेष विशेषणादि उपा-
धिसे रहित इंद्रियातीत केवल चिन्मात्र विज्ञानघ-
न श्रुतियोंके प्रमाणसे जानकरके जो मुझको ५॥ क-
दापि ६॥ अंतःकरणकरके। हृदयविषे ७॥ सेवताहै
८॥ अर्थात् धारणा निदिध्यासनकरताहै अथवा
निर्विकल्पसमाधिकरताहै अथवा ब्रह्मविद्याकीरी-
तिसे मुझको सेवताहै सो तत्वतः मेरा ही स्वरूपहै
तथाच "ब्रह्मविद्ब्रह्मैवभवति" "ज्ञानीत्वात्मैवमेमतम्"

अर्थ ९। वा १०। गुणात्मक सगुणरूप ११। मुझको से-
वताहै। अर्थात् "सहस्रशीर्षापुरुषः" इत्यादि वेदप्र-
माण विराट्रूपसे किंवा रामादिक प्राकरूपसे अ-
थवा योगद्वारा हृदयविषे अंगुष्ठमात्र ज्योतिरूपसे।
तथाच "अंगुष्ठमात्रः पुरुषोंतरात्मा सदा जनानांहृ
दि सन्निविष्टः" "अंगुष्ठमात्रःपुरुषो ज्योतिरिवाधूमकः"
अथवा मेरेअवतारीशरीरका ध्यानकर अपनी म-
नोवृत्ति कों तदाकारकरके मेरीउपासनाकरतेहैं अ
रु मेरे परमार्थबोधक चरित्रोंको श्रवणमननकरते
गद्गद गिरा शरीरमें रोमांच नेत्रमें अश्रुजल होते
हैं सो प्रेमल भक्तिमान् सगुणोपासकहैं। सो भी १
अपने ध्यानअभ्यासकी दृढतासे अन्त मेराही स्व-
रूपहोताहै। ताते यथार्थ श्रुतिप्रमाणसे निर्गुणअ
भेद उपासक ज्ञानी अरु सगुण उपासकभक्त यह
दोनों परमपवित्रपुरुषहैं। सो १२। महपवित्रपुरुष
१३। अपने१४। चरणरजकरके १५। स्पर्शकरता १६
त्रैलोक्यको १६। जैसे१७। सूर्य१८। तैसे पावनक
रताहै १९। अर्थात् जैसे सूर्य अपनी किरणकरके
त्रैलोक्यको पवित्रकरताहै अरु सर्व रसजातिका
भोक्ता भी है अरु निर्लेप भी है। तैसेही उक्तप्र-
कारके उभय उपासक भी स्वेच्छासे जहां२ विचरते
हैं तहां२ अपने चरणरजकरके सर्वको पवित्रकरते
हैं अरु सर्वकी कीरी सेवा को भी अंगीकारकरते हैं

।। विज्ञानमेतदखिलं श्रुतिसारमेकं वेदान्तवे-।।
।।द्यचरणेन मयैव गीतं । यः श्रद्धया परिपठेत् ।।
।।गुरुभक्तियुक्तो मद्रूपमेति यदि मद्वचनेषु भक्तिः
।। ६२ ।। इतिश्री अध्यात्मरामायण उत्तरकांड ।।
।।संबंधि रामगीतास्तोत्र सम्पूर्णम् शुभं ।।

।।वेदान्तवेद्यचरणेन मया एव गीतं एकं श्रुतिसारं
अखिलं एतत् विज्ञानं गुरुभक्तियुक्तः यः श्रद्धया
परिपठेत् [तस्य] यदि मद्वचनेषु भक्तिः [तदा] म-
द्रूपम् एति ।। ६२ ।। इति श्री रामगीतास्तोत्रस्य प-
दान्वय क्रमः सम्पूर्णः ।। ॐ तत्सत् ब्रह्म ।।

।।वेदान्तकरकेजाननेयोग्यहैचरणजिसकेऐसे मैंने
ही गाया एक श्रुतिसार [सो] सम्पूर्ण इस विज्ञान
को गुरुभक्तियुक्त जो विश्वासकरके नित्यपाठकर-
ताहै [तिसको] यदि मेरेवचनोंमें भक्तिहै [तो] मे-
रेस्वरूपको प्राप्तहोताहै ।। ६२ ।। इति श्री रामगीता
स्तोत्रका भाषावाणीमें अन्वय अक्षरार्थःसमाप्तः ।।

अरु आप सदा शुद्ध ज्यों के त्यों रहते हैं ।। ६१ ।।

।। भावार्थश्लोक ६२ मेंका ।।

।। हे सौम्यलक्ष्मणजी । वेदान्तब्रह्मविद्याकरके-
जाननेयोग्यहैचरणजिसके ऐसे १। मैंने २। अथवा ६

वेदका चरण कहिये भाग वेदान्त उपनिषद् विद्या जो कि सर्व वेदोंका विचारद्वारा मथनकरके सारभूत । ब्रह्मविद्या मननशील विद्वानोंने प्रकाशितकियाहै सो मैंने । ही ३। गायाश। एकप। श्रुतिसार६। विज्ञान अर्थात् मेरे ईश्वररूपसे प्रकटभया जो वेद तिसका सारभूतविज्ञान सो इस अवतारशरीरधरके मैं परमात्माने ही तेरेप्रतिकहाहै । सो सम्पूर्ण७। इस ८। विज्ञानको ९॥ "श्राद्धौ स्ववर्णाश्रम" से प्रारम्भ "सुखीभवानन्दमयोनिरामयः" पर्यंत कहा जो श्रुतिसार विज्ञान तिसको । गुरुभक्तियुक्त १०॥ अर्थात् १ गुरुविषे दृढविश्वास अरु उनके वाक्योंमें श्रद्धा के होनेसे उनकोकिये उपदेश सुफलहोतेहैं । अरु जिनको गुरुविषे श्रद्धा भक्ति विश्वासनहीं तिनको उनकेवाक्य फलदायक भी नहीं । तथाच "यस्य देवे परा भक्ति यथा देवे तथा गुरौ तस्यै ते कथिताह्यर्थाःप्रकाशन्ते महात्मनः" । श्रवणात् । ताते मेरेकहे विज्ञानको जो११। विश्वासकरके १२। अर्थात् हे सौम्य इन जगत्गुरु रामजीके अथवा स्वगुरुके उपदेशात्मकवाक्यानुसार आचरणसे ही मेरा कल्याणहै अन्यथा नहीं इसप्रकार विश्वासपूर्वक मेरेकहे विज्ञानात्मक इस रामगीतास्तोत्रका नित्यपाठ श्रवण मननकरताहै १३। तिसको यदि १४। मेरेकहे उपदेशात्मवाक्योंमें १५। संशयरहित भक्तिहै १६। तो वो विश्वासवान्मुमुक्षु ।

मेरेहीस्वरूपको १७। निःसंशयप्राप्तहोताहै १८। अर्थात् शुभाशुभसर्वकार्योंविषे सर्वको एक अपना आप शुद्ध विश्वास ही भलीप्रकारसे फलीभूतहै औरनहीं। ताते हेप्रिय हे सौम्य भगवान् श्रीरामजीके वाक्योंविषे, जो कि हमने तुम्हारेप्रति रामगीतास्तोत्रकहाहै, विश्वासकर तिसके सम्यक् अभ्यासकरनेसे सर्वबंधनोंसे रहित अपनेआप परमानंदस्वरूपको प्राप्तहो आगेजो तुम्हारी इच्छा॥ ६२॥

॥ शिष्यउवाच॥

हे गुरो आपने कहा कि श्रीरामजीने वेदकासार वेदान्त तिसकारके प्रतिपाद्य जो विज्ञान सो अपनेप्रिय भ्राता लक्ष्मणजीप्रति उपदेशकिया सो अस्तु परंतु वेदान्तसे इतर जो मीमांसाआदिशास्त्रहैं तिनकाविज्ञान उपदेशक्योंनकिया सो भी आप कृपाकरके कहिये॥

॥ गुरुरुवाच॥

हे सौम्य वेदान्तसे अन्य मीमांसादिशास्त्रहैं सो श्रुतिके किसीवाक्योंको तो अंगीकारकरतेहैं अरु किसी वाक्योंको नहीं अंगीकारकरते एतदर्थ यह सर्ववेदसे बाहर बोलतेहैं अरु परस्परविरुद्ध भी बोलतेहैं ताते यह मोक्षमार्गविषे प्रमाणनहीं। अरु इन सर्वदर्शनकारोंके परस्परविरोधको देख तिसके निर्णय अरु मोक्षमार्ग श्रुत्यनुकूल प्रकटकरनेको सर्व श्रुतिकों यथाधिकार यथाकार्यमें योजनाकर श्रीवेदव्यासभगवान्ने ब्रह्मसूत्र उत्तरमीमांसा वेदान्तशास्त्र प्रकटकिया

है। अरु श्रीरामकृष्णादि अवतारीपुरीरोंकरके भी ईश्वरने मुमुक्षुके मोक्षार्थ वेदान्त ब्रह्मविद्याही प्रतिपादनकियाहै। अरु उपनिषद् विषे वेदकी दो विद्या प्रतिपाद्यहैं तहां अपने अंगोंसहित ऋगादिवेदसंहिता स्वर्गादि लोकसाधक प्रेयमार्ग अपराविद्या। अरु अपने अंग ब्रह्मसूत्रादि वेदान्तशास्त्रसहित उपनिषद् मोक्षसाधक श्रेयमार्ग पराविद्या। तथाच "कस्मिन्नु भगवो विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भवतीति। तस्मै सहोवाच द्वे विद्ये वेदितव्यइति ह स्म यद्ब्रह्मविदोवदन्तीति पराचैवापराच"॥४॥ "तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषमिति"। "अथ परायया तदक्षरमधिगम्यते"॥५॥ यह मुं॰ उ॰ के प्रथम मुंडकके प्रथमखंडकी ४-५ श्रुति॥ ताते श्रुतिप्रमाणसे वो विद्या कि जिसको पराविद्या ब्रह्मविद्या श्रेयविद्या राजविद्या आदिनामोंसे आचार्य ब्रह्मवेत्ता महात्माओंनेकहाहै सो यह सर्ववेदोंकासार उपनिषद् हीहै। अरु इसहीकानाम वेदकासार वेदान्तहै इसविद्याके यथार्थ विज्ञानविना मोक्षनहीं॥ हे सौम्य एकसमय देवऋषि नारदजीके चित्तविषे यहआया कि हमने सर्वकुछ अध्ययनकिया परन्तु शान्ति न भयी अरु शान्ति आत्मविद्याविना होतीनहीं ऐसा ज्येष्ठश्रेष्ठोंद्वारा जाननेमें आयाहै ताते अब उस आत्मविद्याको अवश्य जाननायोग्यहै कि जिससे परा शान्ति प्राप्तिहोय।

ऐसा विचार उपपने ज्येष्ठ भ्राता भगवान् सनत्कुमारके पास जाय यह वचन बोलते भये कि हे भगवन् हमको आत्मविद्या उपदेश करिये। तब योगेश्वर सनत्कुमारने देखा कि इस नारदके हृदयविषे अनेक विद्याके संस्कार दृढ होरहे हैं सो जबतक टूटेंगे नहीं तबतक इसको शान्ति होनी नहीं। अरु यह जिज्ञासापूर्वक सर्वविद्याके अहंकारको त्यागके आत्मज्ञानार्थ मेरे निकट आया है तातें इसको आत्मविद्या भी देनी योग्य है। परंतु प्रथम इसकी सर्वविद्या श्रवण करनी चहिये पश्चात् आत्मोपदेश करेंगे। ऐसा विचारके नारदसे कहा कि हे नारद प्रथम आपने जो कुछ अध्ययन किया है सो सर्व मुझको श्रवण कराओ पश्चात् जो कुछ कहना होगा सो कहेंगे। तब नारदने कहा कि हे भगवन् ऋग यजु साम अथर्वण यह चारवेद अरु "इतिहासपुराणं पंचमं" प्राचीन इतिहास-भारतादि पंचमवेद अरु "वेदानां वेदं" व्याकरण अरु "पित्र्यं" श्राद्धकल्प। "राशिं" गणितशास्त्र। "दैवं" उत्पातज्ञानशास्त्र। "निधिं" निधिशास्त्र। "वाकोवाक्यं" तर्कशास्त्र "एकायनम्" नीतिशास्त्र। "देवविद्यां" निरुक्त। "ब्रह्मविद्यां" शिक्षा कल्प छंद। "भूतविद्यां" तंत्रविद्या "क्षत्रविद्यां" धनुर्विद्या। "नक्षत्रविद्यां" ज्योतिषविद्या। "सर्प देव जनविद्यां" सर्पविद्या गीत वाद्य नृत्य शिल्पादि विद्या "एतद्भगवोध्येमि" इत्यादि सर्व मैं पढा हों। तथापि इन सर्वका शब्दज्ञान ही मुझको है अर्थात् कर्मको ही मैं जानता हो आत्मवेत्ता मैं न-

हूं। अरु मैंने ज्येष्ठश्रेष्ठोंसे श्रवणकियाहै कि आत्मवेत्ता संसारके शोकको तरजाताहै सो विचारके मैं आपकीशरणआयाहौं सो मुझको आत्मविद्याउपदेशकर इस शोकसागरसेपारकरिये। तथाच "अधीहि भगव इति होपससाद सनत्कुमारं नारदस्तꣳ होवाच यद्वेत्थ तेन मोपसीद ततस्त ऊर्ध्वं वक्ष्यामीति ॥१॥ स होवाचर्ग्वेदं भगवोऽध्येमि यजुर्वेदꣳ सामवेदमाथर्वणं चतुर्थमितिहासपुराणं पञ्चमं वेदानां वेदं पित्र्यꣳ राशिं दैवं निधिं वाकोवाक्यमेकायनं देवविद्यां ब्रह्मविद्यां भूतविद्यां क्षत्त्रविद्यां नक्षत्रविद्याꣳ सर्पदेवजनविद्यामेतद्भगवोऽध्येमि ॥२॥ सोऽहं भगवो मन्त्रविदेवास्मि नात्मविच्छ्रुतꣳ ह्येव मे भगवद्दृशेभ्यस्तरति शोकमात्मविदिति सोऽहं भगवः शोचामि तं मा भगवाञ्छोकस्य पारं तारयत्विति"॥ हे सौम्य यह आख्यायिका सामवेदके छांदोग्यउपनिषद् के सप्तमप्रपाठकके आदिमें प्रतिपाद्यहै। ताते अभिप्राय यहहै कि मोक्षार्थी मुमुक्षुकेअर्थ एक वेदान्तशास्त्र-ही निर्माणहोहै सोई श्रीरामजीने सर्व श्रुतियोंकरके प्रतिपाद्य सर्वशिरोमणि आत्मविज्ञान अपने प्रिय भ्राता लक्ष्मणजी अरु सेवक हनुमानजी प्रति उपदेशकियाहै ताते मोक्षार्थी वेदान्तविज्ञानहीहै औरनहीं। तथाच "वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्था" "वेदान्तसारं वदन्ति वचांसि" "वेदान्तवेद्यपरमात्मस्वरूपमेवगीतं"॥ अरु अन्य इतिहासपुराणादिकोंविषे भी कैवल्यमोक्षके अधिकारी मुमुक्षुको १

उपनिषद् ब्रह्मविद्या वेदान्तशास्त्रही मोक्षसाधक है। अरु
जे सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य सायुज्य, आदि मुक्तिहैं सो
अन्य उपासनादिकोंसे भी कहाहै परंतु मुख्य मोक्षार्थ
तो आत्मज्ञान ही है। तथाच "ज्ञानादेवतुकैवल्यं" "ना-
न्यः पंथाविमुक्तये" "ऋतेज्ञानान्नमुक्ति" "ज्ञान प्रसादेन-
विशुद्धसत्व" "ज्ञानंलब्ध्वापरांशान्तिमचिरेणाधिगच्छति"
"ज्ञानंविमोक्षाय नकर्मसाधनम्" "चतुर्विधातुयामुक्ति-
र्मदुपासनयाभवेत्॥ तस्यांतु कैवल्यमुक्तिःस्यात् सैनो-
पायेनसिद्ध्यति॥ मांडूक्यमेकमेवालम्"॥ वेदान्तेषु प्र-
तिष्ठोहं वेदान्तंस मुपाश्रयेत्"॥ तातें मोक्षार्थ वेदान्त-
शास्त्रहीहै अन्यनहीं इतिसिद्धम्॥ हरिः ॐ तत्सत्॥

॥श्रीशुभ संवत् १९३९ मिति आश्विनशुक्ला २॥
॥ भृगुवारकों श्रीगंगातट प्रतिसेरु मुद्रणार्थः॥

※ ॥समाप्तम्॥ ※

॥ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते॥
॥पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥१॥

※ ॥ॐ शांतिः शांतिः शांतिः॥ ※

॥ॐ ब्रह्मानंदं परमसुखदं केवलंज्ञानमूर्तिं॥
॥द्वंद्वातीतं गगनसदृशं तत्वमस्यादिलक्ष्यं॥
॥एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतं॥
॥भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तन्नमामि॥

※ ॥हरिः ॐ तत्सत् ब्रह्मार्पणमस्तु॥ ※

سوچی پتر رام گیتا-۱

॥ सूचीपत्रं ॥

* ॥ इति सूचीपत्रम् ॥ *